CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

14.11.42

५९१२

मृगया मनोरञ्जन

छत्रपाल सिंह

H
87

N. Hs.
CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

V

मृगया मनोरञ्जन

छत्रपाल सिंह
डिप्टी कलेक्टर

प्रथम संस्करण

(सर्वाधिकार स्वरक्षित)

मूल्य २।)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मानवता के विविधि सुख,
देखे बहुत प्रकार।
पै न लहंत सुख जो लहत,
शूटर मिलत शिकार ॥

पुस्तक मिलने का पता:—

कुंवर इकबाल शंकर सिंह

कुसुम्भी, ई० आई० आर०,

जिला उन्नाव "अवध"

599.27742

मुद्रक—

आर० एस० भार्गव

दी फाइन प्रेस, १४ हेवट रोड, लखनऊ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

T. B. W. BISHOP Esqr., I. C. S.

Commissioner Lucknow Division.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

DEDICATION

TO

T. B. W. BISHOP ESQR., I. C. S.,

COMMISSIONER.

Having got permission to dedicate this book-Mrigaya Manoranjan—to T.B.W. Bishop, Esqr., I. C. S., Commissioner, I feel great pleasure from all my heart that I am dedicating it to a great sportsman, who has very often enjoyed the dangerous big game shooting of the most ferocious Bengal tiger. It was the wish of my brother Subadar Mahabir Singh, O. B. E., "Rai Bahadur," that the book should be dedicated to the said sportsman. So I consider it a great privilege to be permitted to dedicate the book to T. B. W. Bishop, Esqr., I. C. S., and I do so with best respects and loyal devotion.

CHHATRA PAL SINGH.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

FOREWORD.

Mr. Chhatra Pal Singh has asked me to contribute a foreword to his work on shooting in Northern India. I am very pleased to have the opportunity of wishing his work the success which the originality of its conception and the thoroughness of its execution deserves. The net proceeds of the sale are to be devoted to War Funds.

(Sd.) A. G. SHIRREFF,
I. C. S.,

23-11-1941.

Hon'ble Board of Revenue,
United Provinces.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रस्तावना (FOREWORD)

प्रस्तुत पुस्तक अपने ढंग की निराली है। यह हिन्दी संसार की वैज्ञानिक पुस्तकों में एक बहुत बड़ी कमी की पूर्ति करती है। पुस्तक को दो भागों में बाँटा जा सकता है—पूर्वार्ध और उत्तरार्ध। पूर्वार्ध में बन्दूक़, उसके पुर्ज़े, कारतूस, बारूद, बन्दूक के सञ्चालन की कला, छर्रे, घातक परिधि इत्यादि कितने ही उपयोगी विषयों पर विश्लेषण पूर्वक पूर्ण प्रकाश डाला गया है। उत्तरार्ध में शिकार सम्बन्धी जल तथा स्थल पक्षियों का बड़ा ही विशद वर्णन है। विशेषतया जल पक्षियों का वर्णन तो इतना मनोहर है कि पढ़ते ही बनता है।

भाषा सरल और हृदय ग्राही है। जहाँ कहीं विदेशी शब्दों का प्रयोग किया गया है कोष्ठ में उसका अर्थ भी दे दिया गया है जिससे भाषा भाषी भली भाँति समझ सकें। पुस्तक बड़े परिश्रम और खोज के साथ लिखी गई है। मृगया सम्बन्धी विषयों पर लेखक का ज्ञान गहरा मालूम पड़ता है। हमारे विचार से प्रत्येक बन्दूक़ धारी, विशेषतया मृगया प्रेमी के लिये "मृगया मनोरञ्जन" बड़े काम की चीज़ होगी। वह कितने ही ऐसे विषयों की जानकारी प्राप्त कर सकेगा, जिसे जान लेना उसके लिये नितान्त आवश्यक है। बन्दूक़ एक भयानक शस्त्र है और उसे रखने के पहले, उसके सम्बन्ध में सब कुछ जान लेना परमावश्यक है। हमें पूर्ण विश्वास है कि प्रस्तुत ग्रन्थ इस आवश्यकता की पूर्ति भली भाँति कर सकेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अन्त में हमें आशा है कि भाषा भाषी संसार, ठाकुर छत्रपालसिंह के इस उपयोगी पुस्तक के लिये सदैव कृतज्ञ रहेगा। जिस प्रकार उन्होंने नागरी की सेवा करने का स्तुत्य प्रयत्न किया है, आशा है वे सदैव भविष्य में भी करते रहेंगे।

श्रीनिवास उपाध्याय,
एम्० ए० एल० एल० बी०

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सूबेदार मेजर कुसहर सिंह "बहादुर"

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दो शब्द

उत्तरी भारतवर्ष में सब प्रकार का शिकार होता है—चटेर, चाहा, और भटतीतर से लेकर भयानक बाघ तक का शिकार यहाँ होता है। यह भूमण्डल का एक प्रथम श्रेणी का मृगया क्षेत्र है। यहाँ पर सब प्रकार के हिन्दुस्तानी शिकारी भी हैं। परन्तु अभी तक भाषा में कोई भी ऐसी पुस्तक नहीं लिखी गई है जो बन्दूक़ की किस्में उनके पुर्ज़े इत्यादि और शिकार करने की कला पर भली भाँति प्रकाश डाल सके। इसका कारण यह है कि इन विषयों पर कुछ लिखने में समय और अनुभव की आवश्यकता रहती है। इसके अतिरिक्त किताब के छपने में ख़र्च तो अधिक है परन्तु उससे अच्छे लाभ की आशा नहीं की जाती।

हाल में ऐसे शिकारियों की संख्या बहुत बढ़ गई है जो केवल भाषा ही जानते हैं अँगरेज़ी नहीं जानते, या बहुत कम जानते हैं। उनके लिये भाषा में एक पुस्तक होना आवश्यक है जिससे वे बन्दूक़ और शिकार के विषयों को पढ़कर भली भाँति जान सकें। इसी लिये यह पुस्तक लिखी गई है। यह बन्दूक़ तथा शिकार के भिन्न विषयों पर पूर्ण प्रकाश डालती है। आशा है कि यह मृगया प्रेमियों के काम की भाषा में पहली पुस्तक होगी। यदि उन्होंने और अन्य हिन्दी प्रेमियों ने इसे अपनाया तो रायफ़ल (Rifle) और उससे शिकार करने के विषय पर भी पुस्तक लिखी जायगी।

यहाँ पर यह लिख देना अनुचित न होगा कि मैं अपने को सभी बातों में दक्ष शिकारी होने का दावा नहीं करता हूँ परन्तु मुझे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छोटेपन, से ही बन्दूक़ तथा शिकार की उत्तम शिक्षा और अनुभव होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। मेरा कुटुम्ब फ़ौजी है। मेरे पूज्य पिता प्रातस्मरणीय स्वर्गीय सूबेदार, मेजर कुसहर सिंह, ओ० बी० आई० "बहादुर", तथा मेरे पूज्य सगे भाई "राय बहादुर" सूबेदार, महावीर सिंह, ओ० बी० ई०, तथा मेरे पूज्य चचेरे भाई स्वर्गीय सूबेदार, मेजर, शिवरतन सिंह, ओ० बी० आई० "बहादुर" सरकारी फ़ौज के कमिशन्ड आफ़िसर थे। ये पटु और शौकीन शिकारी भी थे और इनको सभी प्रकार के शिकार करने का सौभाग्य प्राप्त हुवा है। मुझको घर पर और शिकार में इन्हीं से बन्दूक़ और शिकार की शिक्षा छोटेपन से ही मिली है।

पुस्तक लिखने के लिये मैं अपने पूज्य, भाई "राय बहादुर", सूबेदार, महावीर सिंहजी, ओ० बी० ई० का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। उन्हीं की प्रेरणा से मैंने इस पुस्तक के लिखने का साहस किया है। बिना उनकी सहायता के बन्दूक़ की वैज्ञानिक बातें तथा छर्रे की परिधि के भिन्न भिन्न चक्र इत्यादि लिखना अत्यन्त कठिन था। पुस्तक के लिखने में उनका दीर्घकाल का फ़ौजी और शिकारी अनुभव और उनके शिकारी नोट अत्यन्त सहायक हुये हैं। उन्हीं के नोट के भिन्न चक्र इस पुस्तक में लिखे गये हैं। जैसा ऊपर लिखा गया है वह सरकारी फ़ौज के रिटायर्ड कमिशन्ड अफिसर और एक पटु शिकारी है इसलिये बन्दूक़ की वैज्ञानिक बातों तथा मृगया के विषय में उनका अनुभव अगाध है।

कुसुम्भी, ज़िला उन्नाव,
१२ जून सन् १९४१ } **छत्रपाल सिंह**

सूबेदार मेजर शिवरत्नसिंह (बहादुर)

रायबहादुर सूबेदार महावीर सिंह
ओ० बी० ई०
(सेक्रेटरी डिस्ट्रिक्ट सोलजर्स बोर्ड उन्नाव)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विषय सूची

१ अध्याय

पृष्ठ

विषय प्रवेश—प्राचीन काल की मृगया। बन्दूक और पाश्चात्य आखेट के नियमों का प्रभाव ... १

२ अध्याय

नये शिकारियों को आवश्यक निर्देश—घर पर और शिकार में बन्दूक को कैसे रखना व ले चलना चाहिये। स्थगित और भागते तथा उड़ते निशाने का मारना। रक्षा के नियम ८

३ अध्याय

शिकारी—शिकारियों के भेद। उनके गुण और अवगुण १६

४ अध्याय

बन्दूक—बन्दूक के भेद, उसकी उन्नति और पूर्ति ... २५

५ अध्याय

नली—नली का भेद और बोर। उनकी छर्रा फेकने की शक्ति, घातक परिधि, और छर्रे का फैलाव। बड़े और छोटे बोर तथा सिलेण्डर और चोक बोर का मुकाबला। नली की लम्बाई ३३

६ अध्याय

बन्दूक का उचित उपयोग ४४

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

७ अध्याय

कारतूस—कागज़ और पीतल के कारतूस। उनकी उपयुक्तता और उनके दोष। नीट्रो बारूदें ... ४८

८ अध्याय

छर्रे—मुलायम और चिल्ड (बड़े) छर्रे। भिन्न प्रकार के बोर और कारतूसों के लिये उनकी तौल। टोपी और वाड। शक्तियां जो गोली और छर्रों पर अपना प्रभाव डालती है ५१

९ अध्याय

बन्दूक की सफ़ाई और उनके केस ... ६३

१० अध्याय

शिकार—पृथ्वी पर से और डगमगाती डोंगियों पर से उड़ती चिड़ियों का शिकार। भीलों और जंगलों तथा मैदान में स्टाकिंग करके पक्षियों का शिकार करना ६६

११ अध्याय

विदेशी बतख़—राज हँस और उसके भेद। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और अण्डा देने की प्रकृति। उनके मांस का स्वाद और गुण इत्यादि ७५

१२ अध्याय

सवन—सवनों के भेद। उनके आने का समय और स्थान। उनके भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि ... ७६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१३ अध्याय

विदेशी पंडुव्वे—पंडुव्वों के भेद। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि ... ८६

१४ अध्याय

दूसरी विदेशी मुर्गावियाँ। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि ... ९४

१५ अध्याय

देशी बतख़—स्थान जहाँ वे मिलते हैं। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि ... १०६

१६ अध्याय

चाहा और हिमतीतर। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि १११

१७ अध्याय

टिकुई, परैली, घोघ इत्यादि। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि ... १२१

१८ अध्याय

भटतीतर—उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि १२७

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

१६ अध्याय

तगदार, तिलूर, चरज, तुनमोर। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि ... १३०

२० अध्याय

कालिज, पोखरा, चीर और मोनाल। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि .. १३४

२१ अध्याय

मोर, बनमुर्गा, छोटी बनमुर्गी। उनके आने का समय और स्थान। उनक भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि ... १३८

२२ अध्याय

चकोर और तीतर। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और उनके अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि ... १४२

२३ अयाय

बटेर और लवा। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि १५१

२४ अध्याय

पेढ़की, हरियल और कबूतर। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि ... १५५

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

२५ अध्याय

चौगड़ा। उनके आने का समय और स्थान। उनका भोजन और अण्डा देने की प्रकृति। मांस का स्वाद और गुण इत्यादि १६६

२६ अध्याय

मृग का शिकार। साभर, बारासिंगा, चीतल, चौसिंगा, हिरण, चिकारा, नीलगाय और काकड़ ... १६६

जोट

मृग और पक्षियों के देशी और अँगरेजी नाम ... १६२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्रीगणपतये नमः ।

मृगया-मनोरञ्जन

पहला अध्याय

विषय प्रवेश

जो मृगया अर्थात शिकार बन्दूक से कियाजाता है, उसे अँगरेज़ी में शूटिङ्ग (Shooting) कहते हैं। अँगरेज़ी भाषा में इस विषय पर अनेक पुस्तकें लिखी जा चुकी है। उनमें से कुछ में, इस विषय का विस्तृत वर्णन है! बन्दूक की किस्में, और पुर्ज़े, उनके रखने तथा दाग़ने की विधि, किस चिड़िया या जानवर का कब और कैसे बन्दूक से शिकार करना चाहिये, इत्यादि विषयों पर पूर्ण प्रकाश डाला गया है। उन पुस्तकों को पढ़कर पाठक उपरोक्त विषयों को भली भांति समझ सकते हैं, और लाभ उठा सकते हैं। इस प्रकार प्रत्येक शिकारी अपनी त्रुटियों को दूर कर सकता है, और बन्दूक से आखेट करने में निपुण हो सकता है।

भाषा में अभी तक एक भी ऐसी पुस्तक नहीं लिखी गई, जिसमें मृगया सम्बन्धी उपरोक्त विषयों का सविस्तार वर्णन हो, और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जिसे पढ़ कर भाषा भाषी, मृगया प्रेमी मृगया कौशल में प्रवीणता प्राप्त करलें, तथा यह भली भांति जानलें कि किस चिड़िया या जानवर का कब और कैसे, आखेट करना चाहिये। यहां पर हमारा अभिप्राय केवल बन्दूक से शिकार करने के विषय का वर्णन मात्र है। रामायण तथा महाभारत आदि प्राचीन पुस्तकों में भी मृगया का वर्णन पाया जाता है। उस समय बन्दूकें नहीं थीं; मृगया धनुष बाण से की जाती थी। उस समय के, और आधुनिक काल के मृगया में बड़ा अन्तर है। अतः प्राचीन पुस्तकों के तत्सम्बन्धी वर्णन, आधुनिक मृगया प्रेमियों के लिये, लाभकारी नहीं हो सकते। प्राचीन मृगया के नियम एक प्रकार से आधुनिक शिकारियों के लिये अनावश्यक हैं।

बन्दूक तथा पाश्चात्य आखेट के नियमों ने मृगया पर बड़ा प्रभाव डाला है। आज, हम लोग, आधुनिक मृगया सम्बन्धी नियमों पर ही चल रहें हैं। जो इन नियमों की जानकारी रखत हैं, एक प्रकार से वे ही उत्तम शिकारी गिने जाते हैं, और उन्हीं की सराहना होती है। इन सब बातों पर विचार करते हुए, हमें यह आवश्यक जान पड़ा, कि भाषा में एक ऐसी पुस्तक लिखी जाय, जिसमें बन्दूक तथा तत्सम्बन्धी मृगया की बातों का सविस्तार वर्णन हो, और जिसे पढ़कर पाठक बन्दूक तथा उसके पुर्जों के बारे में बहुत कुछ जानकारी प्राप्त कर सकें। इसके अतिरिक्त यह भी जान लें कि बन्दूक कैसे रखना और चलाना चाहिये और किस पशु या पक्षी का, कब और कैसे, शिकार करना चाहिये। हम प्रायः देखते हैं कि अनेक जमींदार और रईस शिकार के प्रेमी तो हैं,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर उनकी बन्दूकों से निशाना उनके नौकर लगाते हैं। ऐसे नौकर प्रायः फौजी पेंशन पाने वाले, या नमकटे सिपाही होते हैं जो इसी काम के लिये नौकर रक्खे जाते हैं। इसका कारण यह है कि उनके मालिक भली भांति बन्दूक चलाना नहीं जानते। ऐसे मृगया प्रेमियों के लिये यह पुस्तक अवश्य बड़े मतलब की होगी। इसे पढ़ कर वे मृगया (Shooting) के विषय में बहुत कुछ सीखकर निपुण हो सकते हैं। हमें आशा है कि यह पुस्तक बन्दूक के रखने वाले, तथा शिकारियों के बड़े काम की होगी।

मृगया आदि काल से बराबर होती चली आ रही है। कुछ लोगों का विचार है कि मृगया केवल क्षत्रिय राजा ही करते थे। अन्य यह कहते हैं कि व्याघ्र, सिंह, आदि हिंसक जीवों का बध ही मृगया का मूल लक्ष्य है। परन्तु मेरे विचार से दोनों ही बातें भ्रमात्मक हैं। प्राचीन काल में भी मृगया, मनोरञ्जन का एक विषय था, और अब भी वह इसी उद्देश्य की पूर्ति करता है। शिकार में जिन पशु पक्षियों को प्राचीन काल में मारा जाता था, आज भी उन्हीं का बध होता है। आखेट में महाराज दुष्यन्त मृग का पीछा करते-करते महर्षि कण्व के आश्रम में पहुँचे थे और सुन्दरी शकुन्तला का गांधर्व रीति से परिणय किया था। पाण्डवों के बनवास के समय, जब सिंधुराज जयद्रथ, महारानी द्रौपदी पर मोहित होकर, उन्हें ले भागा था, उस समय पाण्डव मृगया करने बाहर गये थे। महाकवि कालिदास ने अपने विश्वविदित 'अभिज्ञान शाकुंतल' में मृगया का वर्णन इस प्रकार किया है :—

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मेदश्छेद, कृशोदरम्भ् लघुभवत्युत्थान योग्यम वपुः ।
सत्वानामऽपि लद्यते विकृतिमच्चित्तम् भय क्रोधयोः ॥
उत्कर्षः सच धन्विनाम यदिषवः सिध्यन्ति लद्ये चले ।
मिथ्याहिव्यसनम् वदन्ति मृगयाम् ईदृगविनोदःकुतः ॥

[अर्थ—मेद का नाश, उदर की कृशता, शरीर की लघुता, तथा फुर्तीलापन मृगया के विशेष लाभ हैं। शिकार के समय शिकारी पशु के भय, क्रोध जन्य विकारों को भली भाँति अनुभव करता है। यदि कहीं चलते हुए लक्ष्य पर उसका निंशाना ठीक बैठ गया तो उसकी लक्ष्य वेध में निपुणता सिद्ध हुई। व्यर्थ ही लोग मृगया को व्यसन कहते हैं। भला इससे बढ़ कर विनोद कहाँ है]

इन दृष्टांतों से यह प्रत्यक्ष है कि मृगया की प्रथा बड़ी पुरानी है। शिकारी से हमारा मतलब उन बन्दूक के शिकारियों (Sportsmen) से है जो मनोरञ्जन के लिये मृगया करते हैं; उन बधिकों से नहीं है जो पेट पालने के लिये शिकार का व्यवसाय करते हैं।

कितने ही कहते हैं कि बंदूक से पशु, पक्षी, आदि का मारना कुछ कठिन नहीं है। वे यह नहीं जानते कि लक्ष्य बेध भी एक कला है। अपरंच वे इस बात का भी कुछ विचार नहीं करते कि आकाश गामी पक्षी को मार गिराना कुछ सहज काम नहीं है। जङ्गली पशु या पक्षी, जो शिकारी के हाथ में बन्दूक देखते ही सतर्क हो जाते हैं, और उसे समीप नहीं आने देते, उन्हें बन्दूक की मार (Shooting range) के अंदर लाना और मार गिराना कुछ साधारण काम नहीं है। इसमें कला विज्ञान और अनुभव की पूर्ण रूप से आवश्यकता रहती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मृगया की कला में निपुण शिकारियों का कहना है कि पशुओं को हँकवा आदि से भगाकर और पक्षियों को उड़ा कर बन्दूक से मारना, सुन्दर, संतोष प्रद तथा निपुण मृगया (Shooting) है। इस तरह के शिकार में एक तो लक्ष्य को निकल भागने का अवसर मिल जाता है, और दूसरे लक्ष्य बेध में अत्यन्त शीघ्रता, चौकसी, और सावधानी की ज़रूरत पड़ती है। पल भर की देर या असावधानी हुई कि लक्ष्य चूका। शिकार से सशंक,नील नभोमण्डल में उड़ते हुए, चुरवा, बुड़ार, लालसर और कबूतर आदि द्रुतगामी पक्षियों को मार गिराने में पटु शिकारियों को भी बड़ी सावधानी करनी पड़ती है। साधारण शिकारियों का लक्ष्य तो प्रायः खाली ही जाता है। वे यदि २०% प्रति शत "फायरों" में भी सफल हो सके तो उनके लिये यही बड़ी बात हुई। यही दशा चौगड़े (खर्गोश) के शिकार में भी समझना चाहिये। जो उपरोक्त द्रुतगामी पक्षियों का शिकार सरलता से कर लेता है, वही खरगोश के शिकार में भी सफल मनोरथ हो सकता है। यह प्राणी झाड़ने पर झाड़ी या घास की झुरमुटों से तीर की भांति भागता है, और यदि शिकारी पहले ही से सजग नहीं हुआ, तो जब तक बंदूक़ कन्धे पर आती है तब तक वह आँखों से ओझल हो जाता है। शिकारी हाथ मल कर रह जाता है।

यहाँ पर हम थोड़ा हिरन के शिकार के विषय पर लिखेंगे। इस पशु का निशाना (Target) बड़ा होता है। वह अब प्रायः राइफल (लम्बी गोली खाने वाली खारदार बंदूक़) से ही मारा जाता है। इसका शिकार रोचक होता है, पर इसके शिकार में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उतनी सावधानी या कौशल की आवश्यकता नहीं पड़ती जितनी चौगड़ा (खर्गोश) मारने में या उड़ती हुई चिड़िया के बेधने में पड़ती है। इसका शिकार कुछ शिकारी मोटरकार पर ही से बराबर के मैदान में कर लेते हैं। वे हिरन को समतल उसरीली भूमि पर पाकर उसके पीछे मोटर डाल देते हैं, और उसे ८, १० गज की दूरी से मार लेते हैं। कभी कभी एक एक झुण्ड के चार चार छः छः हिरनों को वे थोड़े ही देर में मार डालते हैं। इस प्रकार का शिकार बिलकुल बहेलिया पन का शिकार है। इस में न तो पशु को भाग जाने का अवसर मिलता है और न शिकारी लक्ष्य बेध की कला ही प्रदर्शित कर सकता है। बस मोटर को खूब तेज़ दौड़ाया, और बेचारे पशु को जो मोटर की चाल की बराबरी नहीं कर सकता, निकट पाकर मार लिया। ऐसा देखा गया है कि हिरन, मोटर गामी शिकारियों की इस कुटिल नीति का अनुभव कर प्रायः उन मैदानों को, जहां मोटर सुगमता से दौड़ाई जा सकती है, छोड़ कर दूसरे स्थानों को चले जाते हैं। लेखक के गांव के निकट एक उसरीला मैदान है। उसमें बहुत से हिरन रहा करते थे। जब शिकार होता था तब वे इधर उधर भाग निकलते थे। पर जब से मोटर से शिकार होना प्रारम्भ हुआ तब से अब वहां एक भी हिरन नहीं दिखलाई पड़ता। कई साल हुए उन मैदानों को हिरनों ने बिल्कुल त्याग दिया।

बैठी हुई चिड़िया या पशु को छर्रे से मार लेने में कोई विशेष निपुणता नहीं है। यह तो एक साधारण सी बात है जिसे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सभी शिकारी कर सकते हैं। लक्ष्य बेध का कौशल उड़ते या भागते हुए शिकार को मार गिराने में ही है। जो शिकारी तेज़ी से उड़ते या भागते हुए प्राणी को मार गिराने में निपुण होते हैं। उन्हीं को चतुर शिकारी कहा जा सकता है। जब झील पर जा कर उड़ते हुए लालसर, बुड़ार, सीकपर, पतारी आदि पक्षियों को शिकारी अपना लक्ष्य बना कर फायर करता है तो उसे स्वयं अपने लक्ष्य बेध के निपुणता की परीक्षा मिल जाती है। यदि वह निपुण नहीं हुआ तो उसे हताश होना पड़ता है और वह स्वयं उसी समय अनुभव करता है, कि उसमें कुछ कमी है। कुछ शिकारियों में लक्ष्य वेध की आश्चर्य जनक शक्ति होती है। वे अपने दीर्घ काल के अनुभव से, आकाश में तेज़ उड़ती हुई चिड़ियों को देखते ही, उनकी दूरी तथा चाल का अन्दाज़ा लगा लेते हैं, और उन पर निशाना लगा कर ६०% प्रतिशत लक्ष्य तक बेधते हुए पाये गये हैं। यह एक असाधारण बात है। साधारण शिकारी ऐसा लक्ष्य वेध कदापि नहीं कर सकते। वे प्रायः चूकते हुए पाये गये हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दूसरा अध्याय

नये शिकारियों को आवश्यक निर्देश

यह बात सभी जानते हैं, कि बन्दूक़ एक भयंकर अस्त्र है। साधारण लापरवाही से भी इससे धोका हो जाने का भय रहता है और प्रायः जानें चलीं जाती हैं। अतएव बंदूक़ के रखने, ले चलने और उससे शिकार करने के नियम इसी लक्ष्य पर लक्षित हैं कि उससे व्यर्थ ही कोई जीव न तो मरे ही और न घायल हो।

बंदूक़ को बड़ी ही सावधानी से धरना, उठाना चाहिये। चाहे अपनी हो या किसी दूसरे की, उसे सदा यही समझे रहना चाहिये, कि वह भरी हुई सदैव दगने के लिये तैयार है। इसी मनोयोग के आधार पर उसे शिकार में भी ले चलना चाहिए। जो शिकारी अपनी खाली बंदूक़ को लापरवाही से ले चलता है, वह भरी हुई तथा घोड़ा चढ़ी हुई बंदूक़ को भी लापरवाही से ले चलेगा। भूल से भी बंदूक़ की नली शिकार के अतिरिक्त और किसी की ओर न करना चाहिये। शिकारी का यह परम ध्येय होना चाहिये कि भूल से भी बंदूक़ से कोई ऐसा जीव जो उसके शिकार का लक्ष्य नहीं है न मरे, और न घायल हो। अनुभवी शिकारी यदि किसी युवक शिकारी को किसी दूसरे शिकारी की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और खाली बंदूक को भी करते देख लेते हैं तो बहुत बुरा मानते हैं, वरन् इसे एक बड़ा और अक्षम्य अपराध मानते हैं।

बाहर शिकार में भी बंदूक़ बड़े धैर्य तथा सावधानी से दाग़ना चाहिये। शिकार को देख कर न अधीर ही होना चाहिये और न घबड़ाना ही चाहिये। नये शिकारी को जब शिकार देख पड़ता है तब प्रायः वह घबड़ा उठता है। हड़बड़ी में उसे शिकार और उसे मार गिराने की ही चिन्ता रहती है। ऐसे उतावलेपन के कारण उसे सिवा अपने, अपनी बंदूक़ के और शिकार के जिसे वह मारना चाहता है, और किसी भी दूसरी चीज़ का ध्यान नहीं रह जाता। इतने निपुण तो होते ही नहीं कि बंदूक़ कन्धे पर गई और ठीक से फायर हुई; फलतः वह लबलबी पर अंगुली रखकर घोड़ा चढ़ी हुई बन्दूक़ को पशु या पक्षी (जिस पर वह निशाना लेता है) की चाल पर घुमाता है। ऐसा करने से कभी कभी उसकी बंदूक दूसरे साथियों की सिधान में आ जाता है और उनके जान को खतरे में डाल देती है। ऐसी दशा में खतरा होने की बहुत बड़ी सम्भावना रहती है और बहुधा खतरे हुए भी हैं। प्रत्येक नये शिकारी को ऐसे खतरे की बातों पर सदैव ध्यान रखना चाहिये। शिकार मनोरंजन के लिये किया जाता है, उसमें किसी प्रकार का खतरा नहीं होना चाहिये। अन्यथा उसका आनंद जाता रहता है। बाद को पश्चाताप भी होता है और शिकारी को संकट का सामना करना पड़ता है। नियम पूर्वक धैर्य से शिकार करने वाला उससे सैकड़ों गुना अच्छा गिना जाता है जो अनियमित रूप से तथा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लापरवाही से शिकार करता है। अच्छे शिकारी सदैव उसी की प्रशंसा करते हैं जो सचेत होकर नियम से फायर करता है, चाहे उसे शिकार कम ही क्यों न मिलें। नियमों को पूर्ण रूप से पालन करने वाला शिकारी कभी धोका नहीं उठाता।

जब तक यह पूर्ण रूप से निश्चय न हो जाय कि मनुष्य या कोई अन्य जीव झाड़ी या किसी अन्य वस्तु की ओट में छिपा नहीं है तब तक उस ओर कभी भी फायर न करना चाहिये। जहां कोई दूसरा शिकारी होने पर भी न देख पड़े, वहां बिना भली भांति जान लिये दागने में कभी कभी धोका हो जाता है। आँखों देखी घटना है। लेखक के गांव के समीप के एक जंगल में एक नवयुवक साहब ने, अपने एक साथी के प्राण, इसी प्रकार झाड़ी के सामने हिरन पर बन्दूक चला कर ले लिये। बाद को उसे बड़ा दुख हुआ और जब तक रेल गाड़ी नहीं आई, वह स्टेशन पर बैठा पश्चाताप करता रहा। दोनो साहब फौजी नव-युवक थे और शिकार के नियमों को अवश्य ही कुछ न कुछ जानते रहे होंगे। पर इस प्रकार अपने साथी के प्राण लेकर उसने अपनी मृगया विषयक अनिभिज्ञता भली भांति प्रकट कर दी।

प्रत्येक शिकारी को यह जान लेना चाहिये, कि उसकी बन्दूक कभी भी इस प्रकार न रक्खी जाय कि बिना दागे आप ही आप दग जाय। और यदि सहसा दग भी गई तो उससे किसी की जान न चली जाय। आखेट में फिसल कर गिरने, तथा झाड़ियों में उलझ जाने से बन्दूक का घोड़ा चढ़ कर कभी कभी गिर जाता है और अनायास ही बन्दूक दग जाती है। अतः चिकनी ज़मीन पर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और जंगलों के अन्दर झाड़ियों में जब शिकार करना हो तो बहुत सावधानी से रहना चाहिये ऐसी दशा में यदि बन्दूक खाली रहे तो अति उत्तम है। पर सभी स्थानों और अवसरों पर यह सम्भव नहीं। सघन बनों में तो बन्दूक को सदा ही भरी रखनी पड़ती है। यही दशा चाहों (Snipes) के शिकार में भी है। दोनों नली बराबर भरी रखनी पड़ती है। कभी कभी बन्दूक का घोड़ा चढ़ाने या उतारने में भी घोड़ा गिर जाने पर बन्दूक दग उठती है। अधिकतर ऐड़दार निचले घोड़ों (Low Hammers) में यह घटना हो जाती है। अतएव घोड़ों को सदा अच्छे प्रकार से पकड़कर चढ़ाना उतारना चाहिये। उपरोक्त ऐड़दार घोड़े कभी कभी उतारने से भी रह जाते हैं, क्योंकि वे चढ़ाने पर कुन्दों के ऊपर उठे नहीं रहते बल्कि कुन्दे की लाइन के अन्दर होकर छिप जाते हैं। इन सब आपत्तियों से बचने के लिये यदि घोड़ेदार (Hammer guns) बन्दूकों को त्याग कर बिना घोड़े की बन्दूकों (Hammerless guns) को प्रयोग में लाया जाय तो अति उत्तम हो। उनमें टहनियों में उलझ कर घोड़ों के चढ़ने तथा उतरने का भय नहीं रहता क्योंकि उनके घोड़े भीतर ही रहते हैं और घोड़ों के चढ़ने के साथ ही सेफ्टी कैच (Safety Catch) स्वयं चढ़कर बन्दूक को दगने से सुरक्षित कर देता है। यदि कोई शिकार सहसा दिखाई पड़े तो बन्दूक शिकारी के कन्धे पर आने के साथ ही सेफ्टी कैच तत्काल दाहिने अंगूठे से आगे को हटाकर फ़ायर की जा सकती है। घोड़ेदार बन्दूकों से इस प्रकार और इतने शीघ्र फ़ायर नहीं हो सकते।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मृगया करने वाले कुछ शिकारी, घोड़ेदार बन्दूकों के घोड़े चढ़ाने तथा उतारने में सदैव सतर्क रहते हैं। अन्य शिकार ही के लिये विशेष उत्सुक रहते हैं। वे जब शिकार के निकट से निकलने की आशा करते हैं तब घोड़े को चढ़ाये रखना ही विशेष पसन्द करते हैं। यह बड़ी भयंकर बात है। इस प्रकार घोड़ा चढ़ा (Full cock) रखने में अक्सर देखा गया है कि बन्दूकें दग गई हैं।

शिकार के बहुत से अप्रसिद्ध नियमों को बतलाने और बंदूक दागना सिखलाने के लिये यहां पर कोई संस्था नहीं है जहाँ जाकर नियमों को विधि पूर्वक सीखा जा सके। उन नियमों को जानने के लिये, तथा दागने की क्रिया सीखने के लिये सबसे उत्तम यही है कि किसी अच्छे और अनुभवी शिकारी के साथ शिकार में जाकर ध्यान पूर्वक अनुभव लाभ करे और सीखे। ऐसा करने से शिकार के आरम्भ से अंत तक, अर्थात् जब से शिकारी बंदूक हाथ में लेता है और जब वह रख देता है, तब तक की क्रिया सीखने में आ सकेगी। भागते हुए पशु और उड़ते हुए पक्षी पर किस शीघ्रता से और कितना आगे बढ़कर निशाना लेना चाहिये यह सब वहीं पर देखा और सीखा जा सकता है।

स्थगित लक्ष्य वेध साधारण निशाने बाज़ी है, परन्तु भागते तथा उड़ते हुए शिकार को मारना कठिन काम है। इसमें शिकार के आगे कुछ बढ़कर निशाना लिया जाता है। यह शिकार की चाल पर ही निर्भर है कि उससे कितना आगे बढ़ कर निशाना लिया जाय। इसका नाप या अन्दाज देना अत्यन्त कठिन है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अतः इस सम्बन्ध में कुछ भी कहना उचित नहीं है। शिकारी अपनी बुद्धि और अभ्यास से ही यह निश्चय कर सकता है कि भागते और उड़ते समय अमुक शिकार पर कितना आगे बढ़कर निशाना लेना उचित है। चलते शिकार को मारने के लिये निशाने का लेना और लबलबी (Trigger) का दबाना साथ ही साथ होना चाहिये। तभी लक्ष्य वेध हो सकता है। नये शिकारियों में यह प्रायः देखा गया है, कि वे निशाना तो शिकार के आगे बढ़कर लेते हैं, पर लबलबी तभी दबाते हैं, जब शिकार बन्दूक की सिधान में आ जाता है। परिणाम स्वरूप लक्ष्य ठीक उतना ही पीछे हो जाता है, जितना उसे आगे होना चाहिये था। ऐसी फ़ायर का एक भी छर्रा निशाने पर नहीं लगता। सब छर्रे शिकार के पीछे हो जाते हैं। चलते शिकार में यदि फ़ायर कुछ अधिक आगे हो जाय तो वह उतना बुरा नहीं होता। ऐसी सूरत में सम्भव है कि शिकार के सर या गर्दन में एक दो छर्रे लग जायँ और वह गिर जाय। यदि निशाना थोड़ा भी पिछड़ जाता है तब शिकार गिरना असम्भव हो जाता है। ऐसा हो जाने पर पहले तो शिकार के कोई छर्रा ही नहीं लगता, और यदि संयोग वश लगा भी तो वह शिकार के पिछले भाग में दुम के समीप लगता है। इस चोट से शिकार का गिर जाना ही सम्भव नहीं! इसके अतिरिक्त अधिक आगे बढ़कर निशाना लेने की त्रुटि सरलता से दूर की जा सकती है, किन्तु निशाना पिछड़ने का दोष उतनी ही सरलता से दूर नहीं किया जा सकता।

उस शिकार के अतिरिक्त जो बन्दूक की ओर से सीधा उसी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की सिधान में जा रहा हो, और सब पर कुछ आगे बढ़ कर ही निशाना लेना चाहिये। उड़ते हुए पक्षी पर निशाना लेते समय यह सदा ध्यान में रखना चाहिये कि वह शिकारी के ऊपर समकोण बनाता हुआ निकल रहा है, या इधर, उधर से जा रहा है। शिकारी को यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि शिकार से सशंक पक्षी उड़ने में अधिकतर ऊपर को ही उठता जाता है, और पृथ्वी की आकर्षण शक्ति सदैव छर्रों को पृथ्वी की ओर ही खींचती रहती है। जब शिकारी के कुछ दूर इधर उधर से सशंक पक्षी जा रहे हों तो निशाना उनके आगे और थोड़ा ऊंचे लेना चाहिये। आगे निशाना लेने के बारे में हम लिख चुके हैं कि वह शिकार की गति पर ही अवलम्बित है कि कितना आगे बढ़कर निशाना लिया जाय। शिकार से कुछ ऊपर निशाना लेना शिकार की चाल पर नहीं किन्तु उसके उठाव पर निर्भर है।

शिकार के लक्ष्य को देख कर उसकी दूरी का अन्दाज लगा लेना प्रत्येक शिकारी के लिये परमावश्यक है, एवम् उड़ते हुए पक्षी की दूरी का अन्दाजा लगा लेना भी अनिवार्य है। आकाश में उड़ती हुई चिड़ियाँ यदि दूर हों तो भी निकट ही जान पड़ती हैं। उड़ते में निशाने की दूरी से हमारा मतलब शिकार की दूरी से नहीं है, बल्कि उस स्थान से है, जहां पर पक्षी के आगे निशाना लेते ही लबलबी (Trigger) दबा दी जाती है अर्थात् फायर किया जाता है और पक्षी तथा छर्रा जाकर एक दूसरे से मिल जाते हैं।

दोनों नलियों को फायर करने में जब दूसरी नली दागी जाती है तब पक्षी की दूरी और उड़ाव पर सदा ही ध्यान रखना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चाहिये। दोहरा फायर अच्छा होता है, पर चतुर और अनुभवी निशाने बाज ही पूर्णतया फायर कर सकते हैं। अनाभ्यासी और नये शिकारी उसमें भी असफल रहते हैं। ऐसे अनुभव हीन शिकारी पक्षी को दो ढाई फर्लांग की दूरी पर आते देख कर ही सम्हलते हैं। पक्षी निकट आ जाता है शिकारी उस पर फायर करता है। वार खाली जाता है वह घूम कर दूसरी नहीं दागता है। पर चिड़िया न तो विचलती है, और न इधर उधर को मुड़ती है। वह अपनी चाल पर सीधी ऊपर को उठती हुई चली जाती है और आँखों से ओझल हो जाती है। शिकारी सोचता है, "क्या कारण है कि निशाना नहीं लगा और दोनों फायर खाली गये।" उसके समझ में कोई बात नहीं आती। यथार्थ में भूल यह हुई थी कि उसने दागने में शीघ्रता की। उस थोड़ा और रुक कर दागना चाहिये था। उसने पक्षी को देखा और यह समझ लिया कि निशाना बिल्कुल निकट और वार के अन्दर है, पर वास्तव में यह बात न थी। यदि वह थोड़ा और रुकता और जब तक पक्षी के परों के विचित्र रंग साफ न दिखाई देते तब तक फायर न करता तो उसकी फायर कोई ३० गज की दूरी से हुई होती, और यदि निशाना ठीक रहा हो तो सम्भव था कि शिकार गिर जाता।

सरलता से ठीक और शीघ्र निशाना उसी बन्दूक से सम्भव है जो प्रत्येक शिकारी को पूर्ण रूप से "फिट" हो। नये शिकारी के लिये यह आवश्यक है कि वह उसी बन्दूक का प्रयोग करे जो उसे पूर्णतया फिट हो। आगे के अध्याय में लेखक ने इसका सविस्तार वर्णन किया है कि किस प्रकार के कुन्दे की बन्दूक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

किस मनुष्य को साधारणतया फिट करती है, और यह कैसे जाना जा सकता है कि कौन बन्दूक किसको फिट करेगी। अतः यहाँ पर इसके बारे में कुछ और लिखना असंगत है।

मृगया में दूसरे शिकारी के आगे के अथवा समीप के पशु या पक्षी को मारने का प्रयास कभी भी न करना चाहिये उन पशु या पक्षियों के मारने का अधिकार उसी को है, जिसके सामने या समीप, वे हों या आयें। दूसरे के समीप या सामने के शिकार को मारने का प्रयत्न वही शिकारी करता है, जो दूसरों से ईर्षा रखता हो और यही चाहता है कि जैसे बने उसे अधिक से अधिक शिकार मिले। अधिक शिकार पाना सभी शिकारी चाहते हैं, परन्तु शिकार के नियमों का पालन करना भी परमावश्यक है। शिकार में प्रति-स्पर्धा करना बुरी बात है। इस दोष के दोषी शिकारी के साथ शिकार खेलना, अच्छे शिकारी कभी पसन्द नहीं करते। कारण कि उसके फायर से दुर्घटना होने का भय रहता है।

रक्षा के नियम

(१) जब बन्दूक को ले चलो तो उसकी नली या तो ऊपर को हो या नीचे को।

(२) खाली बन्दूक को भी किसी की ओर करके मत तानों खाली बन्दूक भी भयंकर होती है।

(३) चिकनी फिसलने वाली मिट्टी पर, या किसी अन्य प्रकार के रुकावट के स्थान पर जाते समय, या शिकार को थोड़े ही देर के लिये बन्द होने के उपरान्त, बन्दूक को फौरन खाली कर देना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(४) जब शिकार में दूसरे साथी भी हों, तो शिकारी को अपने समीप के शिकारियों का स्थान अच्छी तरह जान लेना चाहिये। और उसे भी अपना ठीक स्थान अपने साथी को बतला देना चाहिये।

शिकारी को अपने स्थान से कभी भी न हटना चाहिये और अपने साथ के नौकर या कुत्ते को अपने पास ही रखना चाहिये।

(५) यदि फ़ायर करते समय जरा भी किसी शिकारी या किसी दूसरे आदमी के उस ओर होने की आशंका हो तो कभी भी फ़ायर न किया जाय। एक चिड़िया या चौपाया भले ही न मरे, किन्तु किसी पुरुष के प्राण सङ्कट में डालना नितांत्त मूर्खता है।

(६) जब हँकवा करने वाले समीप हों तो चिड़िया या जानवर पर तभी फ़ायर करना चाहिये जब वह हँकवा के लाइन से आगे बढ़ गया हो। यदि दागते समय हँकवा करने वालों की ओर शिकारी की पीठ हो तो अति उत्तम है।

(७) जब तक काफ़ी दूर तक देख न पड़े किसी चिड़िया पर जो ऊँचे न उड़ती हो कभी फ़ायर न किया जाय।

(८) उड़ते में किसी चिड़िया पर फ़ायर करते समय उसकी उड़ान के साथ बन्दूक मत चलाओ। जैसे ही बन्दूक कंधे पर आये, आगे निशाना लेकर फ़ौरन फ़ायर करो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(९) जब तक हँकवा में फ़ायर होना बंद न हो जाय तब तक न तो स्वयं मारे हुये शिकार पर जाओ और न अपने आदमी को शिकार लोने जाने दो।

(१०) हँकवा में यह देखना परमोवश्यक है कि बन्दूकें, शिकारी और हँकवा के कुली एक ही लाइन में हैं। कोई आगे पीछे तो नहीं है।

(११) जब कोई चिड़िया गिरे तो उसे उठाने के लिये तब तक आदमी न भेजे जायँ, जब तक उस जगह तक उड़ने वालों को लाइन न पहुँच जाय।

(१२) शिकार के प्रारम्भ में पहले बन्दूक की नलियों को देख लो कि उसमें कोई अन्य वस्तु तो नहीं है। शिकार के समाप्त होते ही पुनः देख लो कि चैम्बर में कोई कार्तूस पड़ा तो नहीं है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तीसरा अध्याय

शिकारी

जो कोई बन्दूक से शिकार करता है, चाहे बहेलिया हो या भद्र पुरुष, शिकारी कहलाता है। यहां हम उन्हीं शिकारियों के विषय में लिखेंगे जो केवल मनोरञ्जन के लिये ही शिकार करते हैं। ऐसे ही मनुष्य वास्तव में शिकारी हैं, क्योंकि वे मनोरञ्जन के लिये शिकार करते हैं, और मृगया के नियमों को पूर्ण रूप से पालन करते हैं। मृगया का व्यवसाय करने वाला कदापि शिकारी (Sports-man) नहीं कहा जा सकता।

आखेट के नियमों को पालन करने, तथा लक्ष्यवेध की निपुणता के विचार से शिकारी तीन कोटि में विभक्त किये जा सकते हैं।

(१) उत्तम श्रेणी का शिकारी मृगया में सदा प्रसन्न चित्त रहता है। कीचड़ से भरी हुई पृथ्वी पर परिश्रम से घूम कर, चार छः चाहें तथा मुर्गावियों को पाकर, झील के किनारे दूसरे शिकार की आशा में घंटों बैठा हुआ, अत्यन्त कटीली झाड़ियों में शिकार की खोज में अनवरत परिश्रम करने वाला वह सदा प्रसन्न ही देख पड़ेगा। सब शिकारी सदा ही अधिक शिकार पाने के लिये उत्कंठित रहते हैं, पर जो उच्च कोटि के

CC-0. Agamnigam Digital Preseyation Foundation, Chandigarh

शिकारी हैं, वे अधिक शिकार का मिलना ही सब कुछ नहीं समझते। सरल फायरों से कई दर्जन शिकार पाने की अपेक्षा वे कठिन निशानों का थोड़ा शिकार पाना अधिक पसन्द करते हैं। उन्हें कठिन लक्ष्य वेध विशेषतया सुखदायक प्रतीत होता है। क्योंकि इस प्रकार उन्हें अपने कौशल का अन्दाज़ा लग जाता है और यह भी पता चल जाता है कि कठिन लक्ष्य वेध में वे कहां तक सिद्ध हस्त हैं। पर इस नियम के कुछ अपवाद भी देखे गये हैं। कुछ उच्च कोटि के शिकारी ऐसे भी होते हैं, जिनका केवल यही ध्येय रहता है, कि चाहे जैसे हो शिकार अधिक मिले और वे इसी विचार से फायर भी करते हैं। पर इनकी संख्या नगण्य है। उच्च कोटि का शिकारी हमेशा, शिकार मारने के समय बन्दूक और बुद्धि को उपयोग में लाकर प्रसन्न होता है। जो शिकारी नहीं हैं वे प्रायः कहते हैं कि शिकार में बुद्धि की क्या ज़रूरत है, केवल बन्दूक चलाने की ही आवश्यकता है। यदि बन्दूक दागना आ गया तो और कुछ सीखना बाकी नहीं रहा। हमारे विचार से ऐसा कहना निरी मूर्खता है। जो शिकारी नहीं हैं वह कदापि नहीं जान सकता, कि आकाश में तेज़ उड़ने वाले पक्षियों पर निशाना लगाने में कहां तक बुद्धि और कौशल की आवश्यकता है। इसे तो वे ही जान सकते हैं, जो शिकार करते हैं।

पटु शिकारी (Sports man) अद्भुत निशानेबाज़ होता है, और ग्रामीण जीवन को बहुत पसन्द करता है। उसमें जंगली पशुओं तथा पक्षियों का स्वभाव समझने की विचित्र क्षमता होती है। वह भागते या उड़ते हुए शिकार की गति की तीव्रता तथा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दूरी का अन्दाज़ा पलक भांजते लगा लेता है। उसके आंख, हाथ और स्नायुओं पर मन का पूर्ण अधिकार रहता है। बन्दूक से लेकर कपड़े आदि उसके सभी सामान विकार रहित रहते हैं। उसके वस्तुवों को देख कर शिकारी जीवन का आभास मिलता है। वह शिकार में सदैव शान्त, प्रसन्न और यथा क्रम काम करता है, और ईर्षा रहित हो कर लक्ष्य वेध करता है। वह न तो सुस्त ही देख पड़ेगा और न उतावलेपन से फायर ही करेगा। आप उसे परेशानी से इधर उधर घूमते हुए नहीं देख पायेंगे। ऐसा शिकारी जरूरत पड़ने पर शीघ्रता भी करता है। वह बन्दूक को ऐसा पकड़े रहता है कि शीघ्र फ़ायर करने में कोई रुकावट न हो। उसकी बन्दूक अनायास ही कन्धे पर जाती है, और ज्योंही बन्दूक कन्धे पर गई कि शिकार धराशायी हुआ।

जब तक कोई विशेष कारण न हो, वह कभी भी अपने निकटवर्ती साथी के समीप के पशु या पक्षी पर फायर करने का प्रयास नहीं करता। तब भी उसके फायर किसी दूसरी शिकारी से कम नहीं होते। इसका केवल यही कारण है कि वह अच्छे प्रकार से जानता है, कि शिकार किस ओर से निकलेगा और उसे किस ओर देखना चाहिये। वह इतना अच्छा लक्ष्य वेध करता है कि शायद ही कभी उसकी फायर असफल होती हो, या शिकार घायल होकर निकल जाता हो। जब तक शिकार छर्रे की मार (Shooting range) के अन्दर नहीं आता वह कभी फायर नहीं करता। मार के अन्दर फायर करने से शिकार के घायल हो कर निकल जाने की बहुत कम सम्भावना रहती है। यही उसकी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सफलता का कारण है। वह इतने निकट से फायर कदापि नहीं करेगा कि शिकार नष्ट हो जाय और खाने योग्य न रहे, और न यही करता है कि शिकार को भाग निकलने का अवसर दे। जब तक उससे कोई न पूछे तब तक वह अपनी लक्ष्यवेध की निपुणता किसी पर प्रगट नहीं करेगा। ऐसा चुप रहेगा कि मानो वह स्वयं नहीं जानता कि कितना निपुण निशानेबाज़ है। यह है चतुर शिकारी की पहचान। हमारे विचार से सभी शिकारियों को ऐसा ही बनने का प्रयत्न करना चाहिये।

(२) मध्यम श्रेणी का शिकारी वह है जो शिकार के सब नियमों को तो पूर्ण रूप से पालन करता है, किन्तु लक्ष्यवेध में निपुण नहीं होता। उसके अधिकांश फायर लक्ष्य भ्रष्ट ही होते हैं। वह अपनी कमज़ोरी को छिपाने का कभी प्रयत्न नहीं करता, वरना स्पष्ट कह देता है कि वह अच्छा निशाने बाज नहीं है। यत्न करने पर भी उसका निशाना अच्छा नहीं हो पाता।

सब शिकारी अच्छे निशाने बाज होना चाहते हैं, और तदर्थ पूर्ण प्रयत्न भी करते हैं, किन्तु उच्च कोटि के शिकारी सौ (१००) में दस पाँच ही हो पाते हैं। इसका कारण यही है, कि सभी शिकारी के हाथ, आँख और मन में वह नैसर्गिक विशेषता नहीं पाई जाती जो उत्तम निशाने बाजी के लिये आवश्यक है। यही कारण है कि पूर्ण प्रयत्न करने पर भी सभी उत्तम श्रेणी के निशाने बाज नहीं हो पाते। लक्ष्यवेध में अनभिज्ञता के अतिरिक्त, मध्यम श्रेणी का शिकारी और सभी बातों में परिपूर्ण होता है, और स्वभाव का वह इतना अच्छा होता है, कि और सभी शिकारी, शिकार में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसका साथ पसन्द करते हैं।

(३) निकृष्ट कोटि का शिकारी वह है, जो शिकार के नियमों को पालन करने का कोई विचार नहीं करता। उसके हृदय में केवल अधिक शिकार के पाने की धुनि सदैव समाई रहती है। वह अच्छा निशानेबाज नहीं होता, पर अपना दोष सदैव छिपाने में यत्नवान रहता है। वह शिकार के उड़ने, भागने, तथा अपनी फायर से कभी भी सन्तुष्ट नहीं रहता। यदि लक्ष्यवेध में असफल हुआ, तो वह कोई न कोई दोष ढूढ़ निकालने का प्रयत्न करेगा, जो इसकी असफलता का कारण कहा जा सके। वह यह मानने के लिये कभी भी तैय्यार नहीं होगा कि उसकी कमज़ोरी के कारण निशाना चूक गया वह ऐसी बातें भी कहता है, जिससे जान पड़े कि किसी विशेष कारण से उस दिन उसके वार खाली जा रहे हैं। कभी कभी तो वह हुची हुई फायर को भी कहता है कि निशाना ठीक लगा है, शिकार आगे जाकर अवश्य गिर जायगा।

उसे शिकार की दूरी का कोई अन्दाजा नहीं होता। शिकार चाहे ८० गज पर हो, या २५ गज पर, वह फौरन फायर करता है। सदैव और सब स्थानों पर फायर कर देना मात्र ही उसका परम पुरुषार्थ है। वह यह नहीं विचार करता कि छर्रा कहां जायगा। अपने निकट के शिकारी के समीप के प्राणी पर भी फायर कर देने में उसे कोई संकोच नहीं। वह भरी बन्दूक लापरवाही से ले चलता है, और दूसरों के बचाव की उसे कोई विशेष चिन्ता नहीं होती। उसमे लबलबी (Trigger) पर अंगुली रखकर बन्दूक को कन्धे पर ले जाने और उतारने का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बड़ा ही भयङ्कर दुर्व्यसन होता है। निशाना व्यर्थ न जाय, इस भय से वह तुरन्त फायर नहीं कर पाता, किन्तु शिकार की चाल पर बन्दूक को घुमाया करता है। यदि चिड़िया बिल्कुल ऊपर न हुई तो कभी-कभी उसके बन्दूक की नली की सिधान में अन्य शिकारी आ जाते हैं जो बड़ी ही भयंकर बात है। ऐसे लापरवाह शिकारी के साथ में शिकार खेलना खतरे से खाली नहीं है। अच्छे शिकारी कभी इनका साथ पसन्द नहीं करते। ऐसे ही शिकारियों से अधिकतर ऐसी दुर्घटनायें घटित हो जाती हैं जो शिकार के आनन्द को स्वाहा कर देती हैं और महान संकट का कारण बनती हैं। यदि ऐसे शिकारी को निकृष्ट शिकारी (unsporting shot) कहा जाय तो अनुचित न होगा।

ऐसा प्रतिस्पर्धा से भरा हुआ शिकारी सर्व्वथा त्याज्य है। कभी कभी वह शक वाली चिड़ियों के बारे में कहता है कि 'मेरी मारी हुई चिड़ियाँ हैं।' जैसा कि ऊपर कह आये हैं, कभी-कभी वह अपने निकट के शिकारी के सामने की चिड़िया पर भी वार कर देता है। उसे समझना चाहिये था कि उसका निकटवर्ती मित्र शिकारी मौका आने पर अवश्य फायर करेगा, और इसी लिये वह अपने स्थान पर डटा हुआ है। कभी-कभी वह अपने निकट के शिकारी के लक्ष्य को मार कर डींग हाकता है। प्रत्येक नये शिकारी को चाहिये कि वह इन दुर्गुणों से दूर रहें।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चौथा अध्याय

बन्दूक़

पहले एक नाली फलीतेदार और तोड़ेदार अर्थात् चकमाक़ बन्दूकें होती थीं। फलीतेदार बन्दूक फलीता से दागी जाती थी। बरगद की बरोह का फलीता उनमें लगाया जाता था। जलता फलीता बारूद पर पहुँचते ही बन्दूक दगती थी। चकमाक़ बन्दूकें चकमक पत्थर से दागी जाती थीं। चकमक पत्थर से बारूद में आग लगा बन्दूक दागी जाती थी। अब भी फलीतेदार बन्दूकें पुराने रईसों और ताल्लुक़दारों के सिपाहियों के यहाँ देखने में आजाती हैं। इन बन्दूकों की बारूद में यदि सर्दी लग जाय, तो फिर दगना प्रायः असम्भव हो जाता है। चकमक पत्थर से दगाने वाली बन्दूक उस समय किसी काम की ही नहीं रहती। इनके बाद फिर टोपीदार बन्दूके आविष्कृत हुईं जो अब भी बराबर काम में लाई जाती हैं। जो क़ीमती कारतूसी बन्दूकें नहीं ख़रीद सकते और न कारतूसों का ख़रचा ही बर्दाश्त कर सकते हैं, वे टोपीदार बन्दूकों से अपना काम चलाते हैं। टोपीदार बन्दूकों के पश्चात्, पीछे से भरी जाने वाली कारतूसी बन्दूकें बनी। इनमें पहले घोड़ेदार कारतूसी बन्दूकें (Breach loading hammer gun) और बाद को बिना घोड़े की कारतूसी बन्दूके (Breach loading

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

hammer less gun) आविष्कृत हुईं। आजकल शिकार में इन्हीं कारतूसी बन्दूकों से काम लिया जाता है। अतः इनके विषय में लिखना अत्यावश्यक है।

कारतूसी बन्दूकों का आविष्कार उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्ध में हुआ था। तब से उनमें बहुत कुछ सुधार हुए हैं। और अब यह इतनी सुन्दर हो गई हैं कि शिकारियों को शीघ्र फायर करने में बड़ी सुविधा रहती है। छोटे तथा बड़े शिकार पर फायर करने के लिये भिन्न-भिन्न प्रकार की बन्दूकें हैं। ये भी साधारण रूप से दो प्रकार की होती हैं। (१) वे बन्दूकें जिनसे गोल गोली या छर्रा दागा जाता है। इन्हें अंगरेजी में गन (gun) कहते हैं। (२) दूसरी वे जिनसे निकल धातु की लम्बी गोली दागी जाती है। इस गोली के भीतर सीसा भरा रहता है। इनसे छर्रा नहीं दागा जाता। इनकी नली के भीतर खार (groves) होते हैं जो गोली को बहुत दूर तक फेंकते हैं। इन्हें अँगरेजी में राइफल कहते हैं। (Rifle) की मार १००० गज़ से भी अधिक दूर तक की होती है। बड़े शिकार अच्छी इक्सप्रेस (Express) और कारडाइट (Cordite) राइफलों से किये जाते हैं। इनकी मार लगभग ३०० गज्ज तक होती है।

कोई भी छर्रे वाली बन्दूक १०० गज़ से ज्यादा दूरी तक लक्ष्यवेध नहीं कर सकती। अतः जब शिकार १०० गज़ से कम दूरी पर रह जाता है तब फायर किया जाता है। एक प्रकार की गन ऐसी भी होती हैं जिनमें सीसे की कुछ लम्बी तथा नुकीली गोलियां दागी जाती हैं। इस बन्दूक की मार ३०० गज़ तक की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होता है। इनमें उपरोक्त लम्बी गोलियां तथा छर्रे दोनों ही दगते हैं। इनकी नली में मुँह के समीप कोई २ इञ्च की लम्बाई तक खार होते हैं, पर वे इस तरह से बने होते हैं कि छर्रे की मार से ख़राब नहीं होते। इन बन्दूकों से शिकारी चाहें तो छर्रे से कबूतर, मुर्ग़ावी आदि चिड़ियों का शिकार करें और चाहें तो जंगली भैंसे तथा शेर आदि भयंकर हिंस्र जीवों का शिकार करें। इन बन्दूकों को पैराडाक्स (Paradox) तथा इक्सप्लोरा (Explora) गन कहते हैं। इन बन्दूकों की मार बड़ी विकराल होती है। इनकी क़ीमत दो, तीन सौ रुपये से भी कहीं अधिक है। साधारण शिकारी इन्हे नहीं ख़रीद सकते।

इस पुस्तक में छर्रा तथा गोल गोली दागने वाली बन्दूकों का ही वर्णन करेगें। क्योंकि इस पुस्तक का ध्येय विशेष कर उस शिकार के वर्णन का है जो छर्रे से ही किया जाता है। राइफल का विषय इस से भिन्न है। उसका सविस्तार वर्णन दूसरी पुस्तक में लिखा जायगा।

पहले पहल जब कार्तूसी बन्दूकें ईजाद हुईं तब उनके खोलने का लीवर (Lever) नीचे की ओर लबलबी के संरक्षक (Trigger Guard) से मिला हुआ होता था। लीवर को दाहनी ओर हटाने से बन्दूक खुलती थी। फिर कार्तूस भरने के बाद, नली को बन्द करने के लिये नली दबाई जाती थी। तब लीवर दबाकर अपने स्थान में नली की सिधान में लाया जाता था। इस क्रिया से नली बन्द होती थी और बन्दूक दागी जा सकती थी। इस प्रकार लीवर को हटाने और पुनः स्थान पर लाने में कुछ विलम्ब हो जाता था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अतः नीचे के लीवर (Lower lever) को हटाकर ऊपर का लीवर (Top lever) निकाला गया। यह लीवर ऊपर घोड़ों के समीप होता है इसी लिये इसे ऊपर का लीवर (Top lever) कहते हैं। इसे दाहने हाथ के अंगूठे से दाहनी ओर दबाते ही बन्दूक खुल जाती है, और ज्यों ही नली पुनः अपने स्थान पर लाई गई कि लीवर स्वयं अपने स्थान पर आकर नली को पकड़ लेता है और बन्दूक बन्द हो जाती है। सब कार्य बड़ी शीघ्रता से सम्पादित हो जाता है। आज कल यही ऊपर का लीवर सभी कार्तूसी बन्दूकों में पाया जाता है। नीचे का लीवर या तो पुरानी बन्दूकों में या किसी वज़नी (Express) राइफल में लगा हुआ पाया जाता है।

कार्तूसी बन्दूक के एक्शन, अर्थात उनके खोलने तथा दागने की विधि तथा पुर्ज़ों में भी बड़ी उन्नति हुई है। अब ऐसी बन्दूकें आविष्कृत हुई हैं जो दगा हुआ कार्तूस स्वयं बाहर फेंक देती हैं। इन बन्दूकों को ज्योंही कार्तूस भरने के लिये पुनः खोलिये कि उनके दगे हुए कार्तूस निकल कर बाहर पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। इन बन्दूकों को (Hammerless Ejector Gun) हैमर लेस इजेक्टर गन कहते हैं। जो पुर्ज़ा दगे हुये कतूस को बाहर फेंक देता है, उसे इजेक्टर (Ejector) कहते हैं। यहाँ पर यह लिख देना आवश्यक जान पड़ता है, कि सभी बन्दूकों में, किसी न किसी प्रकार के घोड़े, कार्तूस की टोपी तोड़ने और फायर करने के लिये बने रहते हैं। जिन बन्दूकों के घोड़े बाहर दिखलाई नहीं देते उन्हें हैमर लेस (Hammerless) गन कहते हैं। इन बन्दूकों के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भीतरी घोड़े बन्दूक खोलते ही स्वयं चढ़ जाते हैं और साथ ही साथ सेफ्टी कैच भी चढ़ जाता है। जब तक सेफ्टी कैच आगे की ओर नहीं दबाया जाता घोड़े कभी नहीं गिरते। और न बन्दूक ही दग सकती है।

चित्र नं० १

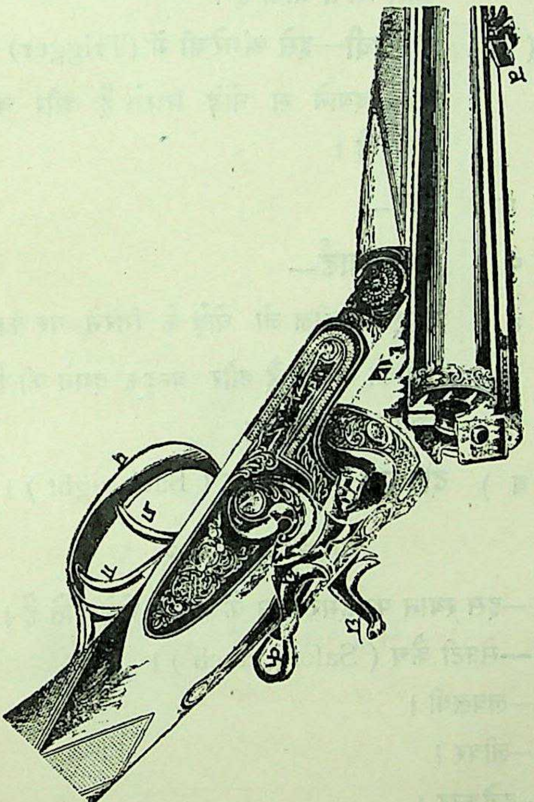

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देखिये चित्र नं० १

(क) **लीवर**—इसको दाहनी ओर दबाने से बन्दूक की नली खुल जाती है।

(ख) **इक्सट्रैक्टर**—नली के खुलते ही यह कातूर्स को बाहर लाता हैं, जो फिर हाथ से पकड़ कर बाहर खींच लिया जाता है।

(ग) **लबलबी**—इसे अंगरेज़ी में (Trigger) कहत हैं। इसके दबाने से घोड़े गिरते हैं और बन्दूक दग जाती है।

(घ) **घोड़े**—

(प) **ट्रिगर गार्ड**—

(त) **पिस्टन**—कील जो घोड़े के गिरने पर कातूर्स की टोपी को तोड़ती है और बन्दूक दगने की क्रिया को सम्पादित करती है।

(व) **दीदवान**—बैक साइट (Back sight)।

देखिये चित्र नं० २

क—इस स्थान पर हैमर लेस के भीतरी घोड़े होते हैं।

ख—सेफ़्टी कैच (Safety catch)।

ग—लबलबी।

घ—लीवर।

प—इजेक्टर।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स—इक्सटेन्डेड रिब (Extended Rib)।

म—क्रास बोल्ट (Cross bolt)।

व—छेद जिसमें क्रास बोल्ट घुस जाता है।

ह—पिस्टल हैन्ड ग्रिप (Pistol hand grip)।

चित्र नं० २

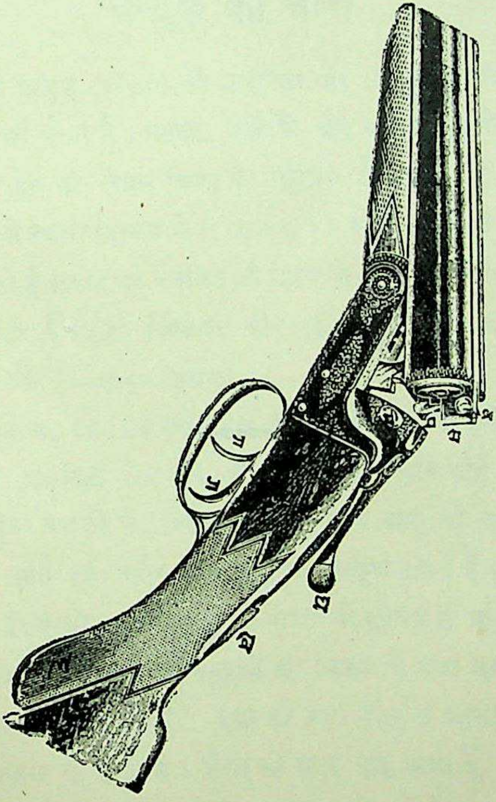

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक प्रकार की ऐसी भी हैमर लेस बन्दूक होती है जिसमें एक ही लबलबी होती है, और उसी को दबाने से दोनों नलियों के भीतरी घोड़े गिरते हैं और बन्दूक दगती है। इसमें ऐसे पुर्ज़े लगे रहते हैं कि चाहे दाहनी नली दागी जाय चाहे बायीं। यदि शिकारी चाहे तो एक ही नली निरन्तर दागा करे। दूसरी न दागे। इन बन्दूकों का मूल्य अधिक होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पांचवाँ अध्याय

बन्दूक़ की नली

प्रत्येक बन्दूक (Gun) की नली का बोर (Bore) अर्थात छेद दो प्रकार का होता है। पहला, नली के छेद की चौड़ाई के हिसाब से, दूसरा छेद की छेदन विधि के हिसाब से। बोर की चौड़ाई, यानी छेद के व्यास हिसाब के से ८, १२, १६,और २० आदि बोर की बन्दूकें होती हैं। बोर की बनावट की विधि के अनुसार दो प्रकार की नलियां होती हैं। (१) सिलेंडर बोर (Cylinder bore) और (२) चोक बोर (Choke bore)।

उपरोक्त ८, १२, १६ और २० आदि बोर की बन्दूकों में सब से अधिक प्रचलित १२ बोर की बन्दूकें हैं। कोई-कोई शिकारी सवनों और बत्तखों के शिकार के लिये ८ बोर की बन्दूक भी रखते हैं। कोई १६ और २० बोर की बन्दूक रखते हैं। ४, २४, २८ और ३०२ बोर की बन्दूकों को भारत में शायद ही कोई रखता हो। लेखक ने इन बोर की बन्दूकों का किसी के पास नहीं देखा।

८ बोर की बन्दूक ३½" इञ्च का बड़ा कार्तूस खाता है। यह अधिक वज़न की होती है। जैसा की उपर कह आये हैं, ये बन्दूकें दूर से झील में सवन, नकटा, आदि मारने के लिये प्रयोग में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाई जाती हैं। इसकी मार बेढ़ब होती है और दगने पर इसका रिकायल (Recoil) (अर्थात पीछे की ओर शिकारी के कन्धे पर बन्दूक का धक्का) भी अधिक होता है। कारण यह है कि इसके कार्तूस में बारूद तथा छर्रे अधिक संख्या में होते हैं। २८ बोर की बन्दूक बहुत हल्की होती है और छोटा कार्तूस खाती हैं। इसका बोर बहुत पतला होता है। इस बन्दूक का चार्ज (Charge) अर्थात कार्तूस में बारूद तथा छर्रे की मिक़दार कम होती है। अतः यह निकट से कबूतर, तथा धंवर आदि छोटी चिड़ियों को दागने में अच्छी कही जा सकती है। जहाँ तक शिकार का सम्बन्ध है, हमारे विचार से २८ बोर की बन्दूक एक बच्चों का खेल मात्र है। २० बोर की बन्दूक भी हल्की होती है पर उसका बोर २८ बोर से बड़ा होता है। अतः उसका कार्तूस भी २८ बोर के कार्तूस से बड़ा होता है। चार्ज (छर्रा बारूद की मिक़दार) भी अधिक होता है। परन्तु २० बोर की बन्दूक मार में १२ बोर की बराबरी कभी भी नहीं कर सकती। उसका कार्तूस १२ बोर की बन्दूक के कार्तूस से छोटा होता है। २० बोर की बन्दूक बुड्ढे और कमज़ोर शिकारियों के लिये अच्छी होती है, क्योंकि वह हल्की होती है। कमजोर शिकारी हल्की बन्दूक से इतना शीघ्र नहीं थकता, जितना वज़नी बन्दूक से थक जाता है। अलावा इसके वह हलकी बन्दूक को शीघ्र कन्धे पर ला सकता है।

कोई-कोई यह भी कहते हैं कि २० बोर की बन्दूक मार में प्रायः उतनी ही अच्छी होती है जितनी कि १६ और १२ बोर की बन्दूकें होती हैं। पर हम इसे नितान्त, भ्रमात्मक समझते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लेखक ने २० बोर की बन्दूक से शिकार किया है। हमारा अनुभव है कि जितनी दूर पर १२ बोर से हम किसी पक्षी को मार गिराते हैं, उतनी ही दूरी पर और उसी नम्बर के कार्तूस से यदि वह २० बोर का हुआ तो फायर करने से वह पक्षी कदापि नहीं गिरेगा। अक्सर घायल होकर निकल भागेगा। १२ बोर से जितना २० बोर छोटा होता है, उतना ही उसका कार्तूस छोटा होता है, और चार्ज (छर्रा बारूद) कम होता है। २० बोर के छर्रे की घातक परिधि (Killing Circle) छोटी होती है। वह मार में १२ बोर की बंदूक की बराबरी नहीं कर सकती। २० बोर के बंदूक की नलियां हल्की होती हैं। अतः फायर होने पर उनका रिकाएल (धक्का) अधिक होता है। बंदूक के धक्के से कभी कभी सिर में दर्द पैदा हो जाता है जिससे शिकार का आनंद भी जाता रहता है। इन सब बातों पर विचार करते हुए हम इसी परिणाम पर पहुँचते हैं कि २० बोर की बंदूक उसी शिकारी को रखना चाहिये जो बूढ़ा कमजोर हो गया हो और जिसे हल्की बंदूक की ज़रूरत हो। स्वस्थ और हृष्ट पुष्ट शिकारी के लिये १२ बोर की बंदूक ही उपयुक्त होगी। उसी से अच्छी निशाने बाज़ी तथा सुन्दर मृगया हो सकती है।

अब हम १६ बोर की बंदूक़ का वर्णन करेंगे। १६ बोर और १२ बोर की नली में और उनके वजन में थोड़ा ही अन्तर है। चन्द १२ बोर की बंदूकें उतनी ही वज़नी होती हैं जितनी १६ बोर की। किन्तु ये हल्के प्रकार की १२ बोर की बंदूकें होती हैं। यदि किसी शिकारी को हल्की बंदूक़ अपेक्षित हो तो उसे हल्की १२

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बोर की बंदूक रखनी चाहिये क्योंकि शिकार में १२ बोर की बंदूक १६ बोर की बंदूक से सदा अच्छी होती है। १२ बोर के छर्रे की घातक परिधि (Killing Circle) १६ बोर से बड़ी होती है।

साधारणतया १२ तथा १६ बोर की बंदूकों के वज़न का अन्तर कोई ¾ या १ पौंड का होता है। केवल १ पौंड (आध सेर) के वज़न से बचने के लिये एक सुन्दर तथा अचूक निशाना मारने वाली बंदूक को त्याग कर मृगया के लिये १६ बोर की बंदूक रखना हमारे विचार से ठीक नहीं है। प्रत्येक शिकारी को इस बात का सदैव ध्यान रहना चाहिये कि हल्की बंदूकों का विस्फोट जन्य धक्का (Recoil) सदैव अधिक होता है यदि उसके कार्तूस में छर्रा और बारूद कम नहीं हुआ अतएव शिकार के लिये १२ बोर की बंदूक ही सर्वथा उपयुक्त होती है।

नली के बोर (Bore) के निर्माण विधि के आधार पर नलियां दो प्रकार की होती हैं—(१) सिलेंडर नली और (२) चोक नली। जो नली चैम्बर (Chamber) अर्थात् कार्तूस भरने के स्थान को छोड़ कर, उसके ऊपर से नली के मोहड़ी तक सीधी होती है, और जिसका व्यास स्थान पर एकसा होता है, उसे सिलेंडर नली कहते हैं। एक प्रकार की सिलेंडर नली ऐसी भी होती है कि ज्यों ज्यों ऊपर को उसका छेद जाता है त्यों त्यों उसका व्यास छोटा होता जाता है। ऐसी नली को इम्प्रूवड सिलेंडर (Improved cylinder) कहते हैं। जिस नली का छेद ऊपर पहुँच कर जब नली का मुँह एक या आध इन्च रह जाता है तब सिकुड़ जाता है (अर्थात् छेद

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का व्यास छोटा हो जाता है) उसको चोक बोर कहते हैं। चोक बोर नली की यह सिकुड़न एक इन्च के ५००० वें भाग से लेकर ४०००० वें भाग तक होती है। जिस नली की उपरोक्त सिकुड़न एक इन्च के ३०००० वें भाग से लेकर ४०००० वें भाग तक होती है उसे पूर्ण चोक (Full choke) कहते हैं। एक इन्च के १२००० से १८००० भाग तक के सिकुड़न को अर्ध चोक (Half choke) कहते हैं। जिस नली के मुँह का सिकोड़ १ इन्च के पांचवें हजार अंश तक का होता है उसे कुछ चोक (Slight choke) बोर कहते हैं। किसी नली को चोक बोर बनाने के लिये नली के व्यास का उपरोक्त संकोच या सिकुड़न, नली के मुँह के निकट में एक इन्च से आधे इन्च तक होना अत्यावश्यक है और तभी बंदूक बतौर चोक गन के अच्छी फायर करेगी।

चोक बोर नली के उपरोक्त संकोच के कारण फायर करने पर जब छर्रे नली के छेद के उस संकोच के स्थान पर पहुँचते हैं तब वे चारों ओर से बीच की ओर दबते हैं और इसी कारण से वे नली के बाहर बिलकुल बंधे हुए निकलते हैं। वे अधिक नहीं फैलते अतएव उनकी परिधि छोटी और घनी होती है। मार में भी इस नली के छर्रे दूर जाते हैं। सिलेंडर नली से न इस प्रकार दब कर छर्रे ही निकलते हैं और न इतने सटे ही रहते हैं। वे नली से निकलते ही अधिक फैलने लगते हैं, अधिक फैलने के कारण उनकी परिधि बड़ी हो जाती है। अतः वह इतनी घनी नहीं होती जितनी चोक बोर की परिधि होती है। यदि एक ही नम्बर के कातूर्स चोक और सिलेंडर नलियों से दागे जायँ तो

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

४० गज पर पहुँच कर चोक नली से दागे हुए छर्रे बँधे और छोटी परिधि में पाये जायँगे। इसके विपरीत सिलेंडर नलियों से दागे हुए छर्रे उतनी ही दूरी पर फैले हुए और बड़ी परिधि में मिलेंगे। उतनी दूरी पर कोई छोटा जीव या पक्षी, सिलेंडर नली से दागे हुए छर्रों की परिधि के बीच में पड़ कर भी बच सकता है। इस नली के छर्रे इतने फैले हुए होते हैं, कि वे उस छोटे जीव के इधर उधर से होकर निकल जा सकते हैं और वह सम्भवतः उनके बीच में रहकर भी बच सकता है। चोक बोर से दागे हुए छर्रों की परिधि के बीच में होकर वह इस प्रकार उतने ही फासले पर नहीं बच सकता। उसके शरीर में छर्रे अवश्य प्रवेश करेंगें क्योंकि वे बंधे हुए छोटे वृत्त में जाते हैं। चोक बोर से दागे हुए छर्रों की जो परिधि तथा फैलाव ३५ गज पर पहुँच कर होता है, सिलेंडर बोर से दागे हुए उन्हीं छर्रों की वही परिधि तथा फैलाव २५ गज पर ही हो जाता है। इस विषय में आगे जो चक्र दिया गया है उसे देखने से भली भाँति विदित हो जायगा कि किस नली के दागे हुए छर्रों का कितनी दूर पर कितनी परिधि तथा फैलाव पाया जायगा।

इससे यह सिद्ध हुआ कि ३० गज के ऊपर जिस दूरी पर चोक बोर नली शिकारी को अवश्य ही मार गिरायेगी, उतनी ही दूर पर सिलेंडर बोर की कामयाबी सन्देह जनक है। इसी प्रकार निकट से जितना अच्छा सिलेंडर नली मारती है, उतना चोक नली नहीं मार सकती। निकट से चोक बोर से फायर करने में साधारण निशाने बाज से निशाना चूकने की सम्भावना रहती है,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

क्योंकि उसके छर्रे बंधे हुए होते हैं और उनकी परिधि छोटी होती है। निकट से चोक नली के छर्रे निशाने पर अधिक संख्या में लगते हैं और शिकार को नष्ट भ्रष्ट कर देते हैं। भागते और उड़ते हुए शिकार को २५, ३० गज की दूरी से मारने के लिये, चोक से सिलेंडर बोर अच्छा होता है; परन्तु ५० या ६० गज की दूरी पर मारने के लिये चोक बोर ही अच्छा होता है। जिसका निशाना अच्छा नहीं होता उसके लिये अच्छी सिलेंडर बोर बंदूक ही अच्छी होती है। अच्छी सिलेन्डर बोर बंदूक मार में भी अच्छी होती है। शिकार में अपने अपने काम के लिये आवश्यकतानुसार दोनों ही अच्छी हैं। अच्छे शिकारी ऐसी बन्दूक रखते हैं जिसकी एक नली सिलेन्डर बोर और दूसरी नली चोक बोर हो। ऐसी दशा में अधिकतर दाहनी नली सिलेन्डर बोर और बाँयी चोक बोर होती है।

दूरी गजों में	छर्रे की परिधि			
	सिलेन्डर नली		चोक नली	
	सिलेन्डरबोर	इम्प्रूवड सिलेन्डरबोर	अर्धचोकबोर	पूर्ण चोक बोर
१० गज पर	१९ इन्च	१५ इन्च	१२ इन्च	६ इन्च
१५ ,, ,,	२६ ,,	२० ,,	१६ ,,	१२ ,,
२० ,, ,,	३२ ,,	२६ ,,	२० ,,	१६ ,,
२५ ,, ,,	३८ ,,	३२ ,,	२६ ,,	२१ ,,
३० ,, ,,	४४ ,,	३८ ,,	३२ ,,	२६ ,,
३५ ,, ,,	५१ ,,	४४ ,,	३८ ,,	३२ ,,
४० ,, ,,	५७ ,,	५१ ,,	४६ ,,	४० ,,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पिछले पृष्ठ के चक्र से पाठक को भली भांति विदित हो गया होगा कि सिलेन्डर, इम्प्रूवड सिलेन्डर, अर्ध चोक और पूर्ण चोक नलियों से १० गज ४० गज की दूरी पर प्रत्येक नली से दागे हुए छर्रोंकी परिधि का कितना बड़ा व्यास होता है अर्थात् छर्रे कितना फैलते हैं ।

दोनों प्रकार की सिलेन्डर नलियों से दागे हुए छर्रों का फैलाव विस्तृत होता है । उनकी परिधि बड़ी होती है अतः सिलेन्डर नली से फायर करने में इतने सच्चे निशाने की आवश्यकता नहीं होती, जितना चोक नली से फायर करने में पड़ती है । जो शिकारी अच्छे निशाने बाज नहीं हैं उनके लिये सिलेन्डर बोर बदूक अच्छी होती है । भागते या उड़ते हुए शिकार को मारने के लिये यही उत्तम है कि शिकारी उन्हें सिलेन्डर बोर बंदूक से ही मारे । १२ बोर की सिलेन्डर बोर बंदूक से यदि ठीक निशाना लिया गया तो वह शिकार को ४० गज की दूरी पर अवश्य मार गिरा-येगी । कहने में तो ४० गज की दूरी कम जान पड़ती है पर वास्तव में यह निकट नहीं होती । इसको बहुत थोड़े ही शिकारी ठीक ठीक जानते हैं कि उनका शिकार लक्ष्य बेध के समय वास्तव में कितने गज की दूरी पर है । उड़ते में जो पक्षी बहुत ऊंचे समझ कर मार गिराया जाता है वह प्रायः ३० गज से अधिक ऊंचे पर नहीं होता । ठीक निशाना लेने पर चोक बोर वाली बंदूक ५० गज पर अवश्य निशाना मार लेती है । यह सदा ही ध्यान रखना चाहिये कि उपरोक्त ४० या ५० गज की दूरी पर सिलेन्डर और चोक बोर की बंदूकें क्रमशः अवश्य ही निशाना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मार गिरायेंगी। कभी कभी ६० और ७० गज पर भी शिकार मार लिया जाता है, पर केवल संयोग वश दूर से दागने में शिकार के घायल होकर निकल भागने की अधिक सम्भावना रहती है। हमारी राय में शिकार को केवल घायल कर देना किसी प्रकार अच्छा नहीं कहा जा सकता।

नली की लम्बाई

बंदूकों की नली प्रायः २६ इन्च से ३६ तक लम्बी होती हैं। छोटी नली से लम्बी नली का छर्रा दूर जाता है। इसीलिये लम्बी नली वाली बंदूक की मार भी अधिक दूर की होती है। जिस बन्दूक की नली ३२ से ३६ इन्च तक लम्बी होती है उसे लांग रेन्ज गन (Long range gun) कहते हैं। लम्बी नली की बंदूक छोटी नली की बंदूक के अपेक्षा अधिक वजनी होती है। कन्धे पर जमाने में लम्बी नली की बन्दूक अधिक हिलती है। अतः ३२ इन्च से लम्बी नली की बन्दूक शिकार में ले जाना किसी प्रकार भी लाभकारी नहीं होता। २६ या २८ इन्च की छोटी नली की बन्दूक की मार कम होती है और यदि वह चोक बोर न हुई तो उसके छर्रे भी थोड़े ही दूर में अधिक फैल जाते हैं। अतएव छोटी नली की बन्दूक उसी शिकारी को रखना चाहिये जिसे शिकार में हल्की बन्दूक रखने की विशेष आवश्यकता हो। साधारणतया १२ बोर की नली ३० इन्च लम्बी होती है। ३० इंच लम्बी नली सबसे उत्तम होती है। वह न तो उतनी अधिक वजन की ही होती है और न लांग रेन्ज गन की भांति कन्धे पर जमाने के समय अपनी गरूआहट के कारण हिलती ही है। ३० इन्च की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नली के छर्रे की मार भी अच्छी होती है। इन्ही कारणों से ३० इंच की नली की बन्दूक विशेष प्रचलित है।

बन्दूक़ की नली दो प्रकार के लोहे की बनती है। एक प्रकार की नली डमस्कस बैरेल (Damascus Barrel) कहलाती है और दूसरी स्टील बैरेल (Steel barrel) कहलाती है। डमस्कस बैरेल जान पड़ती है मानो ऐंठेतार लपेट करवाई गई है। स्टील बैरेल बिल्कुल सपाट और चिकनी देख पड़ती है। कोई भी ऐसी कसौटी नहीं है, जिससे ग्राहक यह पूर्ण रूप से निश्चय कर सके कि कोई नली वास्तव में डमस्कस बैरेल है या स्टील बैरेल। इसके लिये ग्राहक को सदैव बनाने वालों की सच्चाई पर ही निर्भर रहना पड़ेगा। अतः बन्दूक खरीदने के समय ग्राहक को उचित है कि वह बड़ी और प्रसिद्ध दूकानों की बनी बन्दूक खरीदे। अच्छी स्टील बैरेल के बन्दूक की सफ़ाई यदि ठीक तौर से होती रहे तो वह बहुत दिनों तक चलती है। बन्दूकें इंगलैंड की बनी उत्तम होती हैं। इंगलैंड के निम्न लिखित कारखाने प्रसिद्ध हैं। उनमें बनी बन्दूकें सब बातों में अच्छी होती हैं और यदि ठीक तौर से रक्खी गईं तो बहुत दिनों तक चलती हैं।

१. वेस्टली रिचार्डस (Westly Richards)
२. हालेन्ड एन्ड हालैंड (Holland and Holland)
३. जेम्स परेड् एन्ड सन्स (James Purdey and Sons)
४. डब्ल्यू डब्ल्यू ग्रीनर (W. W. Greener)
५. वेब्ली एन्ड स्काट्स (Webly and Scotts)
६. विलियम एन्ड इवान्स (William and Evans)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इन सब कारखानों की बन्दूकें बहुत उत्तम होती हैं। दाम तो अधिक अवश्य देने पड़ते हैं, पर वस्तु मतलब की मिलती है। कम दाम की चीजें कभी उत्तम नहीं होतीं। इन कम्पनियों की एक बन्दूक जिन्दगी भर चलती है । यहां भारतवर्ष में आर० बी० रोड़ा एन्ड कम्पनी बहुत प्रसिद्ध है। इस कम्पनी की बन्दूकें इंगलैंड में बनती हैं। इस कम्पनी में उपरोक्त कारखानों की बन्दूकें भी मिल सकतीं हैं। जो बन्दूक कम दाम की होती है वह शिकार में दो चार हज़ार फ़ायर प्रति वर्ष बर्दाश्त नहीं कर सकती। थोड़े ही दिनों में उसके नली तथा पुर्जे हिलने लगते हैं। कम क़ीमत वाली बन्दूकों के सभी पुर्जे, अधिक मूल्य की बन्दूकों की भांति स्टील के नहीं बनाये जाते। यही कारण है कि थोड़े ही दिनों में उनके पुर्जे तथा नलियां हिलने लगती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छठवाँ अध्याय

बन्दूक़ का उचित उपयोग

प्रत्येक बन्दूक के मालिक और विशेष कर शिकारी के लिये यह अत्यावश्यक है कि उसकी बन्दूक़ उसे पूर्ण रूप से उपयुक्त (Fit) हो। अर्थात् बन्दूक़ की बनावट इस प्रकार की है कि ज्योंही शिकारी उसे पकड़ कर कन्धे पर ले जाता है, और लक्ष्य पर निशाना लगाता है त्योंही उसकी बन्दूक स्वाभाविक रूप से बिना प्रयास ही लक्ष्य पर जम जाती है, और उसका मसा निशाने पर लगा हुआ दिखाई पड़ता है। ऐसा न हो कि शिकारी को बन्दूक की नली को इधर उधर हटा कर निशाने पर ठीक लगाना पड़े या उसे अपनी गर्दन सिकोड़ना या बढ़ाना पड़े और तब मसा लक्ष्य पर ठीक लगा दीख पड़े। जो बन्दूक कन्धे पर जमाते ही साधारण रूप से निशाने पर ठीक नहीं जम जाती, और जिसे कन्धे पर जमाने के बाद इधर उधर हटा कर निशाने पर ठीक लगाना पड़ता, उसके लिये प्रायः यही समझना चाहिये कि वह ठीक प्रकार से उस शिकारी को फ़िट नहीं करती है। ऐसी बन्दूक से शीघ्र फायर करने की आशा करना असम्भव है। बहुत से शिकारियों की बन्दूकें उनको अच्छे प्रकार से फिट नहीं करती, पर वे इस

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दोष को जान नहीं पाते। परिणाम यह होता है कि वे उड़ते या भागते हुए शिकार को मारने में कभी भी पूर्ण रूप से सफल नहीं होते। कन्धे पर बन्दूक लाने के बाद उनको निशाना ठीक करना पड़ता है। इसमें कुछ समय लगता है और इतने ही में शिकार कुछ आगे बढ़ जाता है। वह निशाना ठीक करने तक रुका तो रहेगा नहीं। भारतवर्ष में यह सम्भव नहीं कि शिकारी अपने माप के अनुसार बन्दूक कारीगर से बनवा सके। यहां तो तैय्यार शुदा बन्दूक ही मिल सकती है, और सम्भव है कि वह शिकारी को फिट करे या न करे। जब तक वह शिकार पर फायर करके देख नहीं लेता, तब तक उसे कभी भी पता नहीं चल सकता कि अमुक बन्दूक उसे फिट है या नहीं।

कुछ शिकारी अपनी बन्दूक की मार तथा निशाने से बहुत सन्तुष्ट रहते हैं। वे अपनी बन्दूक की मार, तथा लक्ष्य बेध के निपुणता की विशेष रूप से प्रशंसा करते हैं, और उसका उन्हें गर्व होता है। ऐसे शिकारियों के बन्दूकों के विषय में यह कभी न समझना चाहिये, कि वे उसी प्रकार की अन्य बन्दूकों की अपेक्षा, निशाने या मार में बढ़ कर हैं। उन बन्दूकों में प्रायः यही विशेषता है कि वे अपने मालिक को ऐसा फिट करती हैं कि कन्धे पर जमाते ही निशाने पर बैठ जाती हैं, और निशाना छर्रे की घातक परिधि (Killing circle) के अन्दर ही रहता है।

बन्दूक के फिट होने के लिये यह परमावश्यक है कि उसके कुन्दे की लम्बाई, झुकाव, बनावट, तथा हील प्लेट का झुकाव, बन्दूक के मालिक की गर्दन, हाथों की लम्बाई और छाती की चौड़ाई

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के अनुसार ही हो, और ज्योंही बन्दूक ठीक पकड़ के साथ कन्धे पर लाई जाय, शीघ्र ही निशाने पर साधारण रूप से ठीक जम जाय। न तो नली को इधर उधर हटा कर निशाना ठीक करना पड़े और न उसे अपनी गर्दन को ही बढ़ाना, संकोच करना, और मरोड़ना पड़े। जिसकी गर्दन तथा हाथ लम्बे होते हैं उसे वही बन्दूक फिट करती है जिसका स्टाक (Stock) अर्थात् कुन्दा लम्बा और अधिक झुका हुआ हो। इसके विपरीत जो मनुष्य लम्बाई में ठिगना होता है और जिसकी गर्दन और हाथ छोटे होते हैं, उसको वह बन्दूक फिट करती है जिसका कुन्दा छोटा और कम झुकाव का हो।

इन सब आपत्तियों से बचने के लिये यह उचित है कि शिकारी बन्दूक को, किसी दक्ष बन्दूक के फिट करने वाले से फिट कराकर तब ख़रीदे। ट्राईगन (Trygun) की सहायता से, शिकारी को ऐसी बन्दूक मिल सकती है जो उसे पूर्णतया फिट कर सके। ट्राईगन वह बन्दूक है जिसके कुन्दे की बनावट, झुकाव, और लम्बाई शीघ्र ही कम व बेश की जा सकती है। इस बन्दूक से स्पेशल ट्राई टारगेट (Special Try Target अर्थात् वे निशाने जो इसी काम के लिये होते हैं) पर फ़ायर कराकर यह जाना जा सकता है, किस बनावट झुकाव और लम्बाई के कुन्दे वाली बन्दूक दागने वाले को ठीक फिट करेगी। भारत में कलकत्ते की रोड़ा कम्पनी में ट्राईगन से दगाकर बन्दूक बनवाई जा सकती है। परन्तु यह क्रिया सब जगह और सबको सुलभ नहीं है। यहाँ तो बनी बनाई बन्दूकें ही विशेषतया ख़रीदी

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जाती हैं। अतः बन्दूक ख़रीदने वालों को, ख़रीदने के पहले, निम्न लिखित विधि से जांच लेना चाहिये कि अमुक बन्दूक उसे फिट करेगी या नहीं।

आंख की उँचाई के बराबर के निशाने पर बन्दूक को कई बार शीघ्रता से कंधे पर जमा कर देखे कि बन्दूक का मसा निशाने पर ठीक जमा देख पड़ता है या नहीं। यदि बन्दूक साधारणरूप से प्रत्येक बार निशाने पर ठीक जम जाय तो समझना चाहिये कि बन्दूक उस शिकारी को फिट करेगी। और उससे शीघ्र और ठीक निशाना लगेगा। जो बन्दूक शीघ्रता से कन्धे पर आते ही निशाने पर ठीक नहीं जमती, बल्कि उसके नीचे जमती है, उसका कुन्दा उस व्यक्ति के लिये या तो छोटा है या अधिक झुका हुआ है। यदि नली निशाने के ऊपर जमे और बन्दूक का निशाना ठीक करने के लिये उसे नीचे को हटाना पड़े तो यह जानना चाहिये कि बन्दूक का कुन्दा कम झुका है, अथवा लम्बा है। किसी को बन्दूक का फिट करना उसके कुन्दे की लम्बाई, झुकाव, बनावट और हील सेट के झुकाव पर ही निर्भर है। अतः जब कोई शिकारी बन्दूक लेता है तो उसको चाहिये कि वह उपरोक्त बिधि से बन्दूक को भली भांति जांच कर के देख ले कि वह उसे फ़िट करेगी या नहीं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सातवाँ अध्याय

कार्तूस और बारूद इत्यादि

बन्दूक के कार्तूस दो प्रकार के बनते हैं। एक तो काग़ज़ के होते हैं, जिनके नीचे के भाग में पीतल लगी रहती है, और दूसरे बिलकुल पीतल के होते हैं। कागज के कार्तूस अधिक तर प्रचलित हैं। वे ही आम तौर से इस्तेमाल में लाये जाते हैं। इसका कारण यह है कि एक तो कागज के कारतूस सस्ते मिलते हैं, और दूसरे पहले पहल इन्हीं का आविष्कार हुआ है और तब से बराबर दागे जाते हैं। पीतल के कारतूस कीमती होते हैं अतः धनाढय शिकारी ही उन्हें दाग सकते हैं। पीतल के कारतूस वाटर टाइट (Water tight) होते हैं अर्थात उनकी बारूद पर कारतूसों के भीगने का कोई असर नहीं होता। न उनमें बरसाती सर्दी का ही कोई असर पहुँचता है। इसके अतिरिक्त पीतल वाले कारतूस पचासों बार दागे जा सकते हैं। जो शिकारी अपने कारतूस स्वयं भर लेते हैं, उनके लिये पीतल वाले कारतूस बहुत ही उपयोगी होते हैं। अन्य जो शहरों से दूर उन जंगलों में रहते हैं, जहां से ऐसे ऐसे स्थानों का आना जाना सुगम नहीं है जहां कारतूस मिलते हैं, उनके लिये भी पीतल के कारतूस उत्तम होते हैं, क्योंकि ये पचासों बार भरे

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जा सकते हैं। काग़ज़ के कारतूस दो तीन बार भरे जाने के बाद ख़राब हो जाते हैं। अधिकांश दूसरी फ़ायर के साथ ही चिटक कर बेकार हो जाते हैं।

पीतल के कार्तूसों की भीतरी परिधि का व्यास काग़ज़ के कारतूसों से बड़ा होता है, क्योंकि उसकी दीवाल काग़ज़ के कारतूसों की दीवाल से पतली होती है। इससे पीतल वाले कारतूस में जो वाड्स (Wads) अर्थात् टिकियां, छर्रा या बारूद पर लगती हैं वे काग़ज़ के कारतूस से बड़ी होती हैं। पीतल के कारतूस के वाड्स बंदूक की नली में अधिक रुकते हैं। क्योंकि आम तौर से बन्दूकों की नली की बोरिंग अर्थात् छेद, विशेष प्रचलित कागज के कारतूसों के हिसाब से ही बनाये जाते हैं। जब इन बन्दूकों से पीतल के कारतूस दागे जाते हैं तो उनके वाड्स बड़े होने के कारण नलियों में अधिक रुकते हैं। अधिक रुकाव के कारण धक्का भी अधिक होता है। अपरञ्च अधिक रुकाव के कारण छर्रे की शक्ति भी कुछ कम हो जाती है। अतः पीतल के कारतूस उन्हीं बन्दूकों से दागना चाहिये जिनकी बोरिंग पीतल के कारतूस दागने के लिये विशेष तौर पर बनाई गई हो। ऐसी बन्दूकों से पीतल के कारतूसों का दागना उत्तम होगा। काग़ज़ के प्रचलित कार्तूस प्रायः सभी दूकानों में पाये जाते हैं, पर पीतल के कारतूस बड़ी दूकानों में ही मिलते हैं।

बारूद

बारूद किस चीज से बनती है, और कैसे बनती है, इसका लिखना आवश्यक नहीं है। गन बन्दूक से प्रायः निट्रो पाउडर्स

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(Nitro Powders) दागे जाते हैं। बारूद को अंगरेज़ी में पाउडर कहते हैं। निट्रो पाउडर कई प्रकार के होते हैं। उनमें से कुछ के नाम नीचे दिये जाते हैं।

(१) स्मोकलेस डायमंड (२) ई० सी० (३) इम्पायर (४) शल्टेज (५) एम्ब्राइट (६) स्पोर्टिङ्ग बैलीस्टाइट ये सब अच्छी क़िस्म की बारूदें हैं। शिकारी अपनी पसन्द से इन पाउडरों से भरे कारतूस ख़रीदते हैं। हमारी राय में स्मोकलेस डायमंड (Smokeless diamond) सबसे अच्छी बारूद है, और उसके बाद शल्टेज़ (Schultez) बारूद अच्छी होती है। इली और काईनाक (Elly and Kynocks) के कारतूस जो स्मोकलेस डायमंड पाउडर से भरे होते हैं, कभी शिकारी को हताश नहीं करते। वे बहुत उत्तम चलते हैं। इन सब बारूदों के कारतूसों को और बारूद को सर्दी से तो बचाना ही चाहिये। किन्तु उन्हें कभी धूप में भी न रखना चाहिये। सर्दी पहुँचने से बारूद की शक्ति कम हो जाती है और धूप लगने से बारूद बहुत तेज़ हो जाती है। इसी लिये बारूद और कारतूसों को ऐसे स्थान पर रखना चाहिये जहां न नमी पहुँच सके और न बहुत गर्मी ही पहुँच सके। आगे छर्रे के प्रकरण में लिखा जायगा किस कारतूस में कितनी बारूद तथा छर्रे होने चाहियें।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आठवाँ अध्याय

छर्रा, टोपी इत्यादि

छर्रा को अंगरेज़ी में शाट (Shot) कहते हैं। पहले केवल शीशे के ही छर्रे बनते थे। ये बहुत मुलायम पर वज़नी होते हैं। चोक बोर नलियों से दागने के समय सद्यः दबाव के कारण ये गोल नहीं रह जाते। नलियों में ही टेढ़े और चिपटे हो जाते हैं, जिससे उनमें एक कमी आ जाती है। जो वस्तु बिल्कुल चिकनी तथा गोली नहीं होती उसकी गति पर वातावरण का कुछ अधिक प्रभाव पड़ता है। बिल्कुल चिकनी तथा गोल वस्तु पर उतना अधिक प्रभाव नहीं पड़ता। अतः टेढ़े और चिपटे छर्रों की अपेक्षा गोल और चिकने छर्रे अधिक तेज़ी से लक्ष्य पर लगते हैं। इससे इसकी आवश्यकता प्रतीत हुई कि छर्रे इतने कड़े हों कि चोक बोर की नली से फायर करने पर, उसके सहसा दबाव से नली में टेढ़े न हो जाँय, बल्कि बिल्कुल चिकने और गोल बने रहें। छर्रों का वज़नी होना भी आवश्यक है ताकि उन पर वायु का प्रभाव न पड़ सके। इसी लिये किसी समय, शीशे के छर्रों को कड़ा बनाने के लिये बनाते समय उन पर बहुत ठंढ़ी हवा का झोंका देकर उन्हें ठंढा किया जाता था। इस प्रकार निर्मित छर्रे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चिल्ड शाट (Chilled shot) कहलाते थे। जिन पर इस प्रकार झोंका नहीं दिया जाता था उन्हें साफ्ट शाट (Soft shot) अर्थात् मुलायम छर्रे कहते थे। आधुनिक छर्रों में शीशे के अतिरिक्त दूसरी धातु भी कड़ा करने के लिये मिलाते हैं। उन्हें भी चिल्ड शाट कहते हैं। आज कल यही छर्रे प्रचलित हैं। चोक बोर नली से चिल्ड शाट (कड़े छर्रे) चलाना ही उपयुक्त होता है वे नली के अन्दर कदापि, चिपटे और टेढ़े नहीं होते। अतः वे तीव्रता से सटीक निशाने पर लगते हैं। इसके विपरीत सिलेन्डर बोर नली से निरे शीशे के मुलायम छर्रे (Soft shot) दागना ही ठीक होगा। ऐसे छर्रे वज़नी होते हैं और उन पर वायु का कोई असर नहीं पड़ता। अतः ये निशाने पर बहुत ठीक बैठते हैं। हम कह आये हैं कि सिलेन्डर बोर नली में चोक बोर नली की भांति छर्रों पर कोई दबाव नहीं पड़ता। अतः इस नली से यदि शीशे के मुलायम छर्रे दागे जाँय तो चिपटे और टेढ़े नहीं हो सकते। इस नली से मुलायम छर्रों का दागना विशेष लाभ कारी होगा।

साधारणतया बड़े छर्रे बड़ी बोर की बन्दूक से और छोटे छर्रे छोटी बोर की बन्दूक से अच्छे दगते हैं। जितना ही छोटा बोर होता है उतना ही छोटा छर्रा दागना अच्छा होता है। बात यह है कि छोटे बोर की बन्दूक का कारतूस और चार्ज (Charge) अर्थात् छर्रा बारूद का सामान, कम होता है, और उसमें छर्रों की संख्या कम होती है। १६ बोर की बन्दूक में नम्बर ४ की अपेक्षा नम्बर ५ का छर्रा दागना कहीं अच्छा होता है। नम्बर ४ में कम छर्रे होते हैं और अधिक फैले हुए जाते हैं। इसके विपरीत

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

नम्बर ५ के छर्रे संख्या में अधिक होने के कारण घने चलते हैं और निशाने पर अधिक संख्या में लगते हैं। छर्रे, संख्या में जितने ही अधिक होते हैं, निकट से शिकार का मारना उतना ही सरल होता है। किन्तु बड़ी और घने परों वाली चिड़ियों पर क़रीब से भी ४ नम्बर से छोटे छर्रों को न दागना चाहिये। नम्बर ४ का छर्रा, नम्बर ५ से ज्यादा वज़नी और बड़ा होता है, इस लिये नम्बर ५ के छर्रे का धक्का तथा चोट इतना प्रभावशाली नहीं होता जितना नम्बर ४ का। यदि शिकार बिल्कुल निकट नहीं है, तो नम्बर ५ का छर्रा उसे उतनी सफ़ाई से नहीं मार गिरायेगा, जितना कि नम्बर ४ का छर्रा। पर जो अच्छा निशाने बाज़ नहीं है उसके लिये नम्बर ५ का छर्रा ही उत्तम होगा क्योंकि उनकी तादाद उस कारतूस में अधिक होती है। अच्छा निशाने बाज़, शिकार को अधिक दूरी पर ही मारना चाहता है अतः उसके लिये नम्बर ४ के छर्रे का कारतूस ही ठीक होगा। उसे कम निशाने बाज़ की तरह अधिक छर्रों के सहारे की ज़रूरत नहीं रहती। छोटे छर्रों से बड़े छर्रों की मार अधिक दूर तक की होती है। परन्तु बड़े छर्रों का पैटर्न (Pattern) अधिक खुला हुआ होता है। अर्थात् बड़े छर्रे संख्या में कम होने के कारण अधिक फैले हुए निशाने पर जाते हैं। नीचे के चक्र से यह भली भांति सिद्ध हो जायगा, कि एक औंस की तौल में किस नम्बर के कितने छर्रे रहते हैं। यह भी विदित हो जायगा कि जितना ही छर्रा बड़ा होता है उतना ही वह संख्या में कम होता है और इसी लिये उसका पैटर्न अधिक खुला हुआ होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छर्रे का नम्बर	१२	११	१०	९	८
संख्या	१२५०	१०४०	८५०	५८०	४५०
छर्रे का नम्बर	1	B	BB	BBB	A
संख्या	१००	८०	७०	६०	५०

छर्रे का नम्बर	७	६	५	४	३	२
संख्या	३४०	२७०	२२०	१७०	१४०	१२०
छर्रे का नम्बर	AA	AAA	sss G	ss G	s G	LG
संख्या	४०	३५	२०	१५	८	६

यह पहले ही कह आये हैं कि जितनी ही छोटी बन्दूक होती है, उतना ही कम उसका चार्ज (कारतूस में छर्रे बारूद का सामान) होता है। नीचे के चक्र से पाठकों को भली भांति मालूम हो जायगा कि ८ व १२ बोर से २० बोर की बन्दूक के कारतूस का छर्रा और बारूद कितना कम होता है। यहां पर केवल उन्हीं बोर की बन्दूकों के कारतूस के मसाले (छर्रा तथा बारूद) के सम्बन्ध में लिखा जा रहा है जो विशेषतया प्रचलित हैं। ४, १०, १४, २४, २८, ३२, ४१०, और ३६० बोर की बन्दूकें बहुत कम प्रचलित हैं। अतः उनके कारतूस की खूराक के सम्बन्ध में कुछ भी लिखना अनावश्यक प्रतीत होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बन्दूक का बोर और लम्बाई कारतूस		स्मोकलेस डायमंड और ई० सी० बारूद		शल्टज बारूद		काली बारूद	
बोर	लम्बाई कारतूस	बारूद की तौल	छर्रे की तौल	बारूद की तौल	छर्रे की तौल	बारूद की तौल	छर्रे की तौल
८	४ इञ्च	७३ ग्रेन	२ ३/८ औंस	८५ ग्रेन	२ १/२ औंस	७ १/२ ड्राम	२ १/३२ औंस
,,	३ १/२ ,,	६५ ,,	२ १/८ ,,	८० ,,	२ १/४ ,,	६ १/२ ,,	२ १/४ ,,
,,	३ १/४ ,,	६० ,,	२ ,,	६६ ,,	२ १/८ ,,	६ ,,	२ १/८ ,,
१२	३ ,,	४० ,,	१ ५/१६ ,,	५० ,,	१ १/२ ,,	३ ३/४ ,,	१ १/२ ,,
,,	२ ३/४ ,,	३६ ,,	१ १/४ ,,	४६ ,,	१ १/४ ,,	३ १/४ ,,	१ १/४ ,,
,,	२ १/२ ,,	३३ ,,	१ १/१६ ,,	४८ ,,	१ १/१६ ,,	३ ,,	१ १/८ ,,
१६	३ ,,	३३ ,,	१ १/१६ ,,	४२ ,,	१ १/८ ,,	३ ,,	१ १/८ ,,
,,	२ ३/४ ,,	३१ ,,	१ ,,	४० ,,	१ १/१६ ,,	३ ,,	१ १/१६ ,,
,,	२ १/२ ,,	२८ ,,	७/८ ,,	३६ ,,	७/८ ,,	३ ,,	१ १/१६ ,,
२०	३ ,,	३० ,,	१ ,,	३५ ,,	१ ,,	३ ,,	१ ,,
,,	२ ३/४ ,,	२६ ,,	७/८ ,,	३३ ,,	१५/१६ ,,	२ ३/४ ,,	१५/१६ ,,
,,	२ १/२ ,,	२४ ,,	७/८ ,,	३१ ,,	१५/१६ ,,	२ १/८ ,,	३/४ ,,

शिकार में सबसे अधिक ४, ५, ६, और ७ नम्बर के कारतूस दागे जाते हैं। अतः इन चारों नम्बर के छर्रों की तौल और संख्या ३", २ ३/४", और २ १/२" के कारतूसों के लिये लिखना जरूरी है। यह भी केवल अधिक प्रचलित १२, १६ और २० बोर की बन्दूकों के बारे में ही लिखा जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छर्रा की तौल	छर्रा का नम्बर तथा संख्या			
	४	५	६	७
१½ औंस	२५५	३३०	४०५	५१०
१ 5/16 ,,	२२३	२८६	३५४	४४६
१¼ ,,	२१३	२७५	३३८	४२५
१⅛ ,,	१६१	२४८	३०४	३८३
१ 1/16 ,,	१८१	२३४	२८७	३६१
१ ,,	१७०	२२०	२६०	३४०
15/16 ,,	१५६	२०६	२५३	३१६
⅞ ,,	१४६	१६३	२३६	२६८
¾ ,,	१२८	१६५	२०२	२५५

उपरोक्त चक्र से भी यह प्रत्यक्ष है कि १२ बोर के कारतूस में छर्रा और बारूद १६ और २० बोर के कारतूस के अपेक्षा कहीं अधिक परिमाण में रहता है। अतः ३० इञ्च की परिधि में १२ बोर से फायर किये छर्रे सदा ही अधिक संख्या में और ज्यादा घने रहते हैं। चारों प्रकार की बोर की बन्दूकों से दागे हुये छर्रों की जो परिधि १० गज से ४० गज तक बनती है उसका व्यास इञ्चों में पाँचवें अध्याय में जो चक्र है उस में लिखा गया है।

उस चक्र से यह भली भांति विदित हो जाता है कि छर्रे जितनी ही दूर जाते हैं उतनी ही उनकी परिधि बड़ी होती जाती है, और उतना ही खुला हुआ उनका पैटर्न होता है। अर्थात् उतना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ही अधिक वे फैले हुए होते हैं। सिलेन्डर नली से दागे हुए छर्रे ४५ गज़ की दूरी पर जाकर ४० प्रति शत से कम ही ३० इञ्च की परिधि के भीतर रह जाते हैं। चोक बोर नली से दागे हुए छर्रे भी ५५ गज़ की दूरी पर जाकर ४० प्रतिशत से कम ही उपरोक्त परिधि में रह जाते हैं। ३० गज़ से लेकर ६० गज़ की दूरी पर जितने प्रतिशत छर्रे ३० इञ्च की परिधि के भीतर चारों प्रकार की बोर की नलियों से फ़ायर करने पर रह जाते हैं वे निम्न लिखित चक्र में दिये जाते हैं। इस चक्र के आधार पर, किसी नम्बर के कातूर्स के लिये, उसके छर्रे की संख्या जान कर, फ़ी सदी निकाली जा सकती है।

दूरी	सिलेंडर बोर के छर्रे	इम्प्रूवड सिलेंडर बोर के छर्रे	अर्ध चोक बोर के छर्रे	पूर्ण चोक बोर के छर्रे
३० गज़ पर	६०प्रतिशत	७२प्रतिशत	८३प्रतिशत	९५प्रतिशत
३५ ,, ,,	४९ ,,	६१ ,,	७१ ,,	८२ ,,
४० ,, ,,	४० ,,	५० ,,	६० ,,	७० ,,
४५ ,, ,,	३३ ,,	४२ ,,	५० ,,	६० ,,
५० ,, ,,	२६ ,,	३३ ,,	४० ,,	४८ ,,
५५ ,, ,,	२१ ,,	२७ ,,	३२ ,,	३९ ,,
६० ,, ,,	१७ ,,	२२ ,,	२६ ,,	३२ ,,

उदाहरण :—नम्बर ५ छर्रा के कातूर्स में १$\frac{1}{8}$ औंस के चार्ज अर्थात् ख़ूराक में २३४ छर्रे होते हैं। उसे ५० गज़ पर अर्ध चोक नली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से दागने का पैटर्न (Pattern) अर्थात् कितने छर्रे ३० इञ्च की परिधि में होंगे। २३४×४० (उपरोक्त चक्र से) ÷ १००=९३.३ या ९४।

इन सब चक्रों से पाठक भली भांति समझ गये होंगे कि १२, १६, और २० बोर की बन्दूकों के क्रम से ३″, २¾″ और २½″ इञ्च लम्बे कार्तूसों में तौल में कितनी बारूद और कितने छर्रे होने चाहिये। पाठक यह भी जान गये होंगे कि एक चार्ज में छर्रों की कितनी संख्या होती है, और चारों प्रकार के बोर की नलियों से दागे हुए छर्रे कितनी दूरी पर कितना फैले हुए होते हैं। यह पहले लिखा जा चुका है कि जितना ही बड़ा छर्रा होता है उतने ही अधिक दूर तक वह शिकार मारता है और जितने ही अधिक दूर पर शिकार होता है उतना ही उसका पैटर्न खुला हुआ होता है। अधिक खुले हुए पैटर्न में यह सम्भव है कि छर्रे शिकार के चारों ओर से निकल जाँय और शिकार पर एक भी छर्रा न लगे। वह छर्रों की घातक परिधि में होता हुआ भी बच जाय। नम्बर ४ का छर्रा ६० गज की दूरी पर, पूर्ण रूप से केवल लम्बी मार की चोक बोर नली से ही दागने से सफल हो सकता है। यह पहले ही कह आये हैं कि लम्बी मार की वही बन्दूक है जिसकी नली ३२ इञ्च या इससे भी अधिक लम्बी हो। नम्बर १ का छर्रा उपरोक्त बन्दूक से दागने पर ७५ गज तक सदैव सफल हो सकता है। इससे ज्यादा दूरी के शिकार के लिये B. B. या A.A.A. या इससे भी बड़े छर्रों का उपयोग करना चाहिये। यह सदा ही ध्यान में रखना चाहिये कि नम्बर १ का छर्रा ८० गज पर किसी भी बतख़ को नहीं गिरा सकता, जब तक कि वह बतख़ के सिर या

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

किसी दूसरे मर्म स्थान पर न लगे। कोई भी बन्दूक (Gun) १०० गज़ से ज़्यादा दूरी पर नहीं मार सकती। कभी-कभी ऐसा हो जाता है कि शिकार के मर्म स्थान पर चोट लगने से, १०० गज़ से कुछ ज़्यादा दूरी पर भी शिकार गिर जाता है, पर होता है यह केवल संयोग वश। पर ऐसी घटना सर्वदा घटे इसकी कोई गारेन्टी नहीं है।

इस पर शिकारियों में मतभेद है कि किस शिकार पर किस नम्बर का छर्रा दागना ही ठीक होगा। बटेर के शिकार के लिये एक शिकारी ८ नम्बर का छर्रा चलाना ठीक मानता है तो दूसरा १० नम्बर का छर्रा उत्तम समझता है। इसी प्रकार 'चाहे' के शिकार में कोई ८ नम्बर का छर्रा और कोई ६ तथा १० नम्बर का छर्रा चलाना ठीक समझते हैं। अतः यह प्रत्येक शिकारी की इच्छा पर निर्भर है कि वह किस शिकार पर किस नम्बर के छर्रे का प्रयोग करेगा। तथापि लेखक की राय में यह आवश्यक प्रतीत होता है कि यह बतला दिया जाय किस शिकार पर किस नम्बर का छर्रा या गोली चलाना उत्तम होगा। यदि शिकारी का निशाना ठीक है, और शिकार की दूरी का ध्यान रखकर वह इन छर्रों से निम्नलिखित शिकारों पर फायर करेगा तो उसे कभी भी हताश न होना पड़ेगा।

नाम शिकार	छर्रे का नम्बर जिससे मारे जांय
बटेर ...	... ७ या ८
पेड़ुका या धवल ...	... ६ या ७
कबूतर, हरियल ...	... ५ या ६

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नाम शिकार	छर्रे का नम्बर जिससे मारे जायँ
चकोर, तीतर, भट तीतर ...	५ या ६
बन मुर्गा	३ या ४
चीर, कालिज पोखरा, मोनाल ...	३ या ४
तगदार	१ या २
छोटा तिलूर	४ या ५
चरज या चरट	३ या ४
छोटा चरज या लीख ...	५ या ६
तिलुर या होबार ...	३ या ४
सिम तीतर	६ या ७
चाहा, ओहारी या परैली ...	८ या ६
पतारी, चैती, किर्रा सेल्हरी ...	५ या ६
चुरवा और थोथरा	४ या ५
सोनरा, बुड़ार, कैड़, नीलसर, लालसर, सिफुरी, टिकुई इत्यादि	४ या ५
सवन, नकटा और कर करा ...	B. B. या नं० १
चौगड़ा या खर्गोश ...	४ या ५
हिरन ...	एस.जी. या एल. जी. या गोली
तेंन्दुवा, चीता, बाघ आदि ...	'जेथल' गोली

कारतूस की टोपी और वाड

कारतूस में जो टोपी इस्तेमाल में लाई जाय वह सदैव किसी अच्छे और विख्यात कारखाने की हो। अच्छे कारखाने की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

टोपियां उचित शक्ति की बनी हुई होती हैं। यह हम उन शिकारियों के लिये लिख रहे हैं जो अपने कारतूस स्वयम् भरते हैं। उचित शक्ति की टोपियाँ उत्तम होतीं हैं और उन्हीं से उत्तम फायर भी हो सकती है।

जो वाड्स (Wads) या टिकियाँ बारूद और छर्रों पर लगाने में प्रयोग की जाती हैं वे दो प्रकार की होती हैं। एक तो दफ्ती की होती हैं जो छर्रे तथा बारूद पर लगाई जाती हैं और दूसरी नम्दे की होती हैं। जो दफ्ती की टिकियों के बीच और छर्रा तथा बारूद के मध्य में लगाई जाती हैं। सब से ऊपर जो टिकियाँ छर्रों पर लगतीं हैं वह छर्रों को रोकने के लिये लगाई जाती हैं। अतः ऊपर के टिकिया के बाद ही कारतूस की दीवार उस पर मोड़ दी जाती है। कुछ लोगों का कहना है कि यदि ऊपर की टिकिया मोटी दफ्ती की हो तो फायर होने पर छर्रे अधिक फैलते हैं।

गोली और छर्रों पर प्रभाव डालने वाली शक्तियाँ

गोली पर जो शक्तियाँ काम करती हैं, वे छर्रों पर भी अपना प्रभाव यथावत् दिखलाती हैं। ये तीन प्रकार की होती हैं।

१—चार्ज का धड़ाका अर्थात् बारूद का दगना।

२—पृथ्वी की आकर्षण शक्ति।

३—वायु की रुकावट।

बारूद का धड़ाके से उड़ना गोली तथा छर्रे को आगे फेंकता है। पृथ्वी की स्वाभाविक आकर्षण शक्ति (Gravity) प्रत्येक निराधार वस्तु को सदैव बढ़ती हुई तीव्रता से पृथ्वी के केन्द्र की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओर खींचती रहती है। यह शक्ति ज्योंही गोली बंदूक की नली से बाहर निकली कि उस पर अपना प्रभाव डालने लगी। तीसरे, वायु का अवरोध (Resistance) फायर करने पर शीघ्र ही गोली के आगे बढ़ने की शक्ति को कम करने लगती है।

इन तीनों शक्तियों का मिलकर, गोली पर ऐसा प्रभाव पड़ता है कि वह निशाने पर सीधी नहीं जाती बल्कि ऊपर को उठकर एक धनुषाकार मार्ग बनाती हुई लक्ष्य पर पहुँचती है। यह गोली का धनुषाकार मार्ग, ट्रैजेक्टरी (Trajectory) कहलाता है। गोली ही यह धनुषाकार मार्ग बनाती है, छर्रे नहीं बनाते।

यहां पर लाइन आफ़ डिपार्चर (Line of departure) लाइन आफ़ फ़ायर (Line of fire) और लाइन आफ़ साइट (Line of sight) आदि के बारे में कुछ नहीं लिखा जाता है। ट्रैजेक्टरी तथा ये विषय राइफ़ल के फ़ायर से सम्बन्ध रखते हैं। राइफ़ल से फ़ायर करने वाले शिकारी को इनके जानकारी की आवश्यकता पड़ती है। अतः इन विषयों पर दूसरी पुस्तक में, जहां राइफ़ल से शिकार का वर्णन किया जायगा, प्रकाश डाला जायगा। यहां पर इसको वर्णन अनावश्यक है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नवाँ अध्याय

बन्दूक की सफाई के नियम

बंदूक की सफ़ाई के नियमों को समझने के लिये यह परमाश्यक है, कि बंदूक का नली के गन्दगी के कारणों का संक्षेप में वर्णन किया जाय। नली में गन्दगी दो कारणों से होती है। (१) **भीतरी गन्दगी** जो प्रायः गैस या किसी हानिकारक द्रव्य के नली के छिद्रों में घुस जाने के कारण होती है। (२) ऊपरी **गन्दगी** जो बन्दूक के बोर के अन्दर बारूद के दगने या टोपी के दगने से ततजनित परिमाणुवों के नली में बैठ जाने से उत्पन्न होती है। दोनों ही दशाओं में यदि सफ़ाई में लापरवाही की गई तो बोर के अन्दर जंग लग जाता है। जंग साफ़ करने के लिये तार की जाली या तार का ब्रुश इस्तेमाल करना पड़ता है, जिससे नली असमय में घिस जाती है।

भीतरी गन्दगी गरम पानी से हटाई जा सकती है। गरम पानी नली में डालने के पहले, तेल आदि जो चिकनी चीज़ नली में लगी हो उसे पोछ कर साफ़ कर लेना चाहिये। तदुपरान्त नली में ५, या ६ सेर उबलता पानी नली के ब्रीच (Breech) से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

डालना चाहिये। उस समय बन्दूक के एजेक्टर इत्यादि पर कपड़ा लगा हो ताकि उसमें पानी न जा सके। उसके बाद बन्दूक को भली भाँति सुखा लेना चाहिये और बोर में तेल लगा देना चाहिये। इस प्रकार गरम पानी केवल गंदगी ही नहीं मिटाता, वह नली के अन्दर का मोर्चा भी हटा देता है। यदि गरम पानी का प्रयोग न किया गया तो शीघ्र ही नली के बोर में एक प्रकार की काली तथा सख्त चीज़ बैठ जाती है और वह बाद को लाल जंग के रूप में परिणत हो जाती है। ऐसी सूरत में मजबूरन तार का ब्रुश या गाज से नली साफ़ करनी पड़ती है। **ऊपरी गन्दगी** जब तक नली गरम रहती है आसानी से पुलथ्रू, (अर्थात् रस्सी जो सफ़ाई के लिये नली में डाली जाती है) या सफ़ाई के गज़ से साफ़ हो जाती है।

रोज की सफ़ाई—बंदूक़ का बाहरी हिस्सा किसी तेल में भिगोये हुए कपड़े से बन्दूक़ दगने के बाद, नित्य साफ़ कर डालना चाहिये। बन्दूक़ का बोर सदा तेल से तर रहना चाहिये, किन्तु १० या १५ दिन के बाद पुराना तेल पोंछ कर नया तेल लगा देना चाहिये। जिस बन्दूक़ के अन्दर जंग लग गयी हो उसकी सफ़ाई नित्य होगी, और हफ्ते में १ बार ब्रुश या गाज इस्तेमाल किया जायगा। जब बन्दूक़ दागनी हो तो उसे एक तेल से तर कपड़े से तर करके फिर बाद को पोंछ लेना चाहिये। चैम्बर में तेल न लगा हो। इससे हानि की आशंका है। बन्दूक़ दागने के बाद तुरन्त सफ़ाई कर डालनी चाहिये। जब तक बन्दूक़ की नली गरम रहती है तब तक उसकी गन्दगी सरलता से हटाई जा सकती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। यदि सफ़ाई में विलम्ब हुआ तो गन्दगी के परिमाणु ठंढे होकर नली में बैठ जाते हैं। तब सफ़ाई में बड़ी कठिनता पड़ती है। यदि तुरन्त ही सफ़ाई न की जा सके तो तेल से तर कपड़ा नली के अन्दर डालकर खींच लेना चाहिये।

बन्दूक़ को बहुत दिनों तक अच्छी दशा में रखना उसकी सफ़ाई पर ही निर्भर है। शिकारी को चाहिये कि वह अपनी बन्दूक की सफ़ाई का विशेष ध्यान रक्खे। जब कभी फ़ायर किया जाय, बन्दूक को दागने के बाद जहां तक सम्भव हो शीघ्र साफ़ कर डाले और उसमें तेल लगा दे। सफ़ाई बड़ी सावधानी से करनी चाहिये; जहाँ तक हो सके नौकरों से कभी सफ़ाई न करानी चाहिये। अधिकांश नौकर बड़े लापरवाही से सफ़ाई करते हैं। कुछ नौकर, नलियों के अन्दर, सफ़ाई गज़ में इतना अधिक कपड़ा लगाकर ठूंसते हैं, कि वह थोड़ी दूर चल कर रुक जाता है तब गज़ को किसी चीज़से ठोंकना पड़ता है, क्योंकि बिना ठोंके गज़ और कपड़ा नहीं निकल सकता। इस प्रकार ठसे हुए कपड़े को नली में ठोंकना कभी कभी बहुत हानि कारक हो जाता है। इस से नली के फूल उठने की सम्भावना रहती है।

दूकानों पर जो बाज़ारू गज़ तार के व ऊनी ब्रुश आदि के साथ मिलते हैं वे देखने में तो बड़े अच्छे लगते हैं, पर उनमें आगे और जोड़ पर जो पीतल लगा रहता है, वह नलियों में हानि कारक रूप से लगता है। अपरञ्च उनके तार तथा ब्रुश सदा नलियों से फ़िट नहीं करते और पूरी सफ़ाई नहीं हो पाती। हमारी राय में घर पर बढ़ई से बनवाया हुआ शीशम या साखू

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का गज़, जिसमें कहीं लोहा या पीतल न लगा हो, बाज़ारू गज़ों से कहीं उत्तम होता है, और उससे सफ़ाई भी उत्तम होती है। इसमें एक ओर सिरे पर चमड़े की टिकियाँ लगानी चाहिये। यह टिकिया ठीक बन्दूक के वाड (Wad) के बराबर होनी चाहिये। ३, ४ टिकियाँ वाड के बराबर की हों और तीन छोटी हों। दो दो बड़ी टिकियों के बीच एक छोटी टिकिया लगेगी। इन सब टिकियों को एक पीतल की कील से ऐसा एक सिरे पर जड़ देना चाहिये, कि कील चमड़े में बिलकुल अन्दर की ओर धंसी रहे। ये टिकियाँ मोटे पर मुलायम चमड़े की हों और तेल में तर रहें। दूसरी ओर का सिरा चार अंगुल तक चिरा हुआ होना चाहिये, और उसमें एक छेद रस्सी लगाने के लिये होना चाहिये। गज़ बन्दूक की नली से छः इञ्च लम्बा हो। इस गज़ के टिकियों वाले सिरे को नली में डाल कर चार छः बार इधर उधर करने से नली की बारूद तथा गर्द बिलकुल साफ़ हो जाती है। बाद को दूसरे सिरे में कपड़ा लगाकर, नली को पोंछ कर उसमें तेल लगा देना चाहिये। इस प्रकार साफ़ करते समय नली का मुहँ किसी नम्दे या कई परत किये हुए मोटे कपड़े पर ही रखना चाहिये। नली के ऊपर तेल लगा कर तेल वाले कपड़े से, खूब रगड़ कर पोंछ लेना चाहिये, ताकि नली के ऊपर पसीने आदि का दाग, जो नली के पकड़ने में पड़ गये हों साफ़ हो जाय, और मुर्चा लगने की सम्भावना न रहे। पर इतना तेल भी न लगाया जाय कि गर्द बैठने का भय हो।

बन्दूक में लगाने के तेल अनेक प्रकार के मिलते हैं। हमारे विचार से "रंगून आयल", अच्छा होता है। उसके अभाव में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नारियल का तेल इस्तेमाल में लाया जा सकता है। हमारा अनुभव है कि नारियल का तेल लगाने से नलियों में वर्षा ऋतु में भी जंग नहीं लगता। बन्दूक के लाक में कभी भी गाढ़ा तेल न लगाना चाहिये। गाढ़े तेल में गर्द बहुत बैठती है। लाक में बढ़ियाँ घड़ी में लगाने वाला तेल इस्तेमाल में लाया जाय, किन्तु सफ़ाई करने के बाद तेल लगाया जाय, और हल्का लगाया जाय।

जब बन्दूक कुछ समय के लिये रख देना हो तो नलियों के भीतर अच्छे प्रकार से तेल या "गन वेस्लीन" लगाकर रक्खे। उत्तम तो यह है, कि, जो कपड़ा लगे हुए गज़ इस काम के लिये मिलते हैं, उन्हें नलियों के भीतर लगा दे। वे तेल में तर करके नलियों में लगाये जांय और बिलकुल सटें रहें। लगाते समय किसी प्रकार की नमीं न रहे। यदि बन्दूक में कहीं मुर्चा लग जाय तो उस पर खौलता पानी डाले और मोटे कपड़े से रगड़े और तब तेल से तर करे। यह क्रिया कई बार दुहराने से मुर्चा मिट जाती है। कुछ लोग नलियों के दाग साफ़ करने के लिये, पारे का उपयोग करते हैं। पारा नली में डाल कर, दोनों ओर का मुहँ बन्द करके खूब हिलाये। इससे छर्रों के दाग साफ़ हो जाते हैं।

सफ़ाई करने के बाद बन्दूक को उसके गिलाफ़ या बक्स में रख देना चाहिये, जिससे उस पर गर्द न बैठ सके। बन्दूक को बक्स में रखना श्रेष्ठ है क्योंकि यदि ले जाते में वह कहीं गिर पड़े तो विशेष हानि की सम्भावना नहीं रहती। हाँ! एक झंझट अवश्य पड़ जाती है। यदि आवश्यकता पड़ी तो फिर बन्दूक को जोड़ना पड़ती है। इससे बन्दूक दागने के लिये फ़ौरन ही तैय्यार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नहीं मिलती। इस विपत्ति को दूर करने के लिये बन्दूक को मोटे चमड़े के गिलाफ़ में रखते हैं, जिसमें अन्दर कपड़ा लगा हो। इस प्रकार से एक तो बन्दूक सदैव तैय्यार मिलती है, और दूसरे यह चमड़े का गिलाफ़ बन्दूक को साधारण धक्के से बचाता भी है। पर बन्दूक को कपड़े की गिलाफ़ में कभी भी नहीं रखना चाहिये। कपड़े की गिलाफ़, सिवा गर्द के और कोई बचाव नहीं कर सकती। गिलाफ़ ऐसी अवश्य होनी चाहिये जो साधारण धक्के या चोट से बन्दूक की रक्षा कर सके।

जब शिकारी शिकार के लिये चलता है तब उसे बन्दूक की नली के अन्दर का तेल अवश्य ही सूखे कपड़े से भली भाँति पोंछ लेना चाहिये। दागते समय नली तथा चैम्बर में तेल न होना चाहिये। जब गोली दागनी हो तो नली में कभी भी तेल न लगा हो। तेल रहने से गोली को निशाने से, इधर उधर या ऊँचे नीचे जाने की अधिक सम्भावना रहती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दसवाँ अध्याय

आखेट

व्याघ्र और सिंह आदि हिंस्र जीवों को छोड़ कर शिकार में प्रायः वे ही पशु और पक्षी मारे जाते हैं जिन्हें हमारे शास्त्र कार, भक्ष्य मानते हैं। जो भक्ष्य हैं उनका माँस खाने में स्वादिष्ट होता है, और इसीलिये उनका शिकार किया जाता है। इस विषय में अंगरेजो का मत, जहाँ तक पक्षियों के शिकार से सम्बन्ध रखता है हमारी राय में बहुत माननीय है। वे उसी पक्षी को शिकार की चिड़िया मानते हैं जो खाने में तो स्वादिष्ट हो परन्तु शिकार करने में कदापि सुलभ न हो। यह बात ध्यान में रखना चाहिये कि जो पक्षी शिकारी से सदा ही सशंक तथा चौकन्ना रहता है, उसका मारना तेज उड़ने वाली पक्षियों से कम कठिन नहीं है। क्योंकि वे शिकारी को छर्रे की मार के अन्दर आने ही नहीं देते।

मृग और पक्षी शिकार में बन्दूक से दो दशाओं में मारे जाते हैं। एक तो जब वे स्थिर दशा में खड़े या बैठे हों, दूसरे जब वे भागते या उड़ते हों। हम पहले ही कह आये हैं कि स्थिर दशा में लक्ष्यवेध करना कोई कठिन काम नहीं है, पर उड़ते या भागते

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में लक्ष्यवेध करना सच्चा कौशल है। सशंक भागते या उड़ते हुए शिकार को मारने के लिये, कौशल अनुभव, तथा अभ्यास की आवश्यकता है। निपुण तथा अनुभवी शिकारी भी, यदि उसे अभ्यास नहीं है तो वह ४० प्रतिशत फ़ायर से अधिक में, कभी सफल नहीं हो सकता।

जाड़े के प्रारम्भ में (कार्तिक के महीने में) साइबेरिया तथा तिब्बत आदि उत्तरीय देशों से अनेक प्रकार के पक्षी भारतवर्ष में आ जाते हैं, और यहाँ के जंगलों, मैदानों, और झीलों को फाल्गुन के अन्त तक सुशोभित करते हैं। इन्हीं दिनों उत्तरी भारत में सबसे अधिक शिकार होता है, और यहाँ पर शिकार के लिये यही समय सबसे अच्छा है भी। यहाँ पर इसी समय बड़े तालाबों और झीलों में अधिकतर और एक बड़े पैमाने में शिकार होता है। इन दिनों ये जलाशय सवन, कैड, बुड़ार, लालसर, सीकपर इत्यादि विदेशी पक्षियों से भरे पड़े रहते हैं। ग्रीष्म ऋतु के प्रारम्भ होते होते इन सुन्दर विदेशी विहंगमो का समूह, आकाश मार्ग से पुनः उत्तरीय भूखंड की ओर लौटने लगता है। उसी प्रदेश में जाकर ये अपने अन्डे देते हैं जिसे शीत काल के कारण इन्हें त्यागना पड़ा था। चैत्र के बाद वे ही जल पक्षी इन जलाशयों में मिल सकेंगे जो यहीं रहते और अंडे देते हैं। इनकी सात उपजातियाँ है। ये वर्षाऋतु में यहीं पर झीलों और तालाबों के किनारे अण्डे देते हैं। ये सभी बत्तकों के सम्प्रदाय के ही हैं। इनके पैरों के पंजे खाल से जुड़े होते हैं, चोच चिपटी और अन्दर दनदानेदार होती है। इस प्रकार के विहंगों को बत्तक या मुर्गावी कहा जाता

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

है। इनका मांस खाने में स्वादिष्ट होता है, अतः प्रायः इनका शिकार किया जाता है।

हम ऊपर कह आये हैं, कि पक्षियों का सबसे बड़ा और मनोहर शिकार, शिशिर काल में झीलों पर ही होता है अतः हम पहले पहल इसी शिकार के सम्बन्ध में लिखेंगे। हरियल, कबूतर और तीतर आदि स्थायी चिड़ियों के शिकार के विषय में बाद को प्रकाश डाला जायगा। तालाबी पक्षियों का बड़ा शिकार डोंगियों पर से ही होता है। डोंगियों पर से शिकार जितना ही मनोरञ्जक होता है उतना ही कठिन भी होता है। स्वच्छ जल राशि पर डगमगाती हुई छोटी-छोटी डोंगियों से नील नभो मंडल में वेग से उड़ते हुए चुरवा, सेफुरी, सींकपर आदि विहंगों को मार गिराने में निपुण और अनुभवी निशाने बाज़ों के कौशल की भी पूर्ण परीक्षा हो जाती है। नवीन मनचले तथा अनभ्यस्त शिकारियों के लिये तो डोंगी से उपरोक्त पक्षियों को मार लेने की कोई सम्मानता ही नहीं है। डोंगी पर से शिकार में तल्लीन, असाधारण पटु और चतुर निशाने बाज़ शिकारी भी ४० प्रतिशत फायर से अधिक में कभी सफल नहीं हो सकता। अच्छे निशाने बाज़ ३० प्रतिशत फायरों के भीतर ही निशाना सफल कर पाते हैं। नया शिकारी तो संयोग वश ही डोंगी पर से पक्षी मार सकता है।

डोंगियों पर से बड़े शिकार के लिये सबसे अच्छा यह है कि बड़ी झील में कई डोंगियां कोई सौ-सौ गज़ की दूरी पर एक लाइन बनाकर, एक साथ ही एक छोर से दूसरी छोर तक पहुँचें। इस प्रकार से शिकार करने में, चिड़ियाँ एक ओर उड़ कर कुछ न

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ दूसरी ओर जरूर बैठती हैं और जब शिकारी वहां अर्थात् दूसरी ओर पहुँचते हैं तो वहां की चिड़ियां उड़ कर थोड़ी बहुत पहली ओर (याने जहां से डोंगियाँ चली थी) अवश्य आ बैठतीं हैं। इस प्रकार से वापसी में भी फायर किया जा सकता है। यदि डोंगिया, झील भर में इधर-उधर फैला दी जायँ, तो फिर चिड़ियाँ बहुत जल्दी उस झील को छोड़ कर दूसरी झील की ओर चली जातीं हैं। ऐसी दशा में यदि निकट ही दूसरी झील हो और उस में भी शिकारी हों तो अच्छा होता है। उस समय यदि दोनों झीलों के किनारे एक-एक दो-दो शिकारी आड़ में छिपे होते हैं तो उन्हें खूब फायर करने का अवसर मिलता है, और यदि वे अच्छे शिकारी हुए तो बहुत सी चिड़ियों को मार लेते हैं। डोंगियों पर से दोनों झीलों में फायर होने के कारण चिड़ियाँ उस झील से इसमें, और इस झील से उसमें प्रायः आया जाया करतीं हैं।

उपरोक्त विधि बड़े शिकार की और झीलों के लिये है जिसमें अधिक डोंगियाँ और शिकारी हों। और वे दो तीन निकट के झीलों और तालाबों में विभक्त हों। एक दो डोंगी पर से भी अच्छा शिकार किया जा सकता है, पर उसमें दो एक शिकारियों के इधर उधर ताल में किनारे से दागने की आवश्यकता रहती है, जिससे चिड़िया उड़-उड़ कर इधर से उधर आयें जायें और डोंगी पर के शिकारी को बराबर फायर करने के लिये मिलती रहे।

दूसरे प्रकार का शिकार वह है जिसमें शिकारी झील के किनारे पर बैठी हुई या चुगती हुई या उड़ती हुई चिड़ियों को किनारे से ही मारता है। यह शिकार अपने ढंग का निराला है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसमें भिन्न प्रकार के तालाबी और जंगली पत्ती मारने को मिलते हैं। इस शिकार में दृढ़ता, धैर्य्य, और चौकसी से छिपने की विशेष कला की आवश्यकता रहती है। बड़ी सावधानी और परिश्रम से छिपकर किनारे बैठी हुई चिड़ियों के समीप, छर्रे की मार के अन्दर पहुँचने का प्रयत्न करना पड़ता है। कभी-कभी ज्योंहीं शिकारी बड़े परिश्रम के बाद छर्रे की मार के अन्दर पहुँचता है त्योंही चिड़िया उड़कर दूर चली जाती है। उसे उस स्थान पर हताश होकर दूसरे स्थान के लिये चलना पड़ता है। जब तक यह शिकार होता है शिकारी को चलते और छिपते ही बीतता है। उसे परिश्रम से पाये हुए थोड़े ही शिकार से संतोष करना पड़ता है। यहां पर यह लिख देना आवश्यक जान पड़ता है कि परिश्रम से पाये हुए थोड़े ही शिकार पर संतोष करना तथा प्रसन्न रहना सच्चे शिकारी का एक उत्तम और सराहनीय गुण है। कभी-कभी मीलों चलकर अनेक बार प्रयत्न और परिश्रम करने पर भी, सोनरा और सीक पर, आदि अच्छे पत्ती नहीं मिलते और तब शिकारी को उसी प्रकार से घोंघ,* कलधुलिहा,* और लोहड़ी* आदि पत्ती मारने पड़ते हैं। शिकारी अच्छी शिकारी चिड़ियों के न मिलने पर उपरोक्त पक्षियों को मार लेना ही अपना कर्तव्य समझता है। इस प्रकार के शिकार में कभी-कभी पानी में भी धंसना पड़ता है। इसमें स्वस्थ और नवयुवक शिकारी विशेष सफल रहते हैं।

चिड़ियों का शिकार सबेरे प्रातः काल के समय बहुत अच्छा होता है। उस समय उथले पानी में चुगने वाली चिड़ियाँ

---

* इन पक्षियों का शिकार सभी शिकारी नहीं करते।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(चैती और सींकपर आदि) प्रायः किनारे पर रहती हैं और दिन की भांति सतर्क नहीं रहती। इस समय यदि शिकारी मार के अन्दर (Firing range) पहुँच जाय तो प्रत्येक फ़ायर में डेढ़-डेढ़ दो-दो दर्जन मुर्गाबियों का गिरना कुछ कठिन नहीं होता। इस प्रकार के शिकार में यह सदा ध्यान रखना चाहिये कि पक्षियों के गिरने पर पानी में कभी न दौड़े जब तक इस बात का पता न लग जाय कि जल में कोई गड्ढ़ा या कुआँ तो नहीं है। ऐसे पानी में भी कभी न धंसना चाहिये जिसमें बिलकुल घनी और फंसने वाली घास या पुरैन इत्यादि हों। ऐसा करने से दुर्घटना होने का सदा भय रहता है। इस शिकार में सदा ही एक तैराक कुली को साथ रखना चाहिये ताकि ज्योंही फ़ायर किया जाय और चिड़ियाँ गिरें त्योंही वह उसे ले आये। ऐसे किनारे के शिकार में किसी किसी अँगरेज़ शिकारी के कुत्ते बड़े काम के होते हैं। वे गिरी हुई चिड़ियों को पानी से ले आते हैं।

तीसरे प्रकार का शिकार हरियल, कबूतर, तीतर और भट तीतर आदि जंगली पक्षियों का जो होता है वह झील के किनारे के पक्षियों के शिकार से मिलता जुलता हुआ होता है। अन्तर केवल इतना ही है कि इसमें झीलों के स्थान पर जंगल और मैदानमें शिकार की खोज करनी पड़ती है। जंगलों में अनेक प्रकार का शिकार मिलता है। शिकार की भिन्नता के विचार से यह प्रथम श्रेणी का शिकार है। इस शिकार में शिकारी को छोटे से छोटे छर्रों से लेकर, गिराफ़ और गोली तक चलाने का अवसर मिलता है। तराई और मध्य भारत के पहाड़ी जंगलों में शिकारी को गिराफ़ और गोली रखना एक प्रकार से अनिवार्य ही है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग्यारहवाँ अध्याय

विदेशी बतख़

हम यह पहले ही लिख आये हैं कि एक प्रकार के तालाबी पक्षी उत्तरी देशों से शरद ऋतु में यहाँ आ जाते हैं। अन्य यहीं के रहने वाले होते हैं। विदेशी तालाबी पक्षियों में दो प्रकार के बतख़ होते हैं। एक वे जो आवश्यकता पड़ने पर ही डुब्बी लगाते हैं, साधारणतया झील के उथले पानी में या पृथ्वी पर ही रहते हैं और वही पानी या कीचड़ में चारा चुनते हैं। दूसरे वे, जो प्रायः तीन चार फ़ीट या इससे भी अधिक गहरे पानी में रहते हैं, और वहीं डुब्बी लगा कर नीचे पृथ्वी पर घास या छोटी घोंघी आदि चुनते हैं। गहरे पानी में डुब्बी लगाने वाले पक्षी अधिकतर उड़ते समय ही मारने को मिलते हैं। ये चार प्रकार के होते हैं—कैंड़, बुडार, सेफुरी, और चुरवा। इन चारों प्रकार के पक्षियों का मांस खाने में बहुत अच्छा होता है। ऐसे पन डुब्बी पक्षियों को अँगरेज़ी में पोचर्ड (Pochard) कहते हैं।

राजहंस

बतख़ों के कुल में सबसे बड़ा और सुन्दर पक्षी, राज हंस होता है। यह शरद ऋतु के उत्तरार्ध में, नैपाल, उत्तरी पंजाब,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पश्चिमोत्तरीय सरहद्दी सूबे और सिन्ध में दिखलाई पड़ता है। यहाँ केवल श्वेत रंग के राजहंस आते हैं, काले रंग का राजहंस यहाँ नहीं आता। इन सबों के पैरों के पंजे खाल से जुटे रहते हैं। गर्दन विशेषतया लम्बी और बैठने के समय वह बड़े नाज़ से घूमी हुई होती हैं। सर छोटा, चोंच सुन्दर, और ऊपर की ओर मोटा तथा चौड़ा होता है, अन्दर दूसरी बतखों की भाँति दंदाने होते हैं। कहते हैं राज हंस पानी मिले दूध में से दूध तो पी लेता है पर जल त्याग देता है। यहाँ पर तीन प्रकार के जो राज हंस आते हैं उनके एक की चोंच पर सर के पास एक काली और गोल छोटी बतौरी सी होती है और उनकी चोंच और आँखों के बीच खाल के काले काले धब्बे रहते हैं। इस राजहंस को अँगरेज़ी में म्यूट स्वान (Mute Swan) कहते हैं। यह अपनी बतौरी और आँखों के पास खाल के काले धब्बों के कारण अन्य जाति के राजहंसों से भिन्न दिखलाई पड़ता है और सहज ही पहचाना जा सकता है। यह प्रायः ५ फ़ीट लम्बा होता है।

दूसरे प्रकार का राजहंस उपरोक्त राजहंस से बड़ा होता है। तौल में कोई २० या २२ पोंड तक का होता है। परों के फैलाने पर एक सिरे से दूसरे सिरे तक ७ फ़ीट ७ इंच से ७ फ़ीट १० इंच तक लम्बा होताहै। इसका रंग उपरोक्त राजहंस की भाँति श्वेत होता है, पर इसके चोंच पर काली बतौरी नहीं होती और न आँखों के पास काले धब्बे ही होते हैं। काली बतौरी के स्थान पर पीला रंग होता है; जो आधी चोंच तक चला जाता है। ये पञ्जाब तथा नैपाल में आते हैं। इसकी हिंदी में विशेष कोई संज्ञा नहीं है। अँगरेज़ी में इसे हूपर स्वान कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तीसरे प्रकार का राजहंस जो यहाँ आता है, सबसे छोटा होता है। इसका रंग उपरोक्त राजहंसों के रंग की भाँति ही होता है, केवल चोंच के रंग में भिन्नता होती है और वह भी बहुत अल्प रूप में। इसके चोंच पर पीलापन कुछ गहरा होता है, और काला चट्ठा बिलकुल आगे की ओर होता है। इस पक्षी को दूसरे किस्म के राजहंस से पहचानना कुछ सरल काम नहीं है। हिन्दी में इसकी कोई विशेष संज्ञा नहीं है। अँगरेज़ी में इसे बिविक्स स्वान (Bewicks Swan) कहते हैं। ये पञ्जाब, सिन्ध और पश्चिमोत्तर प्रान्तों में आते हैं।

राजहंस जब पानी पर तैरतें हैं तो बड़े भले लगते हैं। ये जब अच्छी ऊँचाई पर उड़ते हैं तो इनकी गति तीव्र रहती है किन्तु देखने में उतनी तीव्र नहीं मालूम पड़ती। कारण यह है कि राजहंस अपने फैले हुए डैनों को धीरे धीरे हिलाते हैं। जब ये उड़ने को ऊपर उठते हैं तो मन्द गति रहते हैं। उड़ते समय ये सदैव हवा के प्रतिकूल, अर्थात जिधर से हवा बह रही हो उसके विरुद्ध उड़ते हैं। स्वच्छ जलराशि पर तैरते हुये यदि इन्हें भय की कोई आशंका हुई तो सभी आकर एकत्रित हो जाते हैं और भय सूचक शब्द करते हैं। और तब पंख फैला कर उड़ जाते हैं। यदि इन पर फ़ायर करने का अवसर मिले तो सदा ही जिस ओर से वायु बह रही हो उसी ओर से इन पर जाना चाहिये। यदि इसके विपरीत दूसरी ओर से फ़ायर करने का प्रयत्न किया गया तो राजहंस हवा के प्रतिकूल उड़ जायगा और शिकारी को फ़ायर करने का अवसर ही नहीं मिलेगा। हवा के अनुकूल यदि शिकारी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाय तो, इन पर अवश्य फ़ायर हो जायगी क्योंकि हंस हवा के विरुद्ध उड़कर या तो शिकारी के सर पर से या उसके दाहने बाँये से उड़ेगें, और इस प्रकार शिकारी को फ़ायर करने का अच्छा अवसर मिल जायगा। ये अपने साथी को बहुत चाहते हैं। फ़ायर होने के बाद जब कोई राजहंस गिरता है तो उस झुँड के दूसरे पक्षी उस स्थान पर एक दो चक्कर अवश्य लगाते हैं। शिकारी को इस प्रकार दूसरे फ़ायर का अवसर मिलता है। यह पक्षी इतना सुन्दर और गम्भीर होता है कि, प्रत्येक शिकारी इसे मारकर अवश्य पश्चात्ताप करता होगा।

राजहंस का माँस खाने में अधिक स्वादिष्ट नहीं होता। नये पट्ठे का मांस पुराने से अच्छा होता है। आयुर्वेद में इसका मांस भारी, चिकना, ऊष्ण वीर्य, स्वर और वर्ण का हितकर, वात और रक्त पित्त को नाश करने वाला, धातु को पुष्ट करने वाला, बल और अग्नि को बढ़ाने वाला माना गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बारहवाँ अध्याय

सवन

राजहंस के बाद सबसे बड़ा तालाबी पक्षी सवन ही होता है। सवन को बत्तख़ भी कहते हैं। यह भी एक प्रकार का हंस है। अंगरेज़ी में इसे गुज़ (Goose) कहते हैं। यह बड़ा ही चतुर पक्षी है। बैठे हुए सवनों पर छर्रे की मार के भीतर पहुँचना अत्यन्त कठिन काम है। बिना किसी अच्छी आड़ के यह सम्भव नहीं है। ये आहट पाते ही उड़ जाते हैं। इनमें दो एक ऐसे भी होते हैं जो केवल पहरा देने का काम करते हैं। पहरा देने वाला पक्षी सतर्क होकर इधर उधर देखा करता है। वह बदला भी जाता है। यदि उसे तनिक भी सन्देह हुई तो वह आवाज़ करता है, सब चौकन्ने हो जाते हैं। "क़ क़ क़" की आवाज़ होती है और सब उड़ पड़ते हैं। आड़ से भी समीप पहुँचने में यदि कोई शब्द हुआ तो ये शीघ्र उड़ जाते हैं। ऊषा के प्रथम किरणों के निकलते २, तथा सन्ध्या समय ये झीलों के किनारे तथा खेतों में चुनते हुए देखे जाते हैं। उस समय फ़सल या किसी दूसरी आड़ से छिपकर, इनके समीप छर्रे के मार के अन्दर पहुँचा जा सकता है। कभी कभी लेटे लेटे और बैठे बैठे आगे की ओर बढ़ना पड़ता है। इस प्रकार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के शिकार को युवक तथा स्वस्थ शिकारी ही कर सकते हैं। बूढ़े तथा कमज़ोर शिकारियों के लिये यह शिकार नहीं हैं। दिन निकल आने पर यदि अच्छे प्रकार छिपने का साधन नहीं हुआ तो इन पर छर्रे की मार के अन्दर पहुँचना अत्यन्त कठिन है यदि सबेरे कुहिरा हुआ तो शिकारी इन पर छर्रे के मार के अन्दर पहुँचने में अनायास ही सफल हो जाते हैं। सवन रात में यदि अच्छा कुहिरा हुआ तो दिन में भी, बहुत कम सतर्क रहता है। इस समय इसका मारना सम्भव हो सकता है।

जब ये बाहर खेतों में बैठ हों, और इनके पास छिपकर जाने के लिये आड़ न हो, तब इनके समीप पहुँचने के लिये शिकारी को हवा के प्रतिकूल होकर न चलना चाहिये। ऐसा करने से वह सदैव असफल होगा। सवन कभी उसे छर्रे की मार के अन्दर नहीं आने देंगे। सवन हमेशा वायु के प्रतिकूल उड़ेंगे अर्थात् वायु को सामने करके उड़ेंगे और यदि शिकारी वायु के अनुकूल नहीं जाता है तो वे शिकारी से दूर उड़ जायेंगे और उसे फ़ायर का अवसर ही नहीं मिलेगा। यह नियम है कि सवन तथा अन्य बत्तख़ हवा को सामने करके उड़ते हैं। इनके समीप पहुँचने के लिये सब से अच्छा तो यह है कि हवा की चाल को दाहने या बाँये करके तब शिकारी इन पर जाय। यदि हवा पूरब से पश्चिम को चल रही हो शिकारी सवनों को दक्खिन करके उन पर उत्तर से चले, या उन्हें उत्तर करके स्वयं दक्खिन से उन पर जाय। इस प्रकार सवनों पर जाने से ज्योंही वे हवा को सामने करके उड़ेंगे, शिकारी को उन पर फ़ायर करने का अवसर मिल जायगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आकाश में उड़ते हुए भी जहाँ इन्हें शिकारी के होने का सन्देह हो जाता है, उस स्थान के इधर उधर से निकल जाते हैं। अतः सबसे उत्तम यही है कि सवनों को आते देखते ही शिकारी को स्थिर होकर खड़े हो जाना चाहिये वह बिलकुल हिले डुले नहीं। ऐसा करने से सवन अक्सर मार के अन्दर आ जाते हैं। जब वे दूर ही से आते दीख पड़ें तो कभी भी झुक कर छिपने का प्रयत्न न करे। ऐसा करने से वे सशंक हो जाते हैं और शिकारी से दूर जा निकलते हैं। स्थिर खड़ा हुआ शिकारी जब तक यह न जान ले कि सबने मार के अन्दर आ गये हैं तब तक कभी भी बन्दूक को कन्धे पर न ले जाय। यदि पक्षी मार के अन्दर आ जाँय तो शीघ्रता से बन्दूक कन्धे पर ले जाकर फ़ायर करे। इस प्रकार जब सवन बिलकुल सर के ऊपर से होकर निकलें तब उनकी छाती के आगे निशाना लेना चाहिये और यदि इधर उधर से निकलें तो उनके सर के सामने निशाना लिया जाय।

यह पक्षी दिन किसी बड़ी झील के बीच में व्यतीत करता है पर प्रातःकाल तथा सन्ध्या के समय झील के किनारे तथा खेतों में चुगता है। यह घास और फ़सल चुगता है। सिंघाड़ा बड़े शौक़ से खाता है। झील से दूर खेतों में जब ये फ़सल आदि चुगने जाते हैं, तो समीप पहुँच कर बहुत नीचे उड़ते हैं। अधिकतर ये एक ही रास्ते से आते जाते हैं, इसलिये यदि शिकारी ठीक स्थान पर पहले ही से जाकर छिपा रहे तो उड़ते में अच्छी फ़ायर की जा सकती है।

यहाँ पर छः प्रकार के सवन आते हैं। सबसे बड़ा भूरा या सैरा सवन होता है। अँगरेज़ी में इसे ग्रे लैग गूज़ (Grey lag

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

goose) कहते हैं यह चोंच से दुम तक १ गज़ लम्बा होता है। तौल में यह ४½ सेर से ५ सेर तक का होता है रंग भूरा, सिर्फ दुम के पास पेट की ओर कुछ सफ़ेदी लिये हुये होता है। चोंच, पैर, और पञ्जे माँस के रंग के होते हैं। नाखून सफ़ेद होते हैं। मरने के बाद चोंच और पैरों का रंग बदल जाता है और उनकी आकर्षक सुन्दरता जाती रहती है। मरने पर चोंच और पैर पीले पड़ जाते हैं। चोंच दृढ़ ऊपर की ओर मोटी होती है। इसके अन्दर दंदाने होते हैं। चोंच से यह घास को क़ैंची की भाँति काटता है। यह सिंघाड़े को बीच से काट सकता है। इसके नर तथा मादा एक ही प्रकार के देख पड़ते हैं प्रत्यक्ष कोई भेद नहीं दिखलाई पड़ता ये झुन्डों में रहते हैं। कभी कभी तो सैकड़ों का झुन्ड रहता है। उड़ते समय ये दो पंक्तियों का एक कोंण बनाते हैं। इस कोंण की एक लाइन छोटी और दूसरी बड़ी होती है। इस कोंण के आगे का सवन जिस ओर जाता है उधर ही बाक़ी सब जाते हैं। आगे का सवन अधिकतर सबसे बड़ा और पुराना होता है। कभी कभी इस आगे वाले सवन का स्थान दूसरा आकर ले लेता है। उड़ते समय इनके पंख सदा चलते ही रहते हैं, और नीचे उतरने के समय को छोड़ कर कभी स्थिर नहीं होते। इन नभचरों की कोंण बनाती हुई पंक्तियाँ अक्तूबर के अन्त से मार्च के अन्त तक उत्तरी भारत में प्रायः देख पड़ती हैं। इन्हीं दिनों ये यहाँ रहते हैं। यह पक्षी शिशिर के प्रारम्भ में यहाँ आता है और बसन्त के आगम में यहाँ से चला जाता है। ये गर्मियों में दक्षिणी साइबेरिया, उत्तरी योरुप

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और मध्य एशिया में जाकर अन्डे देते हैं। पर हेमन्त काल (जाड़े की ऋतु) में ये दक्षिणी योरूप, दक्षिणी पश्चिमी एशिया, उत्तरी भारत और अफ्रीक़ा को चले जाते हैं। भारतवर्ष में ये सिन्ध, पंजाब, और संयुक्तप्रान्त से, बिहार बंगाल और आसाम तक, इस समय में पाये जाते हैं। पहले तीन सूबों में ये जितनी अधिकता से मिलते हैं उतनी अधिकता से बिहार बंगाल और आसाम में नहीं मिलते। दक्षिण में ये नर्बदा नदी के समीप तक देखे गये हैं। पर नर्बदा के दक्षिण ये बहुत ही कम मिलते हैं।

ये अधिकतर घास और फ़सल ही खाते हैं, अतः इनके माँस में विसाँइध नहीं होती। माँस अच्छा और स्वादिष्ट होता है। इसके माँस का गुण हंस के माँस के समान ही होता है। पुराने से नये का माँस अच्छा होता है। देर में पकता है कोई दो घंटे में माँस अच्छे प्रकार से गलता है।

दूसरे प्रकार का सवन सफ़ेद सवन कहलाता है। इसको चीना सवन भी कहते हैं। अंगरेज इसको बार्ड हेडड गूज (Barred Headed Goose) कहते हैं। इसका सिर श्वेत रंग का होता है। सिर से नीचे गर्दन के दाहने और बायें, दोनो ओर एक श्वेत धारी गर्दन के नीचे तक खिंची रहती है। गले के नीचे कोई १½ इञ्च तक बिलकुल श्वेत रंग होता है। गर्दन के आगे तथा पीछे के पर गहरे सैरे रंग के होते हैं। पीछे की यह सैरे रंग की धारी सिर के निकट पहुँचकर दोनो ओर को दो कोने निकालती है। इन कोनों और धारी का ऊपरी भाग काला देख पड़ता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रायः १/२ इञ्च के बाद एक मोटी काली धारी पीछे की ओर एक आँख से दूसरी आँख तक होती है, जो इस पक्षी को बहुत ही सुन्दर बनाती है। गर्दन के अतिरिक्त और सब शरीर हल्के सैरे रंग का होता है और उस पर कहीं कहीं मछली के बड़े सेल्हरों की सी धारियाँ देख पड़ती हैं। पेट से दुम तक के पखने सफ़ेद पर मैले होते हैं। बाहर की ओर पैरों के निकट के पखने गहरे भूरे रंग के होते हैं और उन पर सेल्हरी धारियाँ दूर से भली भांति देख पड़ती हैं। दोनो डैने हल्के काले रंग के होते हैं। अतः जब यह पक्षी पंखों को फैलाता है तब एक काली पटरी बन जाती है। बैठने पर उपरोक्त काले पखने दुम के ऊपर देख पड़ते हैं। पंखों के बड़े पर, जब यह पक्षी बैठता है तब दुम से आगे निकले होते हैं। चोंच पीले रंग की होती है, परन्तु उसके आगे सिरे पर बीच में एक काला बिन्दु होता है। पैर नारंगी रंग के होते है। इसके नर और मादा दोनो एक ही भाँति के होते हैं। साल भर से कम उम्र के बच्चों के गर्दन पर उपरोक्त सैरे रंग की धारियाँ नहीं होतीं।

सफ़ेद सवन सैरे सवन से छोटा होता है यह चोंच से दुम तक दो फ़ीट छः इञ्च लम्बा होता है। पंख फैलाने पर एक पंख के सिरे से दूसरे पंख के सिरे तक पांच फ़ीट लम्बा होता है। ये यहां पर बहुत बड़ी संख्या में आते हैं। दिन में यह बड़ी झीलों के बीच, जहाँ घास नहीं होती बैठता है। ये यहाँ अक्तूबर के प्रारम्भ में आ जाते हैं और मार्च के अन्त में या अप्रैल के प्रारम्भ में यहाँ से वापस जाते हैं। ये उत्तरीय तिब्बत इत्यादि देशों में अण्डे देते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हैं। इसका स्वर सैरे सवन की भाँति कड़ा और तीव्र नहीं होता और बोल से भी यह पहचान लिया जाता है कि सफ़ेद सवन है। दक्षिण देशों की ओर यह सैरे सवन से अधिक आगे बढ़ जाता है। इसका भोजन वही है जो सैरे सवन का है। इसका मांस स्वादिष्ट और गुणों में उसी प्रकार का होता है। यह कल-बुत्तियों के जाल तथा फन्दे में फांसा जा सकता है, परंतु सैरा सवन इतना होशियार होता है कि वह फन्दों में कभी नहीं फंसता।

चार प्रकार के छोटे सवन यहाँ और आते हैं। इनमें से एक तो रंग आदि में बिलकुल सैरे सवन के समान ही होता है, परन्तु क़द में छोटा होता है। चोंच, पञ्जे आदि भी उसी प्रकार के होते हैं। इसके पंख सिकुड़ने पर दुम तक पहुँचते हैं और किसी किसी के उससे भी आगे निकल जाते हैं। यह चोंच से दुम तक दो फ़ीट के लगभग लम्बा होता है और तौल में ढ़ाई सेर का होता है। जो जवान होता है उसको चोंच के पीछे मत्थे पर एक ओर से दूसरी ओर तक एक श्वेत धारी होती है। इसी धारी के कारण इसको अंगरेज़ ह्वाइट फ्रान्टेड गूज (White Fronted Goose) कहते हैं। चोंच सैरे सवन की भाँति होती है और उसी तरह मरने के बाद पीली पड़ जाती है। पैर नारंगी रंग के होते हैं। नाखून सैरे सवन की भाँति श्वेत होते हैं। इसे सैरा चीना सवन कहना ठीक होगा। इसका हिन्दी में विशेष कोई नाम नहीं है। चौथे प्रकार का सवन चोंच से दुम तक कोई एक फुट ९ इञ्च लम्बा होता है। यह भी उपरोक्त सैरा चीना सवन की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भाँति होता है। इसके भी मत्थे पर श्वेत पटरी होती है, पर पखनों का रंग अधिक गहरा होता है, और आँखों के चारों ओर पीली २ खाल प्रत्यक्ष देख पड़ती है।

पाँचवाँ सवन वह चीना सवन है जिसके पैर तो मांस के रंग के होते हैं परन्तु चोंच काले रंग की होती है। बीच में एक गुलाब धब्बा होता है। पखने भूरे रंग के, छाती और पेट में कुछ सफ़ेदी लिये हुए होते हैं। इसे अंगरेज़ी में पिंक फूटेड गूज़ (Pink Footed Goose) कहते हैं।

छठे प्रकार का सवन भी छोटा होता है इसकी चोंच नारंगी रंग की होती है। उसके आगे का सिरा काला और चोंच का ऊपरी भाग अर्थात् सर से मिला हुआ भाग काला होता है। पैर नारंगी रंग के होते हैं। पीठ के पखने सैरे सवन से मिलते जुलते हल्के सैरे रंग के होते हैं। छाती और पेट का अग्रभाग मैले रंग का सफ़ेदी लिये होता है। पीछे का भाग दुम तक बिलकुल श्वेत होता है। बैठने पर पंखों के पर दुम से आगे निकले देख पड़ते हैं। यह चोंच से दुम तक २½ फ़ीट लम्बा होता है। इसको चीना सवन कहते हैं। अंगरेज़ी में इसे बीन गूज़ (Bean Goose) कहते हैं।

इन सब सवनों का मांस सैरे सवन की भाँति होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तेरहवाँ अध्याय

विदेशी पन्डुब्बे

पहले लिखा जा चुका है कि वे ही पत्ती बतख कहलाते हैं जिनकी चोंच चिपटी और अन्दर दंदानेदार होती हैं और पैरों के पञ्जे खाल से जुटे होते हैं। जो विदेशी बतख यहाँ जाड़े के प्रारम्भ आते हैं और बसन्तागम पर लौट जाते हैं इनमें कुछ पनडुब्बे होते हैं जो डुब्बी लगाकर पानी के नीचे की पृथ्वी पर घास, घोंघियाँ तथा कीड़े चुनते हैं; अन्य वे हैं जो कीचड़ या उथले पानी में झील के किनारे चुगते हैं। ये जल में डुब्बी नहीं लगाते हैं। केवल इतने ही पानी में चुगते जहाँ पर पानी के ऊपर से ही गर्दन को बढ़ाकर और दुम को ऊपर उठाकर पृथ्वी मिल जाय और चोच से चारा ढूंढ लिया जाय। आवश्यकता पड़ने पर सभी बतख़ डुब्बी लगा लेते हैं परन्तु पन्डुब्बों का तो उद्यम ही डुब्बी लगाना है। हम पहले इन पन्डुब्बों के विषय में ही लिखते हैं। दूसरे बतख़ों के बारे में बाद को प्रकाश डाला जायगा।

ग्यारहवें अध्याय में यह लिखा जा चुका है कि सभी पन्डुब्बे जहाँ पर ४ फ़ीट या इससे अधिक गहरा पानी होता है, अधिकतर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वहीं डुब्बी लगाकर जल के अन्दर पृथ्वी पर चुनते हैं। वे जल के भीतर के पौधे, घास की जड़े तथा पत्तियाँ, तिन्नी तथा दूसरे प्रकार के धान इत्यादि बड़े चाव से खाते हैं। इनके पैर के ऊपर के छोटे पंजों की बनावट दूसरे बतखों से भिन्न होती है। इसके छोटे पंजे में जो कोचियाँ होती हैं वे दूसरे बतखों के पंजों में नहीं होती हैं। यही पंजा पन्डुब्बों पानी के भीतर देर तक तैरने तथा चलने में विशेष मदद देता है। यहाँ पर चार प्रकार के पन्डुब्बे आते हैं। उन्हें बुड़ार, कैंड या लालसर, सेकुरी और चुरवा या छोटा लालसर कहते हैं। पासो तथा लोध इत्यादि नीची जातियाँ इन पक्षियों का शिकार, रस्सा में घोड़े की दुम के फ़न्दे लगाकर बड़ी आसानी से कर लेती हैं। उपरोक्त फन्दे लगी रस्सियाँ, लम्बे खूंटों के सहारे जल के अन्दर डाल दी जातीं हैं और उन पर धान डाल दिया जाता है। ये रस्सियाँ ४, फ़ीट या इससे भी अधिक गहरे पानी में डाली जाती हैं। जब ये पन्डुब्बे नीचे जाकर धान चुनते हैं, तब इनका सर या पंजा उन्हीं फ़न्दों में फ़ंस जाता है और ये वहीं मृत्यु को प्राप्त होते हैं। सवेरे रस्सी खींच कर मरे हुए पनडुब्बे निकाल लिये जाते हैं। इन फन्दों में ये ही चार प्रकार के पनडुब्बे तथा टिकुई फंसती हैं। इनमें सीकपर, थोथरा और चैती आदि किनारे और उथले पानी में चुगने वाली मुर्गाबियां कभी नहीं फंसतीं। ये कलबुत्तियों के जाल में फंसती हैं। बुड़ार या कैंड आदि पन्डुब्बे जालों में नहीं आते क्योंकि ये ४ फ़ीट से कम पानी में चुगते ही नहीं। इन सब मुर्गाबियों का मांस चिकना, मधुर, शीतल,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारी, पित्त को हरने वाला वात और कफ को बढ़ाने वाला और शुक्र और बल वर्धक होता है।

बुड़ार

यह चोंच के सिरे से दुम के अन्त तक १८३ इञ्च लम्बी होती है। अँगरेज़ी में इसे पोचर्ड (Pochard) कहते हैं। यह अक्तूबर के अन्त या नवम्बर के प्रारम्भ में आ जाती है और मार्च में यहाँ से लौट जाती है। ये उत्तरी भारत में अधिक संख्या में पाई जाती हैं। दक्षिण में अधिक नहीं जाती। मैसूर के समीप तो शायद ही देख पड़ें। बड़ी बड़ी झीलों या तालाबों के बीच में जहाँ रैंद तथा घास नहीं होती, ये अधिक संख्या में बैठती हैं। ये पानी पर अपनी गर्दन सिकोड़ कर बैठती हैं। यह एक तेज़ उड़ने वाली चिड़िया है। थोड़ी दूर उड़ने पर इसकी गति बड़ी तीव्र हो जाती है। इसका नर तथा मादा भिन्न प्रकार का होता है। नर अधिक सुन्दर होता है। सर तथा गर्दन कत्थई, छाती और दुम का सिरा काला, पेट श्वेत, पीठ और पंखों के ऊपरी पर सैरे पर कबरे रंग के होते हैं। ऊपर पतली और टेढ़ी टेढ़ी काली लकीरें होती हैं, जो देखने में बड़ी सुन्दर लगतीं हैं। मादा का सर तथा गर्दन थोड़ा कत्थई लिये मैले रंग का होता है। छाती और पेट तथा दुम का रंग मैला होता है। ये पक्षी पानी के भीतर के पौधे, उनकी जड़ें, और छोटी छोटी घोंघी आदि खाते हैं। धान के पीछे तो ये अपने प्राण तक खोते हैं। फन्दों में मरे हुये बुड़ार तथा सेफुरी आदि पक्षियों की गर्दन तथा पेट में बहुत सा धान निकलता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसका मांस और सब पन्डुब्बों के मांस से अच्छा होता है। किन्तु ताल के किनारे रहने वाले मनुष्य चुखा के मांस को सर्वोत्तम मानते हैं। बुड़ार किनारे पर उड़ते समय ही मार मिलता है।

कैंड या लालसर

कैंड को लालसर भी कहते हैं। कहीं कहीं इसको लाल चोंच भी कहते हैं। नर मादा से सुन्दर होता है। नर के सर पर परों की कलङ्गी होती है जो बाहर को निकली हुई, कुछ नीचे की ओर झुकी रहती है। सर तथा गर्दन हल्के कत्थई रंग के होते हैं। चोंच गहरे गुलाबी रंग की होती है और पैर लाल होते हैं। पंङ्खों की खाल पर काले धब्बे हाते हैं। पीठ तथा ऊपर के दोनों पंख खैरे रंग के होते हैं। पेट तथा छाती काले रंग की होती है। पेट के दोनों ओर श्वेत वर्ण के धब्बे होते हैं और दोनों पंखों में श्वेत पट्टी होती है। मादा का रंग नर से हल्का और नर की भाँति सुन्दर नहीं होता। नीचे कुछ सफ़ेदी होती है, चोंच काली होती है और उस पर लाल धब्बा होता है। पंखों की सफ़ेदी नर के पंखों के समान होती है। कैंड झील तथा तालाबों में झुन्डों में पाये जाते हैं। नदियों के किनारे भी देखने में आते हैं। ये उत्तरी भारत में, जाड़े भर, बड़ी संख्या में रहते हैं। नवम्बर के प्रारम्भ में आ जाते हैं और मार्च में लौट जाते हैं। कभी कभी दक्षिण में भी दिखलाई पड़ते हैं।

अँगरेज़ शिकारी कैंड़ को मारने के लिये सदा उत्सुक रहते हैं। अँगरेज़ी में इन्हें रेड क्रेस्टेड पोचर्ड (Red Crested Pochard)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहते हैं। अँगरेज़ इसका मांस सब पन्डुब्बों से अच्छा मानते हैं। पर भारतीय शिकारी इसका मांस, चुरवा और बुड़ार से बढ़कर नहीं मानते, और न वास्तव में वह है ही। यह एक होशियार और तेज़ उड़ने वाला पक्षी है। बैठे पर कम मार मिलता है। धान बड़े प्रेम से खाता है। इसका भोजन वही है जो बुड़ार का है।

सेफ़ुरी

सेफ़ुरी को डुबारू भी कहते हैं। रंग काला पर पेट सफ़ेदी लिये होता है। सर चमकीला काले रंग का होता है। आँखें पीले रंग की होती हैं और बड़ी सुन्दर लगती हैं। सर पर नीचे को लटकती हुई कलङ्गी होती है। अँगरेज़ी में इसे टफ्टेड पोचार्ड या टफ्टेड डक (Tufted Pochard or Tufted Duck) कहते हैं। इसका नर विशेष तौर पर काला होता है और उसकी कलङ्गी बड़ी होती है। पेट बिलकुल श्वेत होता है। मादा उतनी काली नहीं होती जितना कि नर। उसकी चोटी छोटी और पेट की सफ़ेदी मैले रंग की होती है। सेफ़ुरी बड़ी झीलों तथा तालों में गहरे पानी पर बैठती है। ये अधिक संख्या में यहाँ नहीं आतीं, और न बड़े शिकार में अधिक संख्या में मार ही मिलती हैं। इसका भोजन वही है जो बुड़ार का। मांस स्वादिष्ट, पर बादी होता है।

चुरवा

चुरवा को कहीं कहीं कर्चिया भी कहते हैं। यह पक्षी यहां सितम्बर के उत्तरार्ध या अक्टूबर के पूर्वाध में आता है और मार्च

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के अन्त तक चला जाता है। झील तथा तालाबों में रहता है। ग्रीष्म में यह उत्तर की ओर लौट जाता है। यह उत्तरी काश्मीर तथा तिब्बत की झीलों के किनारे लम्बी घासों या नरकुल में घोंसले बना कर जून के महीने में अण्ढे देता है। जाड़े में यह उत्तरी भारतवर्ष के सभी झीलों तथा तालाबों में पाया जाता है, पर दक्खिन में मद्रास के समीप नहीं दिखाई पड़ता। जिन जलाशयों में घास या रैंद इत्यादि हों उन्हें यह बहुत पसन्द करता है। घास वाली झीलों में केवल पंख में लगे हुये छर्रे से घायल चुरवा का मिलना अत्यन्त कठिन है।

इसके नर का सर तथा गर्दन गहरे कत्थई रंग का होता है। ऊपर का पंख, दुम तथा पीठ गहरे भूरे रंग की होती है। पेट श्वेत होता है पंखों में उड़ने पर श्वेत पटरी पूर्ण रूप से देख पड़ती है पर बैठे पर नहीं। आँख श्वेत रंग की होती है अतएव इसे ह्वाइट आईड पोचर्ड (White eyed Pochard) कहते हैं। मादा की आँख नर की भाँति होती है परन्तु उसका रंग नर से हल्का होता है। पेट मैले रंग का श्वेत वर्ण होता है, यह नर की भाँति श्वेत वर्ण का नहीं होता। चुरवा को कोई कोई शिकारी गलती से "छोटा लालसर" भी कहते हैं। चुरवा छोटा लालसर नहीं है। छोटा लालसर वास्तव में वह बतख है जिसको अँगरेज़ीमें विजन (Widgen) कहते हैं। उसका वर्णन आगे किया जायगा। चुरवा का भोजन वही है जो बुड़ार सेक़ुरी का है। हम इसका माँस स्वादिष्ट समझते हैं पर अँगरेज़ इसका मांस स्वादिष्ट नहीं मानते। इसका माँस और मुर्गावियों की अपेक्षा कम बादी होता है

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक प्रकार का चुरवा पूर्वी बंगाल और आसाम आदि पूर्वीय देशों में आता है, परन्तु यह उपरोक्त चुरवों की भाँति अधिक संख्या में नहीं आता। इसमें केवल भेद इतना ही होता है कि इसका सर कुछ हरी चमक लिये हुए कृष्ण वर्ण का होता है। यह थोड़ा बड़ा भी होता है। इसकी मादीन की चोंच और आँख के बीच में खैरे रंग का धब्बा दोनों ओर होता है और सर में नर की भाँति हरी रंगत नहीं होती। यह पूर्वी सायबेरिया और चीन में यहाँ से लौट कर गर्मी में अंड़े देता है। इसका भोजन और मांस उपरोक्त चुरवा की भाँति होता है। अँगरेज़ इसको ईस्टर्न ह्वाइट आईड पोचर्ड (Eastern White eyed Pochard) कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चौदहवाँ अध्याय

दूसरी विदेशी मुर्ग़ाबियां

यह वह बतख़ है जो झीलों के किनारे इतने पानी में चुगते हैं, जितने में ऊपर से ही दुम ऊपर को उठा कर और गर्दन आगे को बढ़ा कर पृथ्वी मिल जाय। यह कभी कभी किनारे के कीचड़ में भी चुनते हैं। इनमें सबसे बड़ा चकवा (चक्रवाक) होता है। मुसलमान इसको सुरख़ाब और अँगरेज़ ब्राह्मणी डक (Brahmani Duck) कहते हैं। यह देखने में बड़ा सुन्दर होता है। यह हिन्दुओं के लिये भक्ष्य नहीं माना जाता है अतः हिन्दू शिकारी इसे नहीं मारते जलाशय या नदी के किनारे रहने वाले सभी लोग इसे भली भाँति पहचानते हैं। यह कत्थई रंग का होता है। सर तथा गर्दन कुछ पीलापन लिये श्वेतवर्ण का होता है। दोनों पंख श्वेत और कुछ हरापन लिये काले होते हैं। दुम के पखने भी काले होते हैं। चोच और पैर काले रंग के होते हैं। यह चोंच से दुम के सिरे तक दो फ़ीट और दो इञ्च लम्बा होता है।

यह झील तथा नदियों के किनारे अधिकतर जाड़ों में पाया जाता है। कभी कभी छोटे झुण्डों में भी देख पड़ता है। इसका

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दम्पति रात में एक साथ नहीं रहता है। एक यहाँ तो दूसरा कुछ दूर पर रहेगा। यह उथले पानी में पैरों से पृथ्वी पर चल कर ही चुगता है। कभी कभी आगे को गर्दन बढ़ा कर और चोंच को पानी के अन्दर डाल कर दौड़ता है। यह बहुत ही होशियार पक्षी है। एक जगह पर बैठे हुए बहुत से पक्षियों में से यह सर्व प्रथम शिकारी को पहचान लेता है और सतर्क हो जाता है। शिकारी के छर्रे की मार के अन्दर पहुँचने के पहले ही यह शब्द करके उड़ जाता है। और बाद को अन्य पक्षी भी भय वश भाग जाते हैं। शिकारी को हताश होना पड़ता है। जैसा हम लिख आये हैं, हिन्दू तो इसे मारते ही नहीं, मुसल्मान और अँगरेज़ भी इसे मारना पसन्द नहीं करते। क्योंकि इसका मांस स्वादिष्ट नहीं होता। परन्तु फिर भी यह इतना चौकन्ना रहता है कि मानो शिकारी इसी की खोज में घूम रहे हों। यह यहाँ अक्तूबर में आ जाता है और अप्रैल के महीने में लौट जाता है। उत्तरीय देशों में जाकर यह अंड़े देता है।

नीलसर

सींकपर को छोड़कर इसका नर सुन्दरता में अद्वितीय है। यह चोंच के सिरे से दुम के सिरे तक दो फ़ीट लम्बा होता है। इसका सर व गर्दन चमकीले नीले रंग का होता है और नीचे कंठ में श्वेत गुलूबंद होता है। दोनों पंखों में नीले रंग के पट्टे होते हैं और उनके किनारे श्वेत होते हैं जो इस पक्षी के सहज सौन्दर्य को बढ़ाते हैं। पूछ काले रंग की होती है, बाक़ी शरीर धारियोंदार भूरे रंग का होता है। चोंच हरियाली लिये

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हुए भूरे रंग की होती है और पैर लाल रंग के होते हैं। मादा का रंग नर से फीका होता है और उसकी गर्दन में श्वेत गुलूबंद नहीं होता। उसकी चोंच नारंगी रंग की होती है। आगे काली धारी और ऊपर काला धब्बा होता है।

नील सर यहाँ पर अधिक संख्या में नहीं आते। ये विशेष कर पानी में उगी घास को खाते हैं। साथ ही धान, छोटी छोटी घोंघियां, और कीड़े भी खाते हैं। काटने पर कभी कभी इसके पेट में घोंघियां मिलती हैं। इसका मांस स्वादिष्ट होता है, परन्तु सीकपर और चती के मांस की बराबरी नहीं कर सकता। यह पक्षी भारत में अक्टूबर के अन्त और नवम्बर के प्रारम्भ तक आ जाता है, और अप्रैल के प्रारम्भ में लौट जाता है। काश्मीर तिब्बत आदि उत्तरीय देशों मे जाकर अण्डे देता है। इसकी मादा आठ अण्डे से लेकर अट्ठारह अण्डे तक देती है। यह अपना घोंसला पानी के किनारे पृथ्वी पर जहाँ ऊपर से घास इत्यादि लटकती हो, बनाती है। जब मादा अण्ढे पर बैठती है, तब इतनी ढीठ हो जाती है कि जब तक कोई अत्यन्त समीप न जाय, न उड़ेगी। कभी कभी तो वह बिलकुल ही नहीं उड़ती और हाथ से पकड़ ली जाती है। नील सर को अँगरेज़ी में मलार्ड (Mallard) कहते है। इसके मांस का गुण दूसरी मुर्गाबियों की भाँति होता है।

पुछारो या सींकपर

यह पुछारा या सींकपर दो नामों से प्रसिद्ध है। ताल के किनारे रहने वाले इसको 'उखार' भी कहते हैं। इसकी पूंछ के तीन पखने, एक में मिले बाहर की ओर निकले रहते हैं। इसी से इसको

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पुछाराया सींकपर कहते हैं। अँगरेज़ी में इसे पिनटेल (Pin Tail) कहते हैं। इसका नर सुन्दरता में नीलसर से बढ़कर होता है। आकार बहुत ही सुन्दर और सुडौल देख पड़ता है। दोनों आँखों से थोड़ा हटकर गर्दन के दोनों ओर श्वेत वर्ण की पटरियां नीचे को जाती हैं। ये दोनों पटरियां नीचे की ओर चौड़ी होती जाती हैं और नीचे जाकर छाती की उज्ज्वलता में मिल जाती हैं। सर, हल्का गर्दन के ऊपर का भाग, कंधे पीठ दोनों बग़ल और पंखों के ऊपर का भाग कबरे रंग का होता है। इस पर काले रंग की महीन अनेकों धारियाँ होती हैं। पूँछ के अधिक तर पखने काले रंग के होते हैं। दोनों पंखों पर पतली और चौड़ी चार धारियाँ देख पड़ती हैं। पहली धारी भूरे रंग की चौड़ी होती है। इस रंग में पेंसिली धारियां होती हैं। दूसरी उससे कुछ गहरे रंग की होती हैं। उसके बाद चौड़ी काली धारी होती है और अन्त में सफ़ेद रंग की छोटी पटरी होती है। पैर काही रंग के होते हैं और चोंच काही और आगे काले रंग की होती है। इसकी मादा इतनी सुन्दर नहीं होती। उसके चोंच तथा पैर नर के समान होते हैं परन्तु पंखों का रंग भूरा और कुछ कुछ तीतर के रंग से मिलता है। मादा के पंखों पर नर के पंखों के समान सुन्दर पटरियाँ नहीं होतीं। वे भूरी और श्वेत होती हैं। यह पक्षी २६ या २७ इञ्च लम्बा होता है।

यहाँ पर पुछारा बहुत बड़ी संख्या में आते हैं। ये नवम्बर में यहाँ आ जाते हैं और मार्च के अन्त तथा अप्रैल के प्रारम्भ तक यहाँ से लौट जाते हैं। हमने मध्य अप्रैल में भी सीकपर का

CC-0. Agamnigam Digital Preseyation Foundation, Chandigarh

शिकार किया है। ये बड़ी बड़ी झीलों में जहाँ रैंद तथा घास अधिक होती है बड़ी संख्या में बैठते हैं। जब यह पानी पर बैठता है तो इसकी गर्दन बड़े नाज़ से घूमी हुई होती है और पूंछ ऊपर की ओर उठी रहती है। इस प्रकार स्वच्छ जलराशि पर तैरते हुए ये बड़े ही भले और सुन्दर लगते हैं। यह अपने चुगने के स्थान पर सन्ध्या को जाता है और वहाँ रात भर चुगता है। यह घास धान, छोटी छोटी घोंघियाँ और कीड़े खाता है इसका मांस स्वादिष्ट होता है; कुछ तो इसका मांस सब मुर्ग़ाबियों से बढ़कर मानते हैं। पर वास्तव में इसका मांस चुरवा, बुड़ार से बढ़कर नहीं होता। अँगरेज़ इसका मांस टील के मांस से बढ़ कर नहीं मानते बल्कि स्वाद में उसके बराबर मानते हैं। शिशिर काल में यह पक्षी दक्षिणी योरुप तथा एशिया में फैला रहता है और ग्रीष्म ऋतु में साइबेरिया में लौटकर अँडे देता है।

थोथरा

थोथरा को कहीं कहीं "तिदारी" भी कहते हैं। अँगरेज़ी में इसे "शाम्लर" (Shoveller) कहते हैं। इसकी चोंच बड़ी होती है अतः वह दूर ही से पहचाना जा सकता है। किसी दूसरे मुर्ग़ाबी की ऐसी चोंच होती ही नहीं। यह आगे को चौड़ी और पीछे की ओर पतली होती है। चोंच के भीतर दन्दाने बड़े, और तेज़ होते हैं अतः थोथरा को पानी के ऊपर ही खाने को मिल जाता है और उसे सीकपर और चैती आदि की भाँति सर को पानी के भीतर डालकर चारा ढूंढने की जरूरत नहीं पड़ती। यह मिलाँ और सीकपर आदि बतख़ों के साथ चुगता है और जब वे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पानी में सर डालकर पृथ्वी पर चोंच से अपना चारा टटोलते हैं, तब टटोलने के कारण इस पक्षी को ऊपर ही चारा मिल जाता है। उस समय थोथरा पानी पर सदा एक वृत्त में घूमता दीख पड़ता है। यह पक्षी कभी कभी गाँव के भीतर के छोटे छोटे गड्ढों में भी आ जाता है।

इसकी चोंच काले रंग की होती है, पैर इंगुरी रंग के होते हैं। नर का सर तथा गर्दन चमकीले गहरे हरे रंग के होते हैं। छाती मैले श्वेत रंग की, पीठ खैरे रंग की और पूँछ काले रंग की पर मोर की हरियाली लिये हुए होती है। नीचे का भाग लाल रंग का होता है। पंखों पर चारों ओर श्वेत गोट से घिरे हुए चमकीले हरे चट्ठे होते हैं। इसकी मादा खैरे रंग की होती है। उसके पैर और चोंच नर की भाँति होते हैं। आँखें पीले रंग की होती हैं। पंख भूरे तथा नीले रंग के होते हैं। थोथरा यहाँ अक्टूबर में आ जाता है और अप्रैल के अन्त तक रहता है। ये बहुत कम सतर्क रहते हैं। शिकारी इन पर मार के अन्दर सुगमता से पहुँच सकता है। इसका मांस सींकपर की भाँति स्वादिष्ट नहीं होता।

मिलाँ

मिलां उत्तरी भारत के सभी झीलों तथा तालों में पाया जाता है। यह तेज़ उड़ने वाला पक्षी है। यह छोटे छोटे झुण्डों में अन्य बतखों के साथ रहता है। सींकपर की भाँति यह भी अधिकतर रात में चारा चुगता है। दिन को यह किसी बड़ी झील के बीच

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में बैठा आराम किया करता है। यह नवम्बर में यहाँ आ जाता है, और मार्च में लौटकर साइबेरिया में अण्डे देता है। यह पृथ्वी पर खूब चल लेता है और ताल के किनारे के धान के खेतों में सुबह, शाम, खूब चुगता है। यह धान, घास, और छोटे छोटे कीड़े भी खा लेता है। मांस स्वादिष्ट होता है। इसकी उड़ान की तीव्र गति, और मांस की उत्तमता के कारण अँगरेज़ शिकारी इसका शिकार करना अधिक पसन्द करते हैं। अँगरेज़ी में इसे "गैडवाल" (Gadwall) कहते हैं। यह शीघ्र भड़कने वाला और सतर्क पक्षी है।

मिलां दक्खिन में बहुत दूर तक नहीं जाता है। मैसूर के दक्खिन यह बहुत कम देखने में आता है। इसके नर का सर और गर्दन कुछ कुछ भूरे रंग का होता है और उन पर कत्थई रंग के धब्बे होते हैं। छाती खैरे रंग की होती है और उस पर श्वेत रंग के अर्ध चन्द्राकर धब्बे होते हैं। पेट पीलापन लिये रहता है और उस पर काली लहरदार लकीरें होती हैं। दुम का रंग चमकीला होता है। पंखों पर काली और श्वेत लकीरें होती हैं। चोंच काली होती है। पैर मैलापन लिये पीले रंग के होते हैं। पञ्जों की खाल पर काले धब्बे होते हैं। मादा का सर भूरा और श्वेत रंग का होता है। बाक़ी शरीर भूरे रंग का कालापन लिये होता है, जिसमें हल्के पीले धब्बे होते हैं। पेट सफ़ेद होता है। पंखों में नर की ऐसी छड़ें होती हैं। चोंच गहरे खैरे रंग की और पैर नर के पैरों की भाँति होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छोटा लालसर

यह पक्षी प्रत्येक जाड़े में बहुत बड़ी संख्या में यहाँ आता है। ये साधारण झुण्डों में, बड़ी झीलों और नदियों में रहता है। यह तेज़ उड़ने वाला पक्षी है। पृथ्वी पर भली भाँति चल लेता है। घास और दूसरे पानी में पैदा होने वाले पौधों को तथा कीड़ों को खाता है। यह पक्षी एक स्थान पर एकत्रित होना बहुत पसन्द करता है। सोते समय एक घनी कतार में बैठता है। यदि इन पर सोते में फ़ायर की जाय तो बहुत सारे एक साथ हाथ लगें। इन पक्षियों पर फ़ायर करने का सबसे उत्तम समय ऊषः काल और उसके कुछ देर बाद तक है। इस समय सभी बतखें कम सतर्क और सशंक रहतीं हैं। यदि शुक्ल पक्ष की चाँदनी में इन पर फ़ायर करने का मौक़ा मिले तो हमेशा साया में से ही इन पर जाना उत्तम होगा। यदि साया का सहारा नहीं लिया गया और शिकारी ने चाँदनी में ही इन पर जाने का प्रयास किया तो वह सदैव असफ़ल रहेगा। ऐसी सूरत में यह पक्षी कभी भी शिकारी को छर्रे की मार के अन्दर नहीं आने देगा। चिड़ियों पर जाते समय हमेशा चन्द्रमा को सन्मुख रखना चाहिये। यदि चन्द्रमा शिकारी के पीछे हुआ तो ये शिकारी को अवश्य देख लेते हैं और पहले ही उड़ जाते हैं। प्रातः काल सूर्य्य निकलते समय भी यह ध्यान में रखना चाहिये कि सूर्य्य शिकारी के पीछे न पड़े। ऐसी दशा में शिकारी को देखकर अवश्य उड़ जाँयगे।

अँगरेज़ "छोटे लालसर" का मांस उत्तम मानते हैं, भारत में भी इसका मांस अच्छा माना जाता है। अँगरेज़ी में इसे विजन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

(Widgen) कहते हैं। इसके नर का सर हलके खैरे रंग का होता है। उस पर कुछ काली चट्टी होती हैं। पीठ और पंखों के ऊपर के पखने खैरे रंग के होते हैं। उस पर काली लकीरें होती हैं। छाती का रंग कुछ कुछ नारंगी रंग से मिलता है। छाती के नीचे पेट श्वेत रंग का होता है और दुम के नीचे काला धब्बा होता है। पंखों की श्वेत पटरी उड़ते समय पूर्ण रूप से देख पड़ती है। पंखों में छोटी हरी पटरी होती है और उसके दोनों ओर काला रंग होता है। मादा खैरे रंग की होती है। चोंच हलके काही रंग की होती है। पैर नर तथा मादा दोनों के कालापन लिये होते हैं। यह १९ इञ्च लम्बा होता है। इसका नर अक्सर एक विचित्र आवाज़ करता है। आवाज़ इतनी तेज़ होती है कि २,३ फर्लांग तक सुनाई पड़ती है।

टील

टील दो प्रकार की होती है। एक को पतारी या केर्री, और दूसरी को चैती या चैतवा कहते हैं। टील अँगरेज़ी नाम है जो भाषा में प्रचलित हो गया है। अँगरेज़ी में पतारी को कौमन (Common Teal) कहते हैं, पर यहाँ इसे केवल टील ही कहते हैं। यह कम सशंक तथा सतर्क पक्षी है और इसका मांस खाने में स्वादिष्ट होता है अतः शिकारी इसे देख कर अत्यन्त प्रसन्न होता है। सवनों और लालसर आदि पक्षियों को मारने में असफल शिकारी को यदि कहीं टीलों का झुण्ड देख पड़ा तो वह बड़ा प्रसन्न होता है क्योंकि वह समझता है कि वह इन पक्षियों को साधारण होशियारी से छिप कर भी सफलता पूर्वक मार लेगा।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सवन और लालसर पर यदि कोई अच्छी आड़ से छिप कर जाय, तब भी सफलता सन्देह जनक रहती है क्योंकि ये पत्ती अत्यन्त सतर्क रहते हैं। टील के समान शीघ्र और कोई मुर्ग़ाबी नहीं उड़ते। वे बिना सर और गर्दन को उठाये एकाएक ऊपर को उड़ जाते हैं मानो उन्हें किसी ने पृथ्वी से ऊपर की ओर फेंक दिया हो। अन्य पत्ती उड़ने के पहले अपने सर और गर्दन को ऊपर की ओर उठाते हैं पर टील ऐसा नहीं करता। अतः जब शिकारी टीलों के ऊपर मार के अन्दर पहुँचता है तब यह आवश्यक है कि उसकी उंगली लबलबी पर रहे और आँखें पूरी खुली रहें। टीला बहुत सुकुमार होते हैं अतः छोटे छर्रे की चोट भी उनके लिये प्राण घातक सिद्ध होती है। कभी कभी ये बड़ी संख्या में एक साथ बैठ कर चुगते हैं, उस समय इन्हें अधिक संख्या में मार लेना अत्यन्त सरल है। हमारे एक मित्र ने बैठे तथा उड़ने पर दो फ़ायर करके एकबार ३३ टील मारे थे।

टील के नर की पीठ तथा छाती का रंग पुछारा के नर के भाँति होता है। पेट श्वेत परन्तु छाती की ओर उस पर काले धब्बे होते हैं। सिर गहरा खैरे रंग का होता है, और आँखों के चारों ओर गहरे चमकीले हरे रंग के दाग़ होते हैं जो ऊपर से नीचे की ओर लम्बाई में चले जाते हैं। चारों ओर श्वेत रंग की गोट लगी रहती है जो बड़ी सुन्दर लगती है। दोनों पंखों में हरे चमकीले धब्बे होते हैं। इसकी मादा के पंखों में भी हरे चमकीले धब्बे होते हैं मादा का रंग सीकपर की मादा के रंग का होता है। पैर और चोंच भी उसी रंग के होते हैं। जाड़ों में यह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

समस्त भारतवर्ष में पाया जाता है।

यह सबसे छोटी विदेशी बतख़। है इससे छोटी केवल गिर्री होती है जो यहीं रहती है। टील उन झीलों और तालाबों में पायी जाती है जहाँ घास अधिक होती है। यह किनारे बिलकुल उथले पानी में या कीचड़ में चुगती है और छोटे छोटे झुन्डों में रहती है। टील तेज़ उड़ने वाला पक्षी है। माघ और फाल्गुन के महीने में जब यह खूब तगड़ी होती है तब बहुत स्वादिष्ट बनती है। यह अक्तूबर में यहाँ आती है और अप्रेल के अन्त में लौट जाती है। लौटकर उत्तरी देशों में अंडे देती है।

चैती या चैतवा भी टील ही का प्रभेद है। यह यहाँ सबसे पहले आती है और मई के प्रारम्भ तक यहाँ रहती है। चैती अन्य विदेशी बतखों की भाँति बहुत दूर उत्तर में अण्डे देने नहीं जाती। यह उत्तरी भारतवर्ष के सब स्थानों में पाई जाती है। बड़े बड़े झुण्डों में झीलों के किनारे रहती है। यदि जल में कहीं धान, तिन्नी, इत्यादि हुई तो वहाँ यह बहुतायत से बैठती है। चैती को अँगरेज़ी में गार्गनी या ब्लू विन्गेड टील (Gargany or Blue Winged Teal) कहते हैं। यह उपरोक्त टील से कुछ बड़ी होती है। मांस खाने में उपरोक्त टील की भाँति होता है। सर कत्थई रंग का, आँखों के ऊपर श्वेत रंग की बड़ी भवें, छाती खैरे रंग की और उस पर टेढ़ी टेढ़ी काली धारियाँ होती हैं जो देखने में बड़ी सुन्दर प्रतीत होती हैं। चोंच और पैर पतारी के रंग के होते हैं। मादा की भवें कम श्वेत होती हैं और उसकी पीठ गहरे खैरे रंग की होती है। पेट कुछ कुछ श्वेत होता है। मादा के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पंखों में नर की भाँति चमकीली हरियाली नहीं होती। यह यहाँ पर अगस्त के महीने में आ जाती है। इससे पहले यहाँ कोई विदेशी मुर्गाबी नहीं आती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पंद्रहवाँ अध्याय

देशी बत्तख़

देशी बत्तख़ सात प्रकार के हैं। ये यहीं भारत में रहकर अण्डे देती हैं। ये सभी वर्षा ऋतु में ताल या झीलों के किनारे विशाल वृक्षों पर अण्डे देती हैं। उत्तरी भारत में नकटा, सोनरा, सेल्हरी और गिर्री जाति के बत्तख़ साधारणतया सब झीलों और तालाबों में पाये जाते हैं। इनमें सबसे बड़ा नकटा और सब से छोटी गिर्री होती है। देशी और विदेशी बत्तख़ों में गिर्री सब से छोटी होती है ।

नकटा

यह एक बड़ी बत्तख़ है और चीना सवन के बराबर होती है। चोंच के सिरे से दुम के सिरे तक २½ फ़ीट लम्बी होती है। इसे अँगरेज़ी में काम्ब डक (Comb Duck) कहते हैं। नर तथा मादा दोनों की पीठ तथा पंख पर हरयाली होती है। पेट श्वेत होता है। सर तथा गर्दन भी श्वेत और धब्बेदार होती है। चोंच और पैर काले रंग के होते हैं। नर की चोंच पर ऊपर को उठा हुआ मांस होता है जो वर्षाऋतु में बड़ा हो जाता है और जाड़े तथा गर्मी में घटकर छोटा हो जाता है और दूर से नहीं देख पड़ता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नकटा का मांस उतना स्वादिष्ट नहीं होता जितना विदेशी बतख़ों का होता है। यह वृक्षों पर भी बैठता है और ताल के किनारे आम के वृक्षों पर घोंसला बनाता है। बर्षा में अँडे देता है। घोंसला किसी खोखले में बनाता है। यह १३ से २० अण्डे तक देता है।

सोनरा

सोनरा को कहीं कहीं "गुगराल" या "गर्म पाई" भी कहते हैं। इसके चोंच के अग्र भाग में सुनहले रंग की चमकीली पटरी होती है। इसके नर और मादा दोनों एक ही प्रकार के रहते हैं। देखने में कोई भिन्नता नहीं प्रतीत होती। ये भूरे रंग के होते हैं और दूर से बदन पर मछली के छोटे सेल्हेट से देख पड़ते हैं। इनके पँखों पर चमकीले हरे रंग के धब्बे होते हैं और उनके किनारे पर श्वेत गोटें होती हैं। इस गोट के अतिरिक्त पँखों पर सफ़ेदी भी होती है। इसकी चोंच काले रंग की होती है और अगले भाग में उपरोक्त सुनहरी पटरी होती है। चोंच की जड़ पर दो नारंगी के बिन्दु होते हैं। अतएव इन्हें अँगरेज़ी में स्पाटेड बिल्ड डक (Spotted Billed Duck) कहते हैं। इसके पैर नारंगी रंग के होते हैं। नकटे की भाँति यह भी वर्षा ऋतु में अण्डे देती है। यह झील तथा ताल के किनारे घास पर घोंसला बनाकर ८ या ९ अण्ड़े देती है। इसका मांस स्वादिष्ट होता है। जाड़े में इसके मांस में बहुत कम बिसांइध होती है। उस समय इसका मांस सीकपर के मांस से कम स्वादिष्ट नहीं होता। देशी बतख़ों में इसका मांस सबसे उत्तम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होता है। यह सीकपर के बराबर होती है। चोंच के सिरे से दुम के सिरे तक ड़ेढ़ फ़ीट लम्बी होती है।

सेल्हरी या सेलही

इसके नर मादा दोनों एक ही प्रकार के होते हैं। पीठ कालापन लिये भूरे रंग की होती है। पेट पीलापन लिये गेरुआ रंग से मिलता जुलता है। पंख काले होते हैं और उन पर लाल धब्बे होते हैं। चोंच और पैर काले रंग के होते हैं।

सेल्हरी को अँगरेज़ी में ह्विसलिंङ्ग टील (Whistling Teal) कहते हैं। ये दो प्रकार की होतीं हैं। एक कुछ छोटी होती है और दूसरे प्रकार की थोड़ी बड़ी होती है। छोटी चोंच के सिरे से दुम तक १७ इञ्च लम्बी होती है, और बड़ी २० इञ्च। दोनों का रंग एक ही प्रकार का होता है, अन्तर केवल दुम के पास धब्बे के रंग में होता है। छोटी के दुम के समीप लाल धब्बा होता है और वही धब्बा बड़ी जाति में पीलापन लिये होता है। यह सीं सीं करके बोलती है मानो सीटी देती हो। अतएव इसको ह्विसलिंङ्ग टील कहते हैं मांस खाने में अच्छा नहीं होता। यह वर्षा ऋतु में अण्डे देती है। चूंकि इसका मांस स्वादिष्ट नहीं होता अतः इसका विशेष शिकार नहीं होता। यह डुब्बी बहुत लगाती है अंतः पानी में घायल सेल्हरी का मिलना कठिन हो जाता है। यह बहुधा ताल या झील के किनारे पेड़ के किसी खोखले में अण्डे देती है। कभी कभी अन्य पक्षियों के परित्यक्त घोंसले भी अपना लेती है। पानी के किनारे की झाड़ियों और बड़ी घासों में भी यह अण्डे देते पायी गई है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गिर्री

हम यह लिख आये हैं कि गिर्री देशी और विदेशी बतखों में सबसे छोटी होती है। इसका आकार हरियल के बराबर होता है। चोंच के सिरे से दुम के सिरे तक १३ इञ्च लम्बी होती है। यह छोटी, बड़ी सभी झीलों में पायी जाती है। गाँव के तलरियों में भी कभी कभी आ जाती हैं। इसके नर के सिर का ऊपरी भाग, पीठ, और पंख हरियाली छटा लिये हुये कुछ काले रंग का होता है। आँखों के ऊपर से लेकर कंठ, गर्दन, और पेट श्वेत रंग का होता है। गले में काले रंग का कण्ठा होता है जो जाड़ों में ग़ायब हो जाता है। उड़ते समय यह पक्षी बड़ा सुन्दर लगता है। इसके पंखों में श्वेत रंग की गोट देख पड़ती है। मादा का रंग भूरा और श्वेत होता है। चोंच और पैर काले होते हैं। अँगरेज़ी में इसे काटन टील (Cotton Teal) कहते हैं। इसकी बोली अनोखी होती है और यह बोली से भली भांति पहचान मिलती है। पर बोली का वर्णन कठिन है। यह 'क्वेक क्वेक, क्वेक, क्वेक' कहती जान पड़ती है पर पहला शब्द धीमा और बाद को तेज़ी से बोलने लगती है।

गिर्री का मांस जो अत्यन्त स्वल्प होता है खाने में रोचक भी नहीं होता। अतः शिकारी और शिकार के अभाव में ही इसे मारने की इच्छा करते हैं। यह वर्षाऋतु में ताल के किनारे किसी आम या अन्य वृक्ष के कोटर में घोंसला बनाकर अण्डे देती है। कभी खंडहरों के खोखले में घोंसले बना लेती है। अण्डे नकटा के अण्डों के रंग के होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उपरोक्त चारों प्रकार के देशी बत्तख़ यहाँ प्रायः दिखाई पड़ते हैं। इसके अलावा यहां तीन प्रकार के और देशी बत्तख़ पाये जाते हैं पर वे भारत में इतनी कम संख्या में दिखलाई पड़ते हैं कि उनका वर्णन अनावश्यक है। इनमें एक तो "श्वेत पखी" बत्तख है जो केवल आसाम के जंगलों, झीलों और तालाबों में देख पड़ता है। यह देशी बत्तख़ों में सबसे बड़ा बत्तख़ है। सिर तथा गर्दन का रंग नकटा की भांति होता है। पीठ भूरी और पेट मोर्चीले रंग का होता है और पंखों में बड़े बड़े श्वेत धब्बे होते हैं। इसके नर तथा मादा दोनों एक ही प्रकार के होते हैं।

दूसरे प्रकार का बत्तख़ आसाम, बंगाल और पूर्वीय युक्त प्रान्त में पाया जाता है पर बहुत ही कम। इसका सर गुलाबी रंग का होता है और शरीर काला होता है। मादा का रंग नर के रंग से फीका होता है। उसकी चोंच काली होती है। नर की चोंच ललाई लिये कुछ श्वेत रंग की होती है। इसके अतिरिक्त नर और मादा में कोई भिन्नता नहीं होती।

तृतीय प्रकार का बत्तख़ यहाँ अलभ्य है वह अण्डमन और मलय देश में पाया जाता है। यह एक प्रकार की पतारी है। गर्दन और कण्ठ श्वेत रंग के होते हैं। पंखों के आगे का भाग भी श्वेत रंग का होता है। पिछला भाग काला होता है। किनारा श्वेत होता है और बीच में लम्बी हरी धारी होती है। बाक़ी शरीर गहरे खैरे रंग का होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सौलवाँ अध्याय

चाहा, ओहारी, और सिम तीतर

चाहो का शिकार

'चाहा' कई प्रकार के होते हैं। भारत में उन पक्षियों की गणना भी चाहों में की जाती है जिन्हें अँगरेज़ी में वेर्डस (Wadrs) कहते हैं अर्थात जो पानी या कीचड़ में घूम घूम कर चुगते हैं। हम यहाँ केवल उन चांहों के बारे में वर्णन करते हैं जिन्हें अँगरेज़ी में स्नाइप.(Snipes) कहते हैं। स्नाइप को यहाँ आम तौर पर चाहा ही कहते हैं। यह एक चितकबरे रंग का छोटा सा पक्षी है। इसके कई भेद होते हैं। यह विदेशी पक्षी है। यहाँ सितम्बर से अक्तूबर तक आ जाता है और अप्रैल से मई तक लौट जाता है। ग्रीष्म ऋतु में लौटकर साइबेरिया में अण्डे देता है। इनमें से दो प्रकार के चाहा हिमालया पर्वत या उसकी तराई के ऊँचे धरातल पर ही रहते हैं। मैदानों में दो ही प्रकार के चाहा आते हैं और झीलों के किनारे थोड़े पानी में या कीचड़ से भरी हुई जमीन में बैठते हैं। हैं। ये थोड़े जल से भरे हुए धान के खेतों में भी बैठते हैं। हम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कह आये हैं कि यह एक छोटे आकार का पक्षी है। यह घास में ऐसा छिप कर बैठता है कि उड़ने पर ही देख मिलता है और तभी शिकारी इस पर फ़ायर कर सकता है। यह जितना छोटा है उतना ही तेज़ उड़ता है। इसका शिकार सब शिकारी नहीं करते हैं और न कर ही सकते हैं। इसका शिकार केवल उत्तम निशाने बाज़ और धनी शिकारी ही करते हैं और कर सकते हैं। सैकड़ों फ़ायर करने पर भी यदि दर्जन डेढ़ दर्जन चाहें मिल गई तो समझिये कि बहुत अच्छा शिकार हुआ पर उसमें भी मांस की तौल का विचार करना एक प्रकार से व्यर्थ ही है।

स्नाइप (चाहों) का शिकार शिकारी के लिये एक कठिन समस्या है। इस शिकार में असाधारण निशाने बाज़ी और शीघ्रता की विशेष आवश्यकता रहती है। पक्षियों के शिकार में यदि हम इसका शिकार सब से कठिन कहें तो कोई अत्युक्ति नहीं। शिकारी को इस शिकार में थोड़े थोड़े पानी तथा कीचड़ में घूम घूम कर फ़ायर करनी होती है। चाहों के उड़ने और उस पर फ़ायर करने की प्रत्याशा में अपने को भली भाँति सम्हाल-कर चलना पड़ता है, क्योंकि पानी में फिसलने का भय रहता है और भरी बन्दूक़ गिर कर शिकारी को ख़तरे में डाल सकती है। जब चाहा उड़ता है तभी शिकारी को फ़ायर करने को मिलता है। फ़ायर करने के लिये उसके बन्दूक़ की दोनों नलियाँ नम्बर ८ या ९ के कार्तूस से भरी तैयार रहनी चाहिये। चाहे के शिकार के लिये कोई नियम निर्धारित नहीं किया जा सकता। यह देखा गया है कि चाहों के शिकार में यदि एक दिन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निपुण और अनुभवी शिकारी कामयाबी हासिल करता है तो दूसरे दिन वह बारंबार हुचता जाता है। इस नाकामयाबी का कोई भी कारण नहीं कहा जा सकता। चाहा का शिकार पूरा जुआ है। कभी दाँव चल गई तो जीत होगई नहीं तो हार हो गई। कुछ शिकारियों की राय है कि वायु को अनुकूल करके तब चाहों पर जाया जाय, तो अन्य कहते हैं कि वायु को प्रतिकूल करके चाहों पर जाना चाहिये। एक कहता है कि उड़ते ही चाहा पर फ़ायर करना चाहिये तो दूसरा कहता है कि कुछ रुक करके चाहों पर फ़ायर करना चाहिये। हम नहीं समझते कि इस शिकार में दिन में कितने बार यह सम्भव है कि शिकारी वायु को अनुकूल करके चाहों पर जा सके। कभी कभी पानी की गहरी नालियों में और गड्ढ़ों में ऐसी बाधायें आ उपस्थित होती हैं कि चाहों पर वायु की ओर से पहुँचना प्रायः असम्भव सा हो जाता है। हां यह तब अवश्य सम्भव है जब चाहें नाली आदि सहित समतल पृथ्वी या धान के खेतों में हों।

उत्तम और अनुभवी शिकारी कहते हैं कि चाहें पर फ़ायर करने के लिये वायु की ओर से ही जाना चाहिये क्योंकि चाहा पहले पहल वायु के प्रतिकूल ही उड़ता है और इधर उधर को घूम जाता है। वायु के अनुकूल जाने से जब चाहा पहले पहल उड़ेगा तब तो दो तीन क्षणों के लिये वह शिकारी के ओर को ही उड़ेगा। ऐसी दशा में चाहों का शिकारी के दाहिने या बायें से छर्रे की मार के भीतर से होकर निकलने की विशेष सम्भावना रहती है। यदि शिकारी वायु के प्रतिकूल हुआ और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चाहे भी वायु के प्रतिकूल उड़ा तो जब तक शीघ्रता में लबलबी दबाई गई कि चाहा कई गज आगे निकल जाता है। और फ़ायर बेकार जाता है। कुछ शिकारियों का कहना है कि कुछ बातों में वायु के प्रतिकूल जाने में ही लाभ रहता है क्योंकि जब चाहा उड़ता है तो १० या १२ गज़ तक टेढ़ा मेढ़ा उड़ता है और बाद को एक सिधान में उड़ता है। इससे पहले १०, १२ गज़ की उड़ान में चाहे को मार लेना दुस्साध्य है। अतः जब वह बिलकुल निकट से उड़ता है तब उस पर १० या १२ गज़ की उड़ान के बाद फ़ायर करना चाहिये, परन्तु यह सदा ध्यान में रखना चाहिये कि वह छर्रे की मार के बाहर न होने पाये ऐसा करने से हुचने की सम्भावना बहुत कम हो जाती है। यदि चाहा दूर से उड़े तो उसके उपरोक्त १० या १२ गज़ उड़ने के बाद बँधे हुए उड़ान में फ़ायर करने की आशा कदापि नहीं करनी चाहिये। क्योंकि इतनी देरी में चाहा मार के बाहर हो जायगा और फ़ायर व्यर्थ जायगा। फ़ायर करने में शीघ्रता अवश्य करनी चाहिये पर घबड़ाहट में फ़ायर भी नहीं करनी चाहिये। यदि फ़ायर हुच गया तो कभी अधीर और हताश नहीं होना चाहिये। कभी कभी निशाना ठीक होने पर, और छर्रे की घातक परिधि के भीतर होते हुए भी चाहा न घायल होता है और न गिरता ही है। यह अधिकतर ४० गज़ की दूरी पर सम्भव है। इसका कारण छर्रों का अधिक फैलाव है। ४० गज़ पहुँच कर छर्रे इतना फैल जाते हैं कि चाहा घातक परिधि के अन्दर होता हुआ भी बच निकलता है और छर्रे उसके इधर उधर से निकल जाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हम ऊपर कह आये हैं कि इस शिकार में शिकारी को पानी और कीचड़ में सम्हल सम्हल कर चलना पड़ता है। एक ओर तो शिकार के उड़ने और गड्ढे नाली आदि से फिसल कर गिरने की आशंका बनी रहती है, और दूसरी ओर इस पर भी ध्यान रखना पड़ता है कि पैर की छपछपाहट से कहीं सचेत हो चाहे उड़ न जाँय। इन कारणों से भारी बन्दूक को लिये हुए शिकारी शीघ्र ही थक जाता है। अतः चाहे के शिकार में हमेशा हल्की बन्दूक का प्रयोग करना चाहिये। बन्दूक इतनी हल्की हो कि शीघ्रता से और सरलता से बार बार कन्धे पर लाई जा सके और ऐसा करने में शिकारी थक न जाय। हल्की बन्दूक से हमारा मतलब २० बोर या उससे भी छोटी बोर की बन्दूकों से कदापि नहीं है क्योंकि उनके छर्रे की घातक परिधि बहुत ही छोटी होती है। हल्की बन्दूक से हमारा अभिप्राय १२ बोर का बन्दूक से ही है। इस शिकार के लिये हल्की १२ बोर की बन्दूक ही सबसे उत्तम होती है।

चाहे के लिये नम्बर ८ का छर्रा सबसे उत्तम होता है। इसके शिकार में स्मोकलेस डायमंड पाउडर (Smokeless Diamond Powder) अर्थात बारूद से भरा हुआ, नम्बर ८ के छर्रे का कारतूस का प्रयोग, अच्छा होता है। इंगलैन्ड के इली कम्पनी के कारतूस सबसे उत्तम साबित हुए हैं। कुछ शिकारी नम्बर ६ और १० के छर्रे से भी चाहे का शिकार करते हैं। नम्बर १० का छर्रा बहुत छोटा होता है और यदि छर्रा किसी मर्म स्थान पर नहीं लगा तो शिकार उसी स्थान पर कदापि नहीं गिरेगा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसे दूसरे ही पावेंगे। ज्योंही कोई फ़ायर हुई कि शीघ्र ही नली में कारतूस भर लेना चाहिये क्योंकि चाहा न जाने कब और कहाँ से उठ पड़े। यह देखा गया है कि अक्सर चाहा शिकारी के पैरों के पास से उठ पड़ता है।

चाहे का शिकार ८½ बजे सवेरे से पहले कभी नहीं करना चाहिये। अत्यन्त प्रातःकाल शिकार करने का परिणाम यह होता है कि चाहा ६०, ७० गज़ की दूरी से उड़ जाता है और दूर चला जाता है। शिकारी को घातक परिधि के अन्दर आने ही नहीं देता। ६ बजे के बाद जब भगवान् भुवन भास्कर ऊपर आ जाते हैं तब चाहा पृथ्वी पर घास में चिपककर बैठ जाता है। शिकारी के समीप आने पर ही उड़ता है। यदि उड़ा भी तो थोड़े ही दूर पर जा बैठता है। यदि खेतों या कीचड़ से भरी हुई पृथ्वी पर घास के झुरमुट हों तो वहाँ यह पक्षी अवश्य बैठेगा। ऐसे झुरमुट को चाहा बहुत पसन्द करता है और वहाँ वह शिकारी को अवश्य मिलेगा।

जिन धान के खेतों में थोड़ा छप छप पानी हो या कीचड़ और घास हो उनमें दोनों प्रकार के चाहा अर्थात् बड़ा चाहा और छोटा चाहा (Full Snipe & Jack Snipe) और जंगली चाहा (Wood Snipe) बहुत बैठते हैं। छोटा चाहा तो मेड़ के किनारे ऐसा छिपा बैठा रहता है कि अक्सर शिकारी के पैरों के निकट ही से उड़ता है। अतः चाहे के शिकार में शिकारी को मेड़ का भली भाँति निरीक्षण कर लेना चाहिये। तीनों प्रकार के चाहों का मांस स्वादिष्ट होता है। इनका मांस मधुर, स्निग्ध,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारी कफ जनक, मांस वर्धक, पुष्टिकारक और प्रायः पथ्य तम होता है।

बड़े चाहे को अँगरेज़ी में फुल स्नाइप (Full Snipe) कहते हैं। यह १० इञ्च लम्बा होता है चोंच २½ इञ्च और दुम ढाई इञ्च की होती है। पीठ कबरे रंग की होती और सिर पर तीन पीले रंग की लकीरें होती हैं। बीच में दो काली लकीरें होती हैं। छाती मटमैली होती हैं। तौल में कोई चार औंस का होता है छोटे चाहे का रंग भी बड़े चाहे की भांति होता है परन्तु सर पर बड़े चाहे की भांति लकीरें नहीं होती। छोटा चाहा बड़े चाहे के इतना शीघ्र गामी पक्षी नहीं है, किन्तु इससे पाठकों को यह न समझना चाहिये कि छोटा चाहा तेज़ उड़ने वाला पक्षी नहीं है। यह यहाँ सितम्बर से मार्च तक रहता है। तीसरे प्रकार का चाहा, जंगली चाहा कहलाता है। अँगरेज़ी में इसे उड स्नाइप कहते हैं। आकार में यह बड़े चाहे से भी बड़ा होता है। रंग कबरा, सर भूरापन लिये कुछ काला, और पीठ कबरी होती है। पेट और छाती सुफ़ेद होती है और उस पर भूरी टेढ़ी मेढ़ी लकीरें होती हैं। यह हिमालय या समीप के पहाड़ियों पर पाया जाता है। जंगली चाहे से मिलता जुलता एक पहाड़ी चाहा और होता है। यह भी उपरोक्त स्थान पर पाया जाता है। पहाड़ी चाहे का पेट और छाती श्वेत होती है और दुम के बाहरी पर भी श्वेत होते हैं। उन पर भूरी लकीरें होती हैं। ये दोनो प्रकार के चाहे मैदानों में नही मिलते

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओहारी

ओहारी को अँगरेज़ी में पेन्डेड स्नाइप (Painted Snipe) कहते हैं। परन्तु यह वास्तव में स्नाइप नहीं है। इसकी चोंच स्नाइप से छोटी होती है और कुछ नीचे की ओर झुकी होती है। ओहारी का आकार रंग और चोंच स्नाइप (चाहे) की भांति नहीं होते, इसके पैर लम्बे होते हैं। इसके नर और मादा दोनों एक भाँति के नहीं होते, दोनों के रंग में अन्तर होता है। पक्षियों में नर सदैव सुन्दर होता है, परन्तु ओहारी की मादा का रंग नर से सुन्दर और चमकीला होता है। नर के पीठ और गर्दन के ऊपर के पर हरे और श्वेत होते हैं। सर पर कबरी चौड़ी मांग होती है। पेट तथा छाती श्वेत और पंख और दुम भूरे होते हैं। उन पर काली पेंसिल की सी धारियाँ होती हैं। मादा के पंख और दुम नर के समान होते हैं। आँखों के चारों ओर सफ़ेद किनारी रहती है। पीछे की धारी भी श्वेत होती है। उसका सर, हलक़ और छाती का ऊपरी भाग लाल होता है और जहाँ यह पेट की सफ़ेदी से मिलता है वहाँ काला होता है। इसकी पीठ गहरे हरे रंग की होती है और उस पर काली धारियाँ होती हैं। ओहारी छोटे चाहा से बड़ी और बड़े चाहा से छोटी होती है। यह पक्षी सारे भारतवर्ष में पाया जाता है। यह झील के सिरों पर और दलदली ज़मींन में अधिकतर रहता है। जहाँ स्नाइप बैठते हैं वहाँ भी प्रायः रहता है। यह कीड़े, घास और धान खाता है। मांस चाहा के मांस के समान होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सिम तीतर

यह एक पहाड़ी पक्षी है। अधिकतर हिमालय पर मिलता है। यह १४ इञ्च लम्बा होता है। चोंच तीन इञ्च की होती है। इसके पैर तीतर की भाँति छोटे होते हैं; चोंच स्नाइप की भाँति लम्बी होती है। आँखें बड़ी, पीठ भूरी, और उस पर ललाई लिये भूरी लकीरें और काले धब्बे होते हैं दुम छोटी और काली होती है और ऊपर सिर पर गहरी भूरी और नीचे श्वेत होती है। यह ग्रीष्म ऋतु में हिमालय के ऊंचे धरातल पर अण्डे देता है। इसे अँगरेज़ी में उडकाक (Wood Cock) कहते हैं। यह तेज़ उड़ता है।

सब चिड़ियों के शिकार से सिम तीतर का शिकार कठिन कहा जाता है। यह ठीक ही है क्योंकि यह जंगलों में रहता है जहाँ वृक्षों की कतार निशाना लेने में सदैव बाधा डाला करती हैं। सिमतीतर सीधा नहीं उड़ता बल्कि टेढ़ा मेढ़ा उड़ता है। इङ्गलैन्ड में सिमतीतर का शिकार इतना श्रेयस्कर माना गया है कि वहाँ प्रायः शिकारी ६० गज़ की दूरी ही से इस पर फ़ायर कर देता है। अनुभवी और पटु शिकारी भी सिमतीतर पर उस फ़ासले से दूने पर फ़ायर करते देखे गये हैं जितने फ़ासले से आमतौर पर अन्य पक्षियों का शिकार होता है। इसके शिकार में ज्योंही यह आगे उड़ता देख पड़े पहली नली से फ़ायर करनी चाहिये। उसके ऊपर पहुँचने की आशा न देखनी चाहिये क्योंकि ऐसा करने से वह पेड़ों के बीच से होकर निकल जायगा। यदि

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पहली फ़ायर हुच जाय तो दूसरी नली आसानी से दागी जा सकती है। यह पक्षी उठते ही बहुत तेज़ उड़ता है अतः यदि पहली नली से खुले मे ठीक निशाना लिया गया तो दूसरी नली से प्रायः अन्दाज़िया ही फ़ायर करना पड़ता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सत्रहवाँ अध्याय

टिकुई, परैली आदि

टिकुई को कवई भी कहते हैं। यह बतख नहीं है। न इसकी चोंच ही बतख के समान होती है और न इसके पञ्जे ही बतख के पञ्जों की भाँति खाल से जुड़े रहते हैं। यह यहाँ पर सितम्बर से अक्तूबर तक आ जाती है और अप्रैल के अन्त तक झीलों में देख पड़ती है। यह उन झीलों में अधिक बैठती है, जिनमें घास अधिक हो। यह जाड़ों मे झुँण्डों में ही रहती है, पर गर्मी में जोड़ों में पायी जाती है। इसी समय यह अण्डे देती है।

इसके नर और मादा में कोई भेद नहीं देख पड़ता। सब शरीर काला होता है। चोंच के ऊपर माथे पर श्वेत खाल का टीका होता है। इस टीका पर रोंयें नहीं होते। पञ्जों में खाल की " कोंचियाँ " होती हैं जो तैरने में पूरा काम देती हैं। कवई गहरी डुब्बी लगाती है अतः यदि छर्रे से इसका पङ्ख टूट भी जाय तो भी जल में दुष्प्राप्य हो जाती है। इसे घायल करने के बाद यदि पीछा किया जाय तो यह घास में डुबकी लगाकर बैठ जाती है। केवल चोंच और आँखों को जल के ऊपर रखती है। ऐसा छिपती है कि शिकारी को इसे ढूंढ लेना नितान्त कठिन हो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाता है। यह चुरवा और बुड़ार की भाँति डुबकी लगाकर चुगती भी है। अतः इसका शिकार पानी में, रस्सियों में लगे घोड़े के बालों के फन्दे से भी किया जाता है। जब यह उड़ती है तो पैर पूँछ के आगे निकले होते हैं। परन्तु पैर काले होने के कारण दुम ही प्रतीत होते हैं। कभी कभी यह बड़े झुण्डों में इकट्ठा हो जाती है और बैठी हुई बड़ी घनी देख पड़ती है पर वास्तव में ऐसा नहीं होता। जब इनके ऊपर बाज़ मँड़राता है तो ये भाग भाग कर इस प्रकार एकत्रित होती हैं मानों एक दूसरे को सहायता देने के लिये एकत्रित हुई हों। ऐसे समय यदि इन पर फ़ायर किया जाय तो ये बहुत बड़ी संख्या में गिरती हैं। पर मिलती वे ही हैं जो या तो मर जाँय या पूर्ण रूप से घायल होकर भागने या डुबकी लगाने में असमर्थ हो जाँय।

यह कीचड़ या पृथ्वी पर खूब दौड़ती है। यह तेज़ नहीं उड़ती अतः उड़ते समय इस पर निशाना लगाना कुछ कठिन नहीं है। कुछ देर उड़ने के बाद इसके उड़ान में कुछ तीव्रता आ जातीहै। यह घास, घास के कीड़े, तिन्नी और धान बड़े चाव से खाती है। मांस में बतख़ों के मांस के गुण हैं। मांस खाने में न बहुत अच्छा और न बहुत बुरा होता है। खाने में कुछ सोंधा होता है। जो टिकुई प्रातःकाल मारी जाती है उसका मांस कहीं अच्छा होता है। इसके पंख यदि उखाड़े जाँय तो पंख के नीचे के रोंयें बड़ी कठिनता से उखड़ते हैं। खाल पूर्ण रूप से रोयें रहित नहीं हो पाती अतः खाल निकाल देना ही उत्तम होता है। खाल निकाल देने से विसाइन्ध भी निकल जाती है। कवई को अँगरेज़ी में कूट (Coot) कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परैली

परैली को बगौधी और चाहा भी कहते हैं। ये कई प्रकार की होती है और यहाँ साल भर रहती है। यह थोड़े पानी में घूम-घूम कर चुगती है और झुण्डों में रहती है। इनको कोई जाति छोटी, कोई बड़ी होती है और एक फुट से लेकर एक फुट १० इञ्च तक लम्बी होती है। अधिकतर १२ से १४ इञ्च तक लम्बी होती है। १½ इंच की चोंच, और दो इंच की दुम होती है। इसके पैर छः इंच लम्बे होते हैं। अँगरेज़ी में इसकी गणना वेडर्स (Waders) में है। परैली होशियार और तेज़ उड़ने वाला पक्षी है। इसका शिकार चिड़ीमार जाल लगाकर बहुत करते हैं। जाल पानी में पृथ्वी पर बिछा होता है और वहीं मुल्लहे बैठा दिये जाते हैं। परैली का झुण्ड ज्योंही उस पर आकर बैठता है त्योंही जाल खींच लिया जाता है और परैली फँस जाती हैं। इस प्रकार से ये सैकड़ों की संख्या में पकड़ ली जाती हैं।❀ इनका शिकार अगस्त और सितम्बर में अच्छा होता है। यदि वे बहुत बड़ी संख्या में और घनी बैठी हों तो बन्दूक़ से भी ख़ूब मार मिलती हैं। मैंने स्वयं एक फ़ायर में ३४ परैली मारी थीं।

इनमें श्वेत और कबरे रंग की परैली बहुत होशियार होती है। यह या तो अकेले या ४ से १२ तक के झुण्डों में रहती है। इसके पैर हल्के हरे रंग के होते हैं, और गर्दन के सामने का भाग छाती और पेट श्वेत वर्ण के होते हैं। पीठ भी श्वेत होती है।

❀ अब जाल से इस प्रकार शिकार करना क़ानून के विरुद्ध है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सर तथा गर्दन के पीछे का भाग कबरा होता है। पंख भी कबरे होते हैं। पर नीचे की ओर यह कबरापन कम हो जाता है और पंख मैले देख पड़ते हैं। दुम के ऊपरी भाग में हल्के काले रंग की टेढ़ी मेढ़ी और बेड़ी लकीरें होती हैं। बैठने पर पेट श्वेत और पीठ तथा पंख कबरे देख पड़ते हैं। यह बहुत ही चंचल होती है, कभी स्थिर नहीं बैठती। इसमें बदन को झटका देने की निराली आदत होती है। बैठने पर और चलते समय यह अनवरत बदन को झटका देती रहती है। इस प्रकार की परैली को अँगरेज़ी में रेड शैंक (Red Shank) कहते हैं। यह एक होशियार पक्षी है। प्रायः तेज़ सीटी लगाकर उड़ती है और अन्य पक्षियों को भी उड़ा देती है। परैली के मांस के गुण टिकुई के मांस के समान हैं। खाने में साधारण तथा अच्छा होता है। खाल निकाल कर मांस पकाने से विसाइँध निकल जाती है।

कल्धुलिहा❀ और घोंघ❀

इन दोनों प्रकार के पक्षियों की गणना भी वेडर्स में ही करते हैं और वास्तव में ये वेडर्स हैं भी क्योंकि ये थोड़े पानी में परैली की भाँति घूम घूम कर चुगते हैं। मांस खाने में अच्छा नहीं होता अतः शिकारी इनका शिकार कम करते हैं। निकृष्ट श्रेणी के शिकारी भी इन्हें तभी मारते हैं जब उन्हें अन्य कोई शिकार हस्तगत न हो। शिकारी तथा जलाशय के समीप रहने वाले इन्हें भली भाँति पहचान लेते हैं। कल्धुलिहाँ श्वेत रंग का होता है। पैर काले, चोंच काली और सिरे पर कल्धुल की भाँति बना

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहता है। अँगरेज़ी में इसे स्पून बिल (Spoon bill) कहते हैं। किसी किसी की चोंच का अग्र भाग हल्का पीलापन लिये होती है। सर की कलंगी लम्बी होती है। यह दुम से चोंच तक २ फ़ीट ६ इञ्च लम्बा होता है।

घोंघ की चोंच थोड़ी सी धनुषाकार होती है। वह कल्धुलिहा से छोटा होता है। इसे अँगरेज़ी में कल्यू (Curlue) कहते हैं। इसकी बनावट बहुत कुछ लोहड़ी से मिलती जुलती होती है। यह २२ से २७ इञ्च लम्बा होता है।

लोहडी❀

यह भूरापन लिये हुए काले रंग की होती है। दोनों पंख और दुम के पखने हरियाली लिये हुए चमकीले काले रंग के होते हैं। दोनों डैनों पर ऊपर के ओर श्वेत गोलाकार धब्बे होते हैं। जो ३″ × ३″ आकार के होते हैं। उड़ते समय ये गोलाकार धब्बे दिखलाई पड़ते हैं। आँखों के चारों ओर और सिर पर पखने नहीं होते। केवल खाल रहती है। सर की खाल लाल रंग की होती है। यह ललाई बच्चों में नहीं होती वरन् पुरानों में पायी जाती है। यह चोंच से दुम तक २७ इंच लम्बी होती है। इसकी चोंच ५½″ और दुम ६″ की होती है।

❀ कल्धुलिहा, घोंघ, और लोहडी का शिकार श्रेष्ठ शिकारी कभी नहीं करते। कोई कोई शिकारी अच्छा शिकार न मिलने पर इनको भी मार लेते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छपका

छपका को खरवानक भी कहते हैं। मुसल्मान इसे खरवानक और अँगरेज़ स्टोन कल्यू कहते हैं । इसका छपका नाम सार्थक है क्योंकि यह शिकारी को देखते ही छिपने का प्रयत्न करता है और पृथ्वी पर चिपक जाता है। यह चोंच स दुम तक १५½ इंच लम्बा होता है । चोंच केवल १½" लम्बी होती है । इसका सिर, गर्दन, पीठ और छाती का अग्रभाग भूरे रंग का होता है और उस पर काले रंग के धब्बे होते हैं। छाती से हलक़ तक का भाग मैले श्वेत रंग का होता है। दुम के नीचे का भाग भूरे रंग का होता है और दुम के पखनों का अग्रभाग हल्के काले रंग का होता है; उसके ऊपर एक श्वेत पटरी और फिर हल्का काला रंग होता है। चोंच काली पर नथुने तक दोनों ओर पीली होती है। नीचे का भी ऊपरी हिस्सा हलक़ तक पीला होता है। आँखों के ऊपर और नीचे के पर श्वेत रंग के होते हैं और पोटों के किनारे की खाल पीले रंग की होती है जो बहुत सुन्दर लगती है। पैर ८½" लम्बे हल्के हल्दी के रंग के होते हैं। पैर में केवल तीन पञ्जे होते हैं छपका का मांस न स्वादिष्ट होता है और न जल्दी चुरता ही है। यह उष्ण नहीं होता।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अठारहवाँ अध्याय

भट तीतर

भट तीतर पृथ्वी पर ही बसेरा करता है। वृक्षों से इसका कोई सम्बन्ध नहीं। यह एक तेज़ उड़ने वाला चतुर पक्षी है। झुण्डों में खुले मैदानों में रहता है। रात्रि में जब इनका झुण्ड आराम करता है तो चन्द पाहरू पहरा देते हैं। यदि कोई स्यार या लोमड़ी आई तो पाहरू औरों को सचेतकर देते हैं। खुले मैदानों में रहने के कारण यह शिकारी को तुरन्त देख लेता है अतः जब यह पक्षी बैठा हो तो इस पर फ़ायर करना एक प्रकार से असम्भव ही समझिये। प्रायः यह शिकारी के छर्रा के मार के अन्दर पहुँचने के पहले ही उड़ जाता है।

इनका खाना पीना नियमित होता है। जहाँ पानी पीते हैं वहाँ प्रातःकाल ८ बजे के करीब और शायंकाल सूर्य्यास्त के पहले ग्रीष्म ऋतु में अवश्य जाते हैं। उस समय इनका झुण्ड २५ से ३५ तक का रहता है। उस समय इनकी संख्या सैकड़ों की रहती है, अतः जाते आते समय इन पर सुगमता से फ़ायर किया जा सकता है। उड़ते में ये एक निराली बोली बोलते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भट तीतर का रंग रेतीले मैदान से मिलता हुआ होता है। उस पर या तो काले धब्बे या लकीरें होती हैं। नर से मादा के धब्बे अधिक होते हैं। इसकी दुम के दो पखने बाहर को निकले हुए होते हैं जो सिरे की ओर को पतले होते हैं। इसकी चोंच तीतर के चोंच की भाँति होती है। एक प्रकार के भट तीतर के पञ्जों पर भी पखने होते हैं। ये अफ्रीका और मध्य एशिया में अधिकतर पाये जाते हैं। यहाँ भारतवर्ष में कोई ८ प्रकार के भट तीतर दिखलाई पड़ते हैं। इनमें चार उप जातियाँ ऐसी हैं जिनके दुम के दो पखने, जैसा कि ऊपर लिखा गया है बाहर की ओर निकले रहते हैं, और शरीर के रंग तथा धब्बों में बहुत कम भिन्नता होती है। इन आठों प्रकार के भट तीतरों में कुछ ऐसे हैं जो जाड़े में केवल उत्तरी पश्चिमी भारतवर्ष में आते हैं और यहीं से लौट जाते हैं। थोड़ी बहुत भिन्नता के साथ उपरोक्त रंग और धब्बे सभी तीतरों में पाये जाते हैं। भट तीतर को अँगरेज़ी में सैन्ड ग्रूज (Sand Grouse) कहते हैं। यह कबूतर के बराबर होता है। लम्बाई में यह १२ इञ्च के ऊपर १३ इञ्च तक का होता है। इस लम्बाई में दुम लगभग आधी होती है। मादा की दुम कुछ छोटी होती है।

भट तीतर पञ्जाब, सिन्ध, राजपूताना और मध्य भारतवर्ष में बहुत पाये जाते हैं। उत्तरी भारतवर्ष में भी ये खुले मैदानों में कभी कभी देख पड़ते हैं। बड़े क़िस्म के और अनेक प्रकार के भट तीतर के शिकार के लिये राजपूताना सबसे अच्छा स्थान है। वहाँ

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

मैदानों में भट तीतर रहते भी अधिक हैं। भट तीतर उत्तरी हिन्दुस्तान में अप्रैल में अण्डे देता है। परन्तु दक्खिन में इससे पहले ही अण्डे देता है। इसके अण्डे धब्बेदार भूरे रंग के कुछ लम्बे होते हैं। यह पृथ्वी पर गड्ढे में साधारणतया तीन अण्डे देता है। भट तीतर का मांस बहुत अच्छा होता है। स्वादिष्टता में अद्वितीय होता है। इसका मांस रूक्ष, लघु, शीघ्र पचने वाला और पौष्टिक होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उन्नीसवाँ अध्याय

तगदार, तिलूर आदि

तगदार मरुभूमि या रेगिस्तानी पृथ्वी पर अधिक रहता है। यह पंजाब, सिन्ध, काठियावाड़, गुजरात, राजपूताना और दक्खिन में ही पाया जाता है। इसकी तीन जातियाँ होती हैं—तगदार, तिलूर या होबारा, और छोटा तिलूर। ये क्रमशः एक दूसरे से छोटे होते हैं, तगदार और तिलूर विशेष तौर से मैदानों में रहते हैं और शिकारी को हजारों गज की दूरी से ही देख लेते हैं। अतः इनका शिकार बन्दूक (Gun) से बड़ी कठिनता से हो पाता है। तगदार का शिकार करने के लिये ऊँट और रायफल की आवश्यकता है। इसका शिकार बिना ऊँट और राइफल के सम्भव नहीं है। तगदार एक बड़ा पक्षी है। इसे अँगरेजी में ग्रेट इन्डियन बस्टर्ड (Great Indian Bustard) कहते हैं। खड़े पर इसका नर चार फ़ीट ऊँचा होता है। मादा कुछ छोटी होती है। इसका सिर आँखों के ऊपर काले रंग का होता है। गले में काले रंग का कण्ठा होता है। नर का कण्ठा कुछ अधिक सुन्दर होता है। गर्दन छाती और पेट मैले श्वेत रंग के होते हैं। पीठ और पंख कबरे रंग के होते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh
यह बहुत कम उड़ता है। कीड़े तथा धान खाता है। गर्मियों में पृथ्वी में गड्ढा खोदकर यह एक या दो अण्डे देता है।

तिलूर या होवारा

यह रंग में तगदार से मिलता जुलता है, परन्तु तगदार से छोटा होता है। पीठ तथा पंख कबरे रंग के होते हैं। छाती और पेट श्वेत रंग के होते हैं परन्तु कहीं कहीं काले रंग के धब्बे होते हैं। यह २½ फ़ीट लम्बा होता है। मादा तीन इञ्च छोटी होती है। नर और मादा दोनों एक ही रंग के होते हैं। दोनों में कोई विशेष भेद नहीं होता। हलक़ के नीचे लम्बे पखने लटकते रहते हैं। ये जाड़े में पंजाब, सिन्ध, गुजरात और राजपूताना आदि प्रान्तों में आते हैं और ग्रीष्म ऋतु के प्रारम्भ में फ़ारस और काबुल इत्यादि देशों में लौटकर अण्डे देते हैं। तिलूर को अँगरेज़ी में हौबारा (Haubra) कहते हैं।

छोटा तिलूर उपरोक्त तिलूर से छोटा होता है परन्तु रंग में उसी प्रकार का होता है। इसे अँगरेज़ी में लिटिल बेस्टर्ड (Little Bustard) कहते हैं। यह डेढ़ फ़ीट लम्बा होता है। जाड़े के दिनों में आता है और भारत की सीमा के निकट पश्चिमी पंजाब में रहता है। सरसों के खेतों में यह अधिक रहता है। बहुत तेज़ उड़ता है। इसके शिकार में ऊँट और राइफ़ल की आवश्यकता नहीं रहती। सरसों के खेतों में रहने के कारण इसका शिकार गन से बख़ूबी किया जा सकता है।

इन तीनों प्रकार के तिलूरों के मांस का गुण समान ही होता है। परन्तु छोटे तिलूर का मांस हलका होता है। इसका मांस

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मधुर, रूक्ष, हल्का, बलकारक, अग्निवर्धक और वीर्यवर्धक होता है।

चरज

चरज हिमालय की तराई और आसाम के घास के जंगलों में रहता है। पांच, छः फ़ीट ऊंची घास में यह पाया जाता है। यह घास के कीड़े, टिड्डी आदि विशेष रूप से खाता है। २५ या २६ इञ्च लम्बा होता है, देखने में लगभग मोर के आकार का दिखाई पड़ता है। उड़ते समय गर्दन समेट कर नहीं उड़ता वरन् सारस की भाँति गर्दन आगे को बढ़ाये रहता है। यह तेज़ नहीं उड़ता अतः उड़ते समय इस पर सफलता से निशाना लिया जा सकता है। लम्बी घास में रहने के कारण इसका शिकार हाथी पर से बहुत अच्छा होता है। चरज को अँगरेज़ी में बंगाल फ्लोरिकन (Bengal Florican) कहते हैं।

इसके नर के पंख श्वेत होते हैं। शरीर काला होता है। सिर पर काले रंग की चोटी होती है। हलक़ और गर्दन के पंख लम्बे होते हैं। इसका यह रंग अण्डे देने के समय मार्च से जुलाई तक रहता है। इसकी मादा के पीठ का रंग कबरा (पीलापन लिये भूरा और काला) होता है। पेट भूरा और कहीं कहीं उस पर काले धब्बे होते हैं। पैर पीलापन लिये लम्बे होते हैं। इनके बारे में कहा जाता है कि नर और मादा सदैव अलग रहते हैं। जब जोड़ा खाना होता है, तब नर का झुण्ड मादों के झुंड समीप आता है और फिर अलग हो जाता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लीख

इसे तुनमोर और छोटा चरज भी कहते हैं। अँगरेज़ी में इसे लेसर फ्लारिकन (Lesser Florican) कहते हैं। डेढ़ फ़ीट लम्बा होता है। नर का रंग उपरोक्त चरज की भाँति होता है परन्तु इसके गर्दन तथा सिर के पखने लम्बे नहीं होते। जब अण्डा देने का समय समीप आता है तब नर के सिरे में गलफरों के समीप दोनों ओर तीन तीन लम्बे मोंछ निकलते हैं। यह करीब चार इञ्च लम्बे होते है। इनके सिरे मोटे और रोंयेदार होते हैं। जाड़े में नर का रंग मादा की भाँति हो जाता है परन्तु पङ्खों की सफ़ेदी उस समय भी रहती है। मादा का रँग चरज की मादा के समान होता है। मादा नर से कुछ बड़ी होती है। इनके पैर और गर्दन शरीर की अपेक्षा अधिक लम्बे होते हैं। ये जाड़े में विशेष कर दक्षिण में ही रहते हैं पर ग्रीष्म ऋतु में, मध्यप्रदेश काठियावाड़, राजपूताना, सिन्ध, दक्षिणी पंजाब और कभी कभी उत्तर भारत में आ जाते हैं। लीख के अण्डा देने का समय मई से अगस्त तक है। दक्षिण में तो यह गर्मी ही में अंडे देती है। परन्तु उत्तरी भारत में वर्षाऋतु में अंडे देती है। पृथ्वी में गड्ढा खोद कर चार अंडे देती है। जब जोड़ा खाने को होते हैं तो नर आकाश में उड़ कई बार किलोल करता है, बोलता है और नीचे को गिरता है। चरज और लीख का मांस गुणों में तिलूर के समान होता है। दोनों का मांस स्वादिष्ट होता है परन्तु कुछ लोग चरज का माँस विशेष स्वादिष्ट मानते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बीसवाँ अध्याय

कालिज, पोखरा, चीर, और मोनाल

उपरोक्त चारों पक्षी पहाड़ी है और हिमालय में १५०० फ़ीट की ऊँचाई से लेकर ६००० फ़ीट की ऊँचाई तक रहते हैं। अतः ये सब शिकारियों को दुष्प्राप्य हैं। इन सबों में मोनाल बहुत उच्च स्थान पर रहता है। गर्मियों में तो यह नैनीताल और शिमला आदि ऊँचे स्थान से भी अधिक ऊँचाई पर निवास करता है, अतएव थोड़े ही शिकारियों को यह पक्षी दृष्टिगोचर होता है। यह पक्षी उन्हीं शिकारियों को मिलता है जो कार्यवश या भ्रमण के लिये केदारनाथ या गंगोतरी की ओर जाते हैं। इन चारों पक्षियों को अँगरेज़ी में फ़ीजेन्टस् (Pheasants) कहते हैं। ये बहुत तेज़ उड़ने वाले पक्षी हैं, और पर्वतों के विषम भूमि में शीघ्र ही अदृश्य हो जाते हैं। अधिकांश शिकारियों को इनके शिकार का अवसर ही नहीं प्राप्त होता। इनके आकार स्वरूप और रहन सहन के बारे में कुछ लिखना आसान नहीं है। कालिज हिमाचल और उसके समीपवर्ती पहाड़ियों में तथा आसाम और ब्रह्मदेश में पाया जाता है। यह पहाड़ी जंगलों में जोड़ों और छोटे छोटे झुण्डों में रहता है। यह १५०० फ़ीट से लेकर ६०००

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फ़ीट की ऊँचाई पर निवास करता है। नर की चोटी सफ़ेद रंग की होती है और बाक़ी शरीर हल्का नीले रंग का होता है। पीठ के निचले भाग पर काली धारियाँ होती हैं और कन्धों पर थोड़ी ललाई होती है। छाती तथा पेट मैले सफ़ेद रँग का होता है। आँखों के चारों ओर लाल रँग की खाल होती है। पैर श्वेत होते हैं पर कहीं कहीं नीलापन होता है। पैरों में खार होते हैं। नर दो फ़ीट लम्बा होता है और इस लम्बाई में १ फ़ीट पूंछ भी शामिल है।

कालिज की मादा भूरे रंग की होती है। उसके आँखों के चारों ओर की खाल नर की भाँति लाल रंग की होती है। उसके दुम के बाहरी पखने नीलापन लिये काले रंग के होते हैं यह नर से छोटी होती है। यह अप्रैल से वर्षाकाल तक अण्डे देती है। पृथ्वी में गड्ढा बनाकर आधे दर्जन से एक दर्जन तक अण्डे देती है। नैपाली कालिज की चोटी काली होती है, और पीठ की धारियाँ पतली होती हैं। शिकिम के कालिज की चोटी काली होती है पर पीठ पर धारियाँ नहीं होती। मादा उपरोक्त मादा की भाँति होती है। आसाम के कालिज की छाती काली होती है और पीठ पर श्वेत धारियाँ होतीं हैं। ब्रह्मा के कालिज की सारी पीठ पर लहरदार श्वेत धारियाँ होती हैं।

कोकला या पोखरा

यह ४००० फ़ीट की ऊंचाई पर नैपाल और पश्चिमी हिमालय में पाया जाता है। यह बोलते समय "कोक, कोक, पोखराज" कहता हुआ सा प्रतीत होता है अतः इसे कोकला या पोखरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहते हैं। नर की चोटी के बीच का भाग भूरा होता है और दोनों किनारे हरे रँग के होते हैं। छाती और पेट लाल रंग का होता है, बाक़ी शरीर काली और भूरे रंग की कबरी होती है। इसकी मादा फ़ीके भूरे रँग की होती है, और चोटी नर की भाँति दो रंगी नहीं होती। भूरे पंखों पर काले धब्बे होते हैं। यह ग्रीष्म ऋतु में पृथ्वी में गड्ढे खोद कर प्रायः एक दर्जन अण्डे देती है।

चीर

चीर यह भी हिमालय पर ४००० फ़ीट की ऊंचाई पर रहती है। इसका नर चोंच से दुम तक ३ फ़ीट लम्बा होता है। दुम २ फ़ीट लम्बी होती है। यह कबरा होता है—भूरे रंग पर काले धब्बे की लकीरें होती हैं। दुम पर भी काले धब्बे होते हैं। आँखों के चारों ओर लाल रंग की खाल होती है। मादा का रंग नर की भाँति होता है परन्तु उसके काले धब्बे फीके होते हैं और वह नर से एक फ़ुट छोटी होती है। दुम भी नर के दुम से छोटी होती है। यह गर्मी में पोखरा की भाँति, पृथ्वी में गड्ढे खोद कर और उसमें तृण इत्यादि रखकर एक दर्जन अंडे देती है। जब यह बोलती है तो "चीर चीर" का शब्द करती है। अतः इसका नाम चीर रक्खा गया है। अंगरेज़ी में इसे चीर फ़ीजेन्ट (Chir Pheasant) कहते हैं।

मोनाल

यह पक्षी हिमालय के ऊंचे धरातल पर रहता है। अतः इसका शिकार सब शिकारियों को सुलभ नहीं है लेखक ने इसे एक बार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लखनऊ के बनारसी बाग (Prince of Wales Zoological Gardens) में देखा है। इसके नर का शरीर सुन्दर और विविध रंगों से चित्रित होता है, जिसका वर्णन करना कठिन है। नर की सुन्दरता को देख कर यही जान पड़ता है मानो विधि ने इसे अपने ही हाथों सँवारा है। चोटी सुन्दर पखनों की पीली होती है। मादा भूरे रंग की कबरी होती है। इसकी चोटी छोटी होती है। यह ग्रीष्म काल में पृथ्वी में गड्ढे खोदकर पांच अंडे देती है। इसे अंगरेज़ी में मोनाल फ़ीजेन्ट (Monal Pheasant) कहते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इक्कीसवाँ अध्याय

मोर और वनमुर्गा

मोर (मयूर) एक प्रसिद्ध पक्षी है। यह पहाड़ों के ऊंचे धरातल और कछार को छोड़ प्रायः भारत में सर्वत्र पाया जाता है। इसका नर बड़ा ही सुन्दर होता है। इसकी गहरी नाली ग्रीवा, चित्रित पीठ, और रंग विरंगी लम्बी दुम इसके प्राकृतिक सौंदर्य को पराकाष्ठा तक पहुँचाते हैं। मादा न तो इतनी चमकीली ही होती है और न उसकी दुम ही इतनी लम्बी होती है। वे बागों और जंगलों में रहते हैं। राजपूताना और मध्य भारत की रियासतों में इन्हें मारने का निषेध है। वहां ये आबादी में भी चले आते हैं।

यह प्रातः शायं चुगने निकलता है। दोपहर बड़े पेड़ों या झाड़ियों में व्यतीत करता है। नाज, कीड़े, छिपकली और सांप खाता है। वर्षा ऋतु में अंडे देता है। अंडा देने के समय नर का नाच देखने योग्य होता है। उस समय यह निश्चिन्त होकर नाचता है। कभी कभी लोग बहुत समीप से इसका नाच देखते हैं। हिन्दू मोर का शिकार नहीं करते। पर मुसलमान और अंगरेज़ इसका शिकार कर लेते हैं। मुसल्मान भी इसे वर्षाऋतु

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में नहीं मारते क्योंकि इस समय यह साँप बहुत खाता है। इसका मांस बहुत गर्म होता है।

वन मुर्गा

भारत में चार प्रकार के वन मुर्गा पाये जाते हैं। उनमें दो प्रकार के छोटे आकार के होते हैं और दो बड़े। बड़ी जाति का जो लाल मुर्गा होता है। वह पालतू मुर्गों के आकार और स्वरूप का होता है। पालतू मुर्गा सभी जानते हैं, अतः उसके आकार वाले जंगली मुर्ग का वर्णन अनावश्यक है। ये विशेष करके सागौन के जंगलों में रहते हैं। हिमालय से गोदावरी तक जहाँ कहीं सागौन के जंगल हैं, यह मुर्गा बहुतायत से पाया जाता है। ब्रह्म और शाम देश में भी यह पाया जाता है। सागौन के जंगलों के किनारे के खेतों में यह प्रायः चुगने निकलता है। अधिक तर नर मादों के मिले हुए झुंड निकलते हैं। जंगली मुर्गा बहुत कुछ चीर की भाँति उड़ता है। यह तेज उड़ने वाला पत्ती है। यह गर्मी में मार्च के महीने में अंडे देता है। पृथ्वी में गड्ढा खोद कर उसमें तृण इत्यादि रखकर ५ या ६ अंडे देता है।

दूसरे प्रकार का मुर्गा (जंगली) पीलापन लिये हुए कबरा होता है। इसके बदन पर छोटे छोटे धब्बे होते हैं। इसकी चोटी, लटकन, और चेहरा लाल होता है, बाकी बदन गहरा भूरा होता है। अंगरेजी में इसे ग्रे जंगल फ़ाउल (Grey Jungle Fowl) कहते हैं। इसके पंख और दुम के पखने नीलापन लिये हुए काले होते हैं। मादा के चोटी तथा लटकन नहीं होती। उसकी आँखों के चारों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओर लाल खाल होती है और उसपर पर नहीं होते। यह मार्च या अप्रैल में अण्डे देती है। पृथ्वी पर घास में लकड़ियों और सूखी पत्तियों का घोंसला बनाकर उसमें आधे दर्जन से लेकर १३, १४ अण्डे तक देती है। यह पत्ती, दक्खिन के जंगलों में, मध्य भारत और राजपूताना में, और अमरावती पहाड़ के निकट के जंगलों में रहता है।

दोनों प्रकार के वन मुर्गे तेज़ उड़ने वाले होते हैं। नये शिकारी के लिये बिना अभ्यास के उनको उड़ते में मारना कठिन है। जहाँ यह होते हैं सन्ध्या के समय गोधूली में अवश्य बोलते है। जंगल में इनका होना बिथारे हुये गोबर और लीद आदि से भी जान लिया जाता है। चोंच और पैर से गोबर और लीद को बिथरा कर ये उसमें भोजन ढूंढ़ते हैं। ये अन्न, घास के बीज, छोटे छोटे कीड़े, और फल खाते हैं। रूइयाँ के फल खाने को यह दूर तक जाते हैं। हकवा कराकर इनका शिकार अच्छा होता है।

छोटी वनमुर्ग़ी

इसकी जो क़िस्म उत्तरीभारत में पायी जाती है; वही दक्षिण भारत में भी मिलती है। नर १४ इञ्च के लगभग लम्बा होता है। ६ इञ्च की दुम होती है। रंग गहरा लाल होता है। अँगरेज़ी में इसे रेड स्पर फाउल (Red Spur Fowl) कहते हैं। इसके नर के लटकन और चोटी नहीं होती परन्तु आँखों के चारों ओर लाल खाल होती है जिस पर पखने नहीं होते। इसके पैर लाल और ख़ारदार होते हैं। मादा कुछ छोटी होती है। वह काली

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

कबरी होती है। यह बड़ी वनमुर्गी की भांति मार्च और अप्रैल में घोंसला बनाकर अण्डे देती है।

दूसरी प्रकार की छोटी वनमुर्गी के नर का सिर कन्धा और दुम हरियाली लिये काले रंग की होती है। शेष शरीर कबरा होता है जिस पर काले और श्वेत धब्बे होते हैं। मादा भूरापन लिये काले रंग की होती है और कहीं कहीं ललाई की झलक होती है। इसके पैर भी भूरे रंग के होते हैं। यह पक्षी चट्टानों पर रहना अधिक पसन्द करता है। गंगाजी के दक्षिण जंगलों में प्रायः पाया जाता है। दोनों प्रकार की छोटी वनमुर्गी अधिकतर जोड़ों में घने जंगलों में रहती है।

उपरोक्त चारों प्रकार के वनमुर्गियों का मांस अच्छा और स्वादिष्ट होता है। कुछ कहते हैं कि बड़ा लाल जंगली मुर्ग का मांस सब से अच्छा होता है, विशेषकर उसका जो देहरादून और उसके निकट के जंगलों में रहता है। गुणों में इन सब का माँस समान होता है। आयुर्वेद में वनमुर्गे का माँस स्निग्ध, बृहण, शुक्र वर्धक, कफकारी, भारी, वात, पित्त, क्षय, वमन और विषम ज्वर का नाशक माना गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बाइसवाँ अध्याय

चकोर और तीतर

चकोर पहाड़ी पक्षी है। अंगरेज़ी में भी इसे चकोर ही कहते हैं। यह पंजाब के पहाड़ों और हिमालय के ऊंचे धरातल पर पाया जाता है। भूटान और आसाम में यह नहीं पाया जाता। यह छोटे छोटे झुण्डों में रहता है। इस शिकार में स्वास्थ्य प्रद और हृदय को आनन्द देने वाली पहाड़ी वायु तथा हरियाली छटा का आनन्द मिलता है। सबेरे पहाड़ियों पर चढ़ना, चकोर को ढूढ़ना और उस पर मार के भीतर पहुँचना बड़ा ही मनोरञ्जन होता है। अतः यह शिकार श्लाघनीय है किन्तु हृष्ट पुष्ट और नवयुवक शिकारी ही इसे कर सकते हैं। शिकारी को प्रातः काल ही उठकर उस स्थान पर जाना पड़ता है जहाँ चकोरों का झुण्ड रहता हो। बहुधा ज्योंही शिकारी इन पक्षियों के समीप पहुँचता है कि वे उड़ कर दूसरी पहाड़ी पर जा बैठते हैं। शिकारी को पुनः दूसरी पहाड़ी की ओर चलना पड़ता है। वहाँ पहुँचकर यदि फ़ायर ठीक हो गई तो दो एक चकोर मिल गये, परन्तु दूसरी फ़ायर के लिये पुनः उसी प्रकार उतरना चढ़ना पड़ता है। इस प्रकार शिकारी को इस पहाड़ी से उस पहाड़ी पर चढ़ते उतरते ही बीतता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चकोर भूरे रंग का होता है, पखनों पर काली धारियाँ होतीं हैं। माथे पर से आँखों के नीचे होती हुई छाती के निकट तक एक काली धारी खिंची होती है। इस धारी के बीच के पखने मैले रंग के होते हैं। पीठ भूरी होती है और उस पर लाल धब्बे होते हैं। पेट भूरा धब्बेदार होता है। नर तथा मादा दोनों के खार होते हैं। पर मादा के खार विशेष कर पैने होते हैं। रंग में कोई भेद नहीं होता।

चकोर का माँस स्वादिष्ट होता है। आयुर्वेद में इसका माँस वीर्य वर्धक, बलकारक, स्निग्ध, गरम और वात नाशक कहा है।

तीतर

तीतर का शिकार विशेषतया जवान और स्वस्थ शिकारी ही पसन्द करते हैं, क्योंकि इसके शिकार में परिश्रम तो अधिक पड़ता है पर शिकार कम मिलता है। जंगलों में ये छोटे छोटे झुंडों में रहते हैं, झाड़ियों में दो चार से अधिक एक स्थान पर नहीं मिलते, चाहे के शिकारी की भाँति यह भी बड़ा रोचक शिकार है। शिकारी को सदैव सचेत रहना पड़ता है। न जाने कब किस झाड़ी से तीतर भाग निकले। यदि शिकारी सजग न रहा और फ़ायर तुरन्त न की गई तो तीतर पुनः किसी दूसरी झाड़ी या पेड़ की आड़ में हो जाता है और शिकारी खड़ा रह जाता है। यह शिकार के प्रारम्भ में जब पहले पहल शिकारी को देखता है, और झाड़ी से बाहर होता है तो प्रायः दौड़कर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ही झाड़ी की शरण लेता है। वहाँ से उड़ाये जाने पर ही पुनः बाहर निकलता है।

जहाँ तीतर अधिक हों, और कई शिकारी शिकार को जाँय, और तीतरों को हुसका कर शिकार किया जाय वहाँ सब शिकारियों को उचित है कि एक लाइन में होकर आगे बढ़ें। इस शिकार में यह उचित है कि शिकारी जहाँ शिकार करना हो वहाँ की पृथ्वी, बन और शिकार के बारे में पहले ही से पूरी जानकारी हासिल कर ले। जो तीतर का शिकार खिलाते हैं, वे सम्भवतः बतला सकते हैं कि कहाँ कितने झुंड होंगे, किस स्थान पर अधिक तीतर मिलेंगे, और उन पर किस ओर से चलना चाहिये। तीतर को उड़ाने के लिये सिखलाये हुए शिकारी कुत्ते भी काम में लाये जाते हैं, पर यदि ऐसे कुत्ते पूर्ण रूप से सिखे न हों तो शिकार को ख़राब कर देते हैं। कुत्तों को चाहिये कि तीतर को केवल उड़ा दें, उन पर दौड़ें नहीं। वे हाथ के इशारे तथा आवाज़ को पूरा पूरा समझें तथा मानें। ऐसे सिखे हुए कुत्ते बड़े काम के होते हैं। अँगरेज़ शिकारियों के पास प्रायः ऐसे चतुर कुत्ते देखने को मिल जाते हैं। जंगलों में जहाँ तीतर का अधिक शिकार हो कभी भी कुत्तों को इधर उधर नहीं जाने देना चाहिये। यदि कुत्तों से काम लिया गया, तो जब कुत्ते शिकार के निकट पहुँचें, शिकारी तुरन्त उस ओर बढ़े जिधर वह शिकार को उड़वाना चाहता हो। ऐसी दशा में इसका भी विचार रखना चाहिये कि वायु किधर से किधर को बह रही है। यदि वायु शिकारी की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओर से पक्षियों की ओर बह रही हो तो उड़ते में वे उत्तम निशाना बनेंगी। तीतर सदैव वायु के प्रतिकूल उड़ता है। ऐसा करने से उसे विपरीत वायु की सहायता ऊपर उठने में मिलती है। इस दशा में वे बहुत ऊंचे नहीं उड़ते, और जब वे घूमकर वायु के अनुकूल उड़ने लगते हैं तो उत्तम निशाना बनते हैं, और दूर से भी मार मिलते हैं। ऐसी दशा में बहुत शीघ्र निशाना लेना अत्यावश्यक है।

जहाँ पर पहले ही से शिकार के कारण यह पक्षी चौकन्ना रहता है वहाँ यह शिकारी को निकट नहीं आने देता। हँकवा में शिकारी तथा पक्षियों को उड़ाने वाले कुली या कुत्ते (यदि हों) सब को एक लाइन में रहना चाहिये। इस प्रकार तीतर पीछे या इधर उधर भागने से रोके जा सकते हैं। केवल आगे को ही उड़ेंगे। अपरञ्च स्पर्धालु शिकारी कोई लाभ नहीं उठा सकता। जब वह आगे बढ़ता है तो उसी का शिकार खराब होता है, और वह हँकवा करने वाले का काम करता है। तीतरों को अपने अगल बगल के शिकारी के पास भेजता है। जो पक्षी उसके पड़ोसी के समीप से उड़ते हैं वे उसके निकट नहीं आते हैं। जो कुत्ता फ़ायर होते ही छर्रों के पीछे दौड़ता है, हाथ के इशारे या सीटी आदि का कुछ ध्यान नहीं करता, और अपने मालिक की बन्दूक की मार के बाहर चिड़ियों को ढूँढ़ता है वह ऐसे शिकार में बाधक और बेकार होता है। कुत्ता इस प्रकार सीखा हो कि जहाँ भेजा जाय वहीं जाय, हाथ के इशारे को माने, और बुलाने पर तुरन्त वापस लौट आये। पुराने तथा अनुभवी कुत्ते जहाँ चिड़िया गिरती

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है वहीं किसी निशाने को देख लेते हैं, और उसी सिधान पर पहुँचकर शिकार ढूँढ़ते हैं। ऐसे कुत्ते चिड़िया के गिरते ही आगे भेजे जा सकते हैं। उड़ाने वाले कुलियों को चाहिये कि जहाँ पक्षी गिरे, वहीं किसी वृक्ष या झाड़ी इत्यादि का चिन्ह बनालें और उसी सिधान से गिरी हुई चिड़िया को उठाने जाँय। ऐसा करने से ढूँढ़ने में मदद मिलती है। सफ़ेद तीतर के शिकार में अधिक शिकार मिलने की बहुत कम सम्भावना रहती है अतः इसका शिकार बटेर के शिकार के साथ किया जाता है।

यहाँ पर कई प्रकार के तीतर पाये जाते हैं। उनमें काले और सफ़ेद तीतर बहुतायत से मिलते हैं। सफेद तीतर से काला तीतर बड़ा और देखने में अधिक सुन्दर होता है। तीतर की लड़ाई प्रसिद्ध है। यह अपने पालने वाले के पीछे कुत्ते की भाँति दौड़ता है, और उसकी सीटी पर बोलता है। अतः इसे, विशेष कर सफ़ेद तीतर को, उत्तरी भारत में लोग अधिकतर पालते हैं। यहाँ प्रातः शायं, तीतर प्रायः अपने मालिक के साथ शहरों में और गावों के बाहर घूमते और चुनते दिखलाई पड़ते हैं। तीतर एक पालतू पक्षी है और इसे हम सब भली भाँति जानते हैं। सफ़ेद तीतर को अँगरेज़ी में ग्रे पारट्रिज (Grey Partridge) कहते हैं। ये उत्तरी भारत में अधिकतर पाये जाते हैं। भारतवर्ष में, १५०० फ़ीट की ऊँचाई के नीचे, बम्बई के दक्षिण, दक्षिणी घाट, दक्षिणी बंगाल, आसाम और ब्रह्म देश को छोड़कर, यह सर्वत्र पाया जाता है।

सफ़ेद तीतर के पैरों को छोड़कर, शरीर का और हिस्सा चमकीला नहीं होता। पैर लाल और बाक़ी शरीर भूरा होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पीठ भूरी और परों पर कत्थई रंग की बेड़ी धारियाँ होती हैं। छाती और पेट के परों पर हल्की भूरी पेन्सिली रंग की बेड़ी, धारियाँ होती हैं। गले के नीचे काले रंग का कण्ठा होता है। नर के पैरों में नुकीले ख़ार होते हैं जिसे यह लड़ाई के वक्त काम में लाता है। मादा के ख़ार नहीं होते। सफ़ेद तीतर को हम सब भली भाँति जानते हैं अतः इसका विशद वर्णन करना अनावश्यक है। नर और मादा में कोई विशेष भेद नहीं होता। सफ़ेद तीतर, दीमक, कीड़े, धान, घास आदि खा लेता है। यह फ़रवरी से मई तक अण्डे देता है। यह अपना घोंसला गड्ढे में घास रखकर तथा कटीली झाड़ियों में बनाता है और सात या आठ अण्डे तक देता है।

काला तीतर सफ़ेद तीतर से बड़ा होता है। इसका नर सब प्रकार के तीतरों से अधिक सुन्दर होता है। यह बिल्कुल काला नहीं होता किन्तु उसके शरीर में काले धब्बे अधिक होते हैं। छाती पर काले धब्बों के चारों ओर सफ़ेदी होती है। पीठ पर दुम के पास भूरे रंग पर काली धारी होती है। पीठ धब्बेदार भूरी होती है। सर पर आँखों के नीचे सफ़ेद धब्बे होते हैं जो नीचे की ओर लम्बे होते हैं। पैर नारंगी रंग लिये लाल होते हैं। मादा धब्बेदार भूरे रंग की होती है। इसके पैरों में नर की भाँति ख़ार नहीं होते। काले तीतर के बच्चे जब अण्डों से निकलते हैं तो उन पर मुर्ग़ी के बच्चों की भाँति पीले रोयें रहते हैं। ये बड़े चञ्चल होते हैं, खूब दौड़ते और खेलते हैं। काला तीतर उत्तरी हिन्दोस्तान २६ अक्षांश के उत्तर की ओर और हिमालय के ऊँचे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धरातल, पर मंसूरी, नैनीताल आदि पहाड़ी स्थानों में भी पाया जाता है। इसे अँगरेज़ी में ब्लैक पार्ट्रिज (Black Partridge) कहते हैं।

दक्खिन में जो काला तीतर होता है उसे अँगरेज़ी में पेन्टेड पार्ट्रिज (Painted Partridge) कहते हैं। नर थोड़ा बहुत उत्तरी काले तीतर की भाँति होता है, केवल पैरों में खार नहीं होते मादा नर की भाँति होती है केवल हलक़ सफ़ेद होती है, और पीठ की धारियाँ कुछ कुछ दूर पर होती हैं। इसके रहने का ढंग वही है जो काले तीतर का।

ककेर का रंग क़रीब क़रीब सफ़ेद तीतर की भाँति होता है। यह उत्तरी हिन्दुस्तान, ब्रह्मपुत्र की घाटी और, हिमालय की तराई में पाया जाता है। संयुक्तप्रान्त में यह ककेर के नाम से प्रसिद्ध है, अँगरेज़ी में इसे स्वाम्प पार्ट्रिज (Swamp Partridge) कहते हैं। नर तथा मादा एक भाँति के होते हैं पर मादा के खार नहीं होते। ककेर के ऊपर के पखने भूरे और उन पर कबरी धारियाँ होती हैं। हलक़ मोर्चीले रंग की और छाती तथा पेट के पखने भूरे होते हैं और उन पर सफ़ेद धारियाँ होती हैं। पैर हल्के लाल रंग के होते हैं। उपरोक्त चारों प्रकार के तीतर भारतवर्ष के मैदान के जंगलों में शिकारी को मिलते हैं। इसके अतिरिक्त एक प्रकार का तीतर लाल रंग का होता है जो मलया प्रायद्वीप में पाया जाता है। यह अपने रंग के कारण आसानी से पहचाना जा सकता है। अतः इसके आकार और स्वरूप का वर्णन करना अनावश्यक है।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

उपरोक्त तीतरों का भोजन वही है जो सफ़ेद तीतर का है। सब तीतरों का मांस अच्छा और स्वादिष्ट होता है किन्तु सफ़ेद तीतर का मांस विशेषकर स्वादिष्ट होता है। गुणों में भी दूसरे प्रकार के तीतरों से अच्छा होता है। आयुर्वेद में भी सफ़ेद तीतर का मांस उत्तम माना गया है। तीतर का मांस हिचकी, त्रिदोष, स्वांस खांसी और ज्वर नाशक तथा बलदायक माना गया है। सफ़ेद तीतर का मांस हल्का, शीतल, और कफ और रक्त पित्त को दूर करने वाला है।

सात प्रकार के पहाड़ी तीतर यहाँ पहाड़ों पर मिलते हैं। ये सफ़ेद तीतर के आकार के होते हैं और नर के पैरों में खार नहीं होते। दुम सफ़ेद तीतर से छोटी होती है। उनमें १४ पखने होते हैं। इनके अगले पंजों का नाख़ून लम्बा होता हैं; आँखों के चारों ओर बिना पखने की लाल रंग की खाल देख पड़ती है। ये अधिकतर नदियों और चश्मों के किनारे की छोटी और घनी घास में रहते हैं, और यदि उड़े तो फिर थोड़ी ही दूर जाकर घास में छिप जाते हैं। इनमें से तीन प्रकार के पहाड़ी तीतर ब्रह्मदेश में और तीन प्रकार के उत्तरी भारत में मिलते हैं। एक प्रकार का पहाड़ी तीतर ब्रह्मदेश और यहाँ भी पाया जाता है। इसकी छाती भूरी और चोटी के पखने लाल रंग के होते हैं और उनपर काले धब्बे होते हैं। घोंटी और छाती के बीच लाल रंग का कण्ठा होता है।

दूसरे प्रकार का पहाड़ी तीतर अधिकतर हिमालय के धरातल पर दिखलाई पड़ता है। नर का सिर लाल और भवें काली होती हैं। सिर के दोनों ओर और घोंटी काली होती है और किनारा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सफ़ेद होता है। छाती भूरी, पीठ हरापन लिये भूरी, और उस पर काली धारियाँ होती हैं। मादा का सिर भूरा काले धब्बेदार होता है। सिर के दोनों ओर और घोंटी ललाई लिये भूरी होती है। इस जाति के नर और मादा का रंग एक सा नहीं होता।

तीसरे पहाड़ी तीतर के गाल श्वेत, घोंटी काली और छाती भूरी होती है। चौथे प्रकार के हिन्दोस्तानी पहाड़ी तीतर की छाती लाल होती है।

ब्रह्मा के तीतरों की तीन उपजातियों में एक का पैर हरे रंग का होता है, दूसरे की छाती पीलापन लिये भूरी होती है और घोंटी कबरी होती है। घोंटी में पखने इतने कम होते हैं कि खाल दिखलाई पड़ती है। तीसरे का हलक़ा काला और छाती भूरी होती है। पहाड़ी तीतरों का मांस चकोर के मांस के समान होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तेईसवाँ अध्याय

वटैर और लवा

वटैर को संस्कृत में वर्तक और अँगरेज़ी में केल (Quail) कहते हैं। यहाँ दो प्रकार के वटैर होते हैं जिन्हें लोग भली भाँति पहचानते हैं अतः इनके आकार, स्वरूप का वर्णन करना अनावश्यक है। यों तो इनकी कई उपजातियाँ होती हैं पर भारत में केवल दो जातियाँ—घाघर और चिनिग—पाई जाती हैं। घाघर को अँगरेज़ी में ग्रे कामन केल (Grey Common Quail) कहते हैं ये तिब्बत से यहाँ पर क्वाँर के महीने में लाखों की तादाद में आती हैं और सर्वत्र फैल जाती हैं। बैसाख के महीने में यहाँ से लौट जाती हैं। तिब्बत में जाकर अण्डे देती हैं। चिनिग वटैर को अँगरेज़ी में ब्लैक ब्रेस्टेड केल (Black breasted Quail) कहते हैं। यह यहाँ पर बैसाख के प्रारम्भ में आती है और वर्षा होते ही दक्षिण की ओर चली जाती है। उत्तरी पश्चिमी प्रान्तों को छोड़कर यह भारत में सर्वत्र पायी जाती है। चिनिग का शिकार वर्षा के प्रारम्भ में जाल से किया जाता है। रात में ईख या अरहर के खेत में चिनिग के मुल्लहे लगा दिये जाते हैं जो रात में बोलते हैं। उनकी बोली सुनकर जंगली वटैर इकट्ठा हो जाते हैं। सवेरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

होते ही शिकारी उन्हें खेत के एक सिरे से दूसरे सिरे को जहाँ जाल बिछा होता है, धीरे धीरे हाँक ले चलता है। जाल के समीप आकर वटैर जाल में फंस जाते हैं और पकड़ लिये जाते हैं। यदि बन्दूक से शिकार हुआ तो फ़ायर भी की जाती है। उत्तरी भारत में यह शिकार वर्षा के प्रारम्भ में ही होता है क्योंकि उसके बाद ये दक्षिण में चले जाते हैं। घाघर का शिकार क्वाँर से बैसाख के प्रारम्भ तक होता है। चैत में जब रबी की फ़सल कट जाती है और खेतों में अरहर और चना रह जाता है तब इनका अच्छा शिकार होता है क्योंकि सब क़रीब के वटैर अरहर और चना के खेतों में आ जाते हैं। इसके शिकार में भी मुल्लहे रात में लगाये जाते हैं। दोनों प्रकार की वटैर यहाँ लाखों की संख्या में हर साल पकड़े जाते हैं। यह तेज़ उड़ने वाला पक्षी है। पहली उड़ान में ऊपर की ओर उड़ता है।

घाघर वटैर किसी छोटे पौधे या घास के नीचे पृथ्वी में गड्ढ़ा करके घोंसला बनाती हैं और ग्रीष्म ऋतु में ७, ८ अण्डे तक देती है। चिनिग वटैर वर्षाऋतु में अण्डे देती है। यही कारण है कि वह वर्षा के प्रारम्भ में ही दक्षिण की ओर चली जाती है। यह किसी झाड़ी या खुले मैदान में गड्ढ़ा खोदकर ६ अण्डे देती है। दोनों प्रकार के वटैरों का मांस बड़ा ताक़तवर होता है। सिर काटने पर भी यदि तुरन्त छोड़ दी जाय तो कुछ दूर तक उड़ जाती है। इसका मांस हल्का और स्वादिष्ट होता है। अँगरेज़ों के बड़े खाने में वटेर का मांस अवश्य रहता है। देशी वैद्य तथा हकीम रोगी को वटेर के मांस का शोरवा ताक़त के लिये देते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

बटेर के बाद धवल का मांस उत्तम समझा जाता है और हल्का होता है। आयुर्वेदकार ने बटेर का मांस बलदायक शुक्रवर्धक अग्निकारक, रुचिकर, ज्वर और त्रिदोष नाशक माना गया है।

लवा

दो प्रकार की छोटी बटेरें होती हैं जिन्हें यहाँ पर लवा कहते हैं। ये छोटे छोटे झुण्डों में रहती हैं और खदेड़ने पर चारों ओर उड़ भागती हैं। लवा की चोंच छोटी पर मोटी होती है और सर पर अरुणिमा होती है। मत्था, गाल, और घोंटी ललाई लिये बादामी रंग के होते हैं। इन्हें अँगरेजी में बुश क्वेल (Bush Quail) कहते हैं। भवें नहीं होतीं। नर के छाती पर काली लकीरें होती हैं जो मादा के नहीं होती। ये दोनों प्रकार की लवा अपना घोंसला घाघर की भाँति बना कर अण्डे देती हैं।

दो प्रकार के लवा और होते हैं। इनके केवल तीन पंजे होते हैं। चोंच तथा पंजे पीले रंग के होते हैं और पंख बादामी तीतर के रंग के होते हैं। इनमें से एक ६" या ६½" इंच लम्बा और दूसरी ५½" इंच लम्बा होता है। बड़ी जाति की छाती में काली लकीरें होती हैं और छोटी की छाती कबरी होती हैं। बगल में काले मैले धब्बे होते हैं। नर मादा से छोटा होता है। वह नमूने का स्त्रैण होता है। लड़ाका नहीं होता। मादा का कुल काम वह सँभाल लेता है। अण्डों पर बैठता है, बच्चों को खिलाता है और देखभाल करता है। मादा न अण्डों पर बैठे और न बच्चों की निगरानी ही करे। ये प्रायः जोड़ों में रहते हैं। चिनिग बटेर की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भाँति घोसला बनाकर ८ अण्डे तक देती है। बड़ी जाति को अँगरेज़ी में बस्टर्ड केल (Bustard Quail) और छोटी जाति को लिटिल बटन केल (Little Button Quail) कहते हैं।

कभी कभी लवा भी बटेरों की भाँति जाल में फँसती है। इसका मांस बटेर से हल्का और उत्तम माना गया है। आयुर्वेद-कार इसके मांस को हल्का, मलरोधक, शीतल, मीठा, जठराग्नि को प्रदीप्त करने वाला, रक्त पित्त और हृदय-रोग नाशक मानते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चौबीसवाँ अध्याय

पेडुकी, हरियल तथा कबूतर

पेडुकी को संस्कृत में कपोत कहते हैं। यह कबूतर की उपजाति है। कबूतर को संस्कृत में कपोत कहते हैं। अँगरेज़ी में ज़ूआलोजिस्ट (Zoologist) जीवों की विद्या को जानने वाले, पेडुकी को भी कबूतर की उपजाति मानते हैं। पेडुकी को अँगरेज़ी में डव (Dove) और फ़ार्सी में फ़ाख़्ता कहते हैं। एक अँगरेज़ी पुस्तक में पेडुकी की बारह उपजातियाँ लिखी गई हैं। परन्तु ये १२ जातियाँ लखनऊ के बनारसी बाग़ में भी नहीं देख मिलतीं। यहाँ पर चार प्रकार की पेडुकी साधारणतया देखने में आती हैं और उन्हीं का वर्णन किया जायगा। इस पक्षी को लोग भली भाँति जानते हैं अतः इनके रूप, रंग, और आकार का वर्णन करना अनावश्यक है।

लखनऊ के बनारसी बाग़ में जो सब से छोटी पेडुकी देखने में आई है, वह लवा के बराबर होती है और सबसे बड़ी छोटे कबूतर के बराबर होती है। पेडुकी की बड़ी जातियों का माँस अच्छा होता है। धवल का तो बहुत ही उत्तम और हल्का माना गया है। इसके मांस को बटेर के माँस से कुछ ही न्यून मानते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

परन्तु फिर भी पेडुकी का शिकार कबूतर या बटेर आदि पक्षियों की भाँति नहीं किया जाता। कोई शिकारी सामने आ जाने पर भले ही पेडु़की पर फ़ायर कर दे, पर वह कभी भी केवल इन्हीं के शिकार के लिये मृगया के लिये नहीं निकलता। अन्य पक्षियों की भाँति, लोग इसका शिकार पसन्द नहीं करते। यह हमेशा जोड़ों में रहती है। कहावत है इनमें से एक के मर जाने पर दूसरी रो रो कर अकेले ही जीवन बिता देती है। फिर जोड़ा नहीं खाती।

धवल को धवर और पेडु़का भी कहते हैं। यह पक्षी जंगलों और बाग़ों में प्रायः देख मिलता है। यह आबादी के अन्दर नहीं आता पर गांवों के समीपवर्ती बाग़ों में प्रायः आ जाता है। धवल को अँगरेजी में रिंग डव (Ring Dove) कहते हैं। यह चोंच से दुम तक १३" इंच लम्बा होता है। चोंच आधा इंच और दुम ५ से ५½" इंच तक लम्बी होती है। दुम के लम्बे पखने कोई २½ इंच सिरे की ओर मैले श्वेत रंग के होते हैं और बाक़ी काले रंग के होते हैं। पंखों के सिरे की लम्बे पखने भूरे रंग के और बाक़ी मैले रंग के होते हैं। पीठ मैली और पेट, छाती तथा गर्दन मैली ताम्र वर्ण की होती है। गर्दन में ऊपर की ओर काला अर्ध कण्ठा होता है। चोंच स्लेटी रंग की और पैर माँस के रंग के सिफनेदार होते हैं। नर और मादा दोनों में कुछ विशेष अन्तर नहीं है पर मादा नर से कुछ छोटी होती है। धवर फ़रवरी से अक्टूबर के अन्त और नवम्बर के प्रारम्भ तक अण्डे देता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है, यह अधिकतर वृक्षों पर घोंसला बना कर उसमें दो अण्डे देता है। पेडु.की साल में, तीन, चार, पाँच, बार अण्डेदेती है। पर हमेशा केवल दो ही अण्डे देती है।

दूसरे प्रकार की पेंडुकी चित्रित होती है। पखनों पर गोल धब्बे होते हैं। यह जंगलों तथा गाँवों में प्रायः देख पड़ती है। इसको चीना कहते हैं। इसकी एक बड़ी उपजाति होती है जिसे कल्हक कहते हैं। कल्हक भारत में अक्टूबर से मार्च के अन्त तक दिखलाई पड़ते हैं और उसके बाद उत्तर की ओर लौट जाते हैं। कल्हक धँवर से बड़ा और वजनी होता है और चीना धँवर से छोटा होता है। अँगरेज़ी में इसे स्पाटेड डव कहते हैं। चीना का सिर ललाई लिये भूरे रंग का होता है। गर्दन के दोनों ओर काले और मैले धब्बों की चौसर सी बिछी होती है। पंख भूरे जिनमें ललाई लिये भूरे धब्बे होते हैं। यह पक्षी सारे भारतवर्ष में और हिमालय के ऊंचे धरातल पर पाया जाता है। यह उत्तरी भारत में फ़रवरी से अक्टूबर तक कई बार अण्डे देती है। यह अपना घोंसला झाड़ी, पेड़, और घर छप्परों में छोटे छोटे तिनकों से बनाती है और दो अण्डे देती है।

तीसरे प्रकार की पेड़ुकी इटकोहरा पेडुकी कहलाती है। यह गावों, बागों और जंगलों में प्रायः देख पड़ती हैं। यह चीना से छोटी होती है। रंग मटीला भूरा, आगे की ओर गर्दन में दोनों ओर काले और ललाई लिये भूरे रंग के धब्बे होते हैं। चोंच काली और लाल रंग की होती है। यह भी चीना की भाँति

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जंगलों, बागों, नीची झाड़ियों और पेड़ों में, और आबादी की इमारतों और छप्परों में घोंसला बनाकर अण्डे देती है। यह जनवरी से अगस्त तक दो से पाँच बार तक अण्डे देती है। प्रत्येक बार दो श्वेत रंग के अण्डे देती है। यदि पहला घोंसला किसी सुरक्षित स्थान पर हुआ और उसे किसी ने बिगाड़ा नहीं तो यह हमेशा वहीं अण्डे देगी। लेखक ने एक जोड़े को एक ही घोंसले में जो खपड़ैल के नीचे खम्भे पर था चार बार अण्डे देते देखा है। इटकोहरी को अँगरेजी में लिटिल ब्राउन डव (Little Brown Dove) कहते हैं। यह पक्षी घोंसला बनाने का स्थान चुनने में बड़ी लापरवाही करती है। यह खुले में भी घोंसला बनाती है। घोंसला छोटे तिनकों का गोल ऊपर की ओर खुला होता है। अतः कभी कभी कौआ तथा अन्य पक्षी इसके अण्डों को खा जाते हैं।

इससे छोटी वह पेंडुकी है जो धवर की भाँति केवल जंगलों और बागों में ही रहती है, आबादी में नहीं रहती। इसे जंगली पेड़ुकी कहते हैं। अँगरेजी में इसे रेड टर्टल्ड डव (Red Turtled Dove) कहते हैं। इसके नर तथा मादा एक भाँति के नहीं होते। नर का रंग तवे के रंग से मिलता हुआ कुछ कुछ भूरा होता है; गले में अर्ध कण्ठा होता है। मादा की पीठ चीना के मादा की पीठ की भाँति होती है। जाड़े में इसकी मादा अधिकतर धवल के साथ मिली हुई देख पड़ती पड़ती है। यह धवल की भाँति घोंसले बनाकर अण्डे देती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आयुर्वेदकार ने धवल का मांस हल्का, शीतल, कसैला, मीठा, धातुवर्धक, बलकारक, वात तथा पित्त को नाश करने वाला, वीर्य जनक, रक्त पित्त नाशक, रुचिकारक तथा हितकर माना है। चीना का मांस मीठा, कसैला, हल्का, कफहर, वात और संग्रहणी नाशक होता है। इटको हरा और जंगली पेडुकी के मांस का गुण चीना के समान है।

हरियल

हरियल एक प्रसिद्ध पक्षी है अँगरेजी में इसे ग्रीन पिजन (Green Pigeon) कहते हैं। इसका सारा शरीर पीलापन लिये हरा होता है। यह वृक्ष की हरियाली में इस प्रकार मिल जाता है कि स्थिर बैठे हुए हरियल को हरी पत्तियों में से ढूँढ़ निकालना शिकारी के लिये एक कठिन समस्या हो जाती है। इसके पंखों के कुछ बड़े पखने काले होते हैं। पंखों के ऊपर का रंग पीलापन लिये हरा होता है और नीचे का रंग रखीला होता है। कंधों की ओर एक एक फ़ालसई रंग का धब्बा होता है। दुम के नीचे के कुछ पखने कत्थई रंग के होते हैं और लम्बे पंखों में कुछ काले रंग के होते हैं। चोंच का अग्रभाग कुछ पीलापन लिये हुए आसमानी रंग का होता है। पैर पीले रंग के होते हैं और उनपर कुछ रोयें पीले रंग के होते हैं। यह १३ या १४ इंच लम्बा होता है। इसके नर तथा मादा एक ही भाँति के होते हैं।

एक प्रकार का हरियल हिमालय पर मिलता है। उसे कोकला हरियल कहते हैं। उसका सिर, गर्दन छाती और पेट पीलापन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लिये हुए हरे होते हैं। पीठ भूरी और दुम हरी होती है। नर के पीठ पर लाल रंग का धब्बा होता है। यह उपरोक्त हरियल के बराबर होता है। अँगरेजी में इसे कोकला ग्रीन पिजन कहते हैं।

दूसरे प्रकार का हरियल बंगाल, पूर्वी बंगाल ब्रह्मा, दक्षिणी भारत, और पश्चिमी घाट के जंगलों में और लंका में पाया जाता है। ये भिन्न भिन्न स्थानों मे भिन्न भिन्न प्रकार के होते हैं। पर इस प्रकार का पक्षी उत्तरी भारत में नहीं दिखलाई पड़ता। जहाँ पर ये पाये जाते हैं वहाँ भी बहुत कम मिलते हैं। बंगाल के हरियल की छाती और पेट भूरा होता है। दक्षिण के हरियल का पेट पीलापन लिये हरा होता है।

यह पक्षी पेड़ों पर रहता है। फल इसकी खूराक है। कहावत है कि यह पक्षी पृथ्वी पर नहीं उतरता परन्तु लेखक ने स्वयं एक बार हरियल को पानी की नाली के किनारे बैठा देखा है। लेखक के एक शिकारी मित्र ने भी हरियल को जेठ के महीने में नहर के किनारे पानी पीते देखा है। यह विशेष कर पीपल, पाकरि बरगद, महुवा इत्यादि वृक्षों पर रहता है और इन्हीं के फलों को छोटे छोटे बेर और झलबेर खाता है। ये झुण्डों में रहते हैं परन्तु अप्रैल से जूलाई तक ये जोड़ों रहते हैं। इसी समय अण्डे देते हैं। ये पीपल आम इत्यादि वृक्षों की ऊँची शाखों में अण्डे देते हैं। इसका घोंसला धवल के घोंसले के समान होता है और उनमें यह दो श्वेत अण्डे देता है।

हरियल का शिकार अधिक संख्या में नहीं होता। जब पीपल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

और पाकरि इत्यादि वृक्षों में फल आते हैं और ये पक्के फलों की लालच में इन वृक्षों पर जाते हैं तब इनका शिकार होता है। यदि शिकारी वहीं आड़ में बैठा रहे और जब जब ये आयें फ़ायर करता जाय तो अच्छा शिकार हो जाता है। यदि शिकारी पहले ही से वहाँ नहीं हुआ और बैठे और उड़ते में दो ही फ़ायर हो सकती हैं और बहुत कम मार मिलते हैं। फ़ायर होने के बाद यह पक्षी बहुत सशंक हो जाता है और दूर उड़ जाता है। जाड़ोंमें सवेरे यह वृक्षों पर बैठकर धूप लेता है। उस समय यदि झुएड बड़ा हुआ और फ़ायर की गई तो एकही फ़ायर में डेढ़ दर्जन तक मार मिलते हैं। इनका मांस उत्तम, स्वादिष्ट, गरम हल्का, शीघ्र पाका रोचक, रक्त पित्त तथा गले की बीमारियों में हितकर लिखा है।

कबूतर

जंगली कबूतर एक प्रसिद्ध और परिचित पक्षी है। यह पहाड़, जंगल, गाँव, और शहर, सभी जगह पाया जाता है। स्वरूप, आकार, और रंग के बारे में कुछ लिखने की ज़रूरत नहीं क्योंकि इस पक्षी को सभी जानते हैं। अँगरेज़ी में इसे ब्लू राक पिजन (Blue Rock Pigeon) कहते हैं। यह बहुत तेज़ उड़ने वाला और होशियार पक्षी है। इस पर जब फ़ायर हो जाती है और यह सशंक हो जाता है तब यह प्रत्येक छिपने के स्थान को जहाँ शिकारी के रहने की सम्भावना हो बड़ी शंका की दृष्टि से देखता है। प्रायः शिकारी इस पर तभी फ़ायर करते हैं जब यह बैठा हो। चाहे के शिकार के अतिरिक्त उड़ते हुए कबूतर के शिकार से मुश्किल शिकार कदाचित् ही मिल सके तेज़ उड़ते हुए कबूतरों के झुंड में

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से कुछ को मार गिराना अत्यन्त पटु तथा निशाने बाज़ शिकारी ही के लिये साध्य है। साधारण शिकारी के लिये तो यह असंभव ही समझिये।

यहाँ के जंगली कबूतरोंका रंग आसमानी होता है। गर्दन और छाती का अग्रभाग चमकीली हरियाली लिये आसमानी रंग का होता है। आंखें लाल और पैर गहरे लाल रंग के होते हैं। इसके दोनों पंखों पर मोटी मोटो काली लकीरें होती हैं। यह आबादी की इमारतों—विशेषकर ऊँचो-ऊँचो इमारतों पर रहना और बैठना बहुत पसन्द करता है। ये शहरों में सहस्रों की संख्या में रहते हैं, और वहाँ की खुली सड़कों पर प्रायः चूनते हैं। कानपूर नयेगंज जैसे बड़े मुहल्लों में ये बहुत बड़ी तादाद में देखे गये हैं। कभी कभी लेखक ने इन्हें ऊँची इमारतों के टीनों पर इतनी अधिक संख्या में देखा है, कि यदि उन पर फ़ायर हो तो दर्जनों गिरें। लेखक फ़ैज़ाबाद में कई साल तक नजूल नायब तहसील दारी पर रहा है। नौकरी की दौरान में लेखक ने फ़ैज़ाबाद के गुलाब बाड़ी के ऊँची गुम्बद पर बहुत जंगली कबूतरों को बैठते देखा है। नजूल तिरपौलिया की बुर्जों पर दर्जनों जंगली कबूतर रहते हैं। लेखक ने उन दिनों इन पक्षियों का विशेष अध्ययन किया है। लेखक के क्वार्टर के दो कमरों में यह हर मौसिम में दो तीन घोंसले बनाते थे। कभी कभी एक घोंसले में अंडा देकर बच्चों के उड़ जाने के पहले ही वही कपोती पुनः अण्डे दे देती थी। पहले वाले बच्चे दूसरे अंडा देने के पाँचवें या छठे दिन अवश्य उड़ जाते थे। लेखक ने तीन बार स्वयं इसे देखा है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कबूतर साल भर अण्डे देता है पर विशेषकर अप्रैल, जून, और मई के महीने में अण्डे देता है उसके बाद सितम्बर और अक्टूबर में अधिकता से अण्डे देता है। प्रत्येक जोड़ा तिनकों का घोंसला बनाता। ऐसा घोंसला बीच में गोला कुछ गहरा और खुला हुआ होता है। उसमें यह दो श्वेत वर्ण के अण्डे देता है। साधारण रूप से कपोती एक अण्डा पहले दिन और दूसरा अण्डा दूसरे दिन देती है। पहले दिन अण्डा हल्के खूनी रंग का रहता है पर तीसरे दिन श्वेत हो जाता है। जो अण्डा छूछा पड़ जाता है उसे कपोती फोड़ती नहीं बल्कि दूर हटा देती है। उन्नीसवें दिन अंडे फोड़े जाते हैं। मादा अपने अंडों को खूब पहचानती है। एक बार लेखक ने एक घोंसले का अंडा दूसरे घोंसले में रख दिया। मादा ने बाहरी अण्डे को हटाकर अपने ही अंडे सेये।

जब बच्चे बड़े और उड़ने लायक हो जाते हैं और किसी कारण वश कुछ दिनों तक नहीं उड़ते तो उनके माँ बाप उन्हें उड़ाने का पूर्ण प्रयत्न करने के बाद फिर त्याग देते हैं। इसे लेखक ने कई बार देखा है। एक बार जब बच्चे उड़ने योग्य हुए तो लेखक ने उनके पर काट दिये। इसके बाद दस दिन तक उनके माँ बाप उन्हें खिलाते रहे और उड़ाने का प्रयत्न करते रहे। दसवें दिन लेखक कार्यवश छुट्टी लेकर घर गया। जब एक सप्ताह बाद लौटा तो दोनों बच्चे एक ही स्थान पर झरोखे के सामने मरे हुए मिले। वे कई दिन के मरे थे क्योंकि बदबू कर रहे थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छाती चीरने पर पेट में चारा नहीं मिला। इससे यह मालूम पड़ा कि बच्चे प्यास और भूख के कारण मर गये थे और उनके माँ बाप ने उन्हें त्याग दिया था। दुबारा फिर लेखक ने ऐसा ही किया। इस बार भी कोई डेढ़ सप्ताह के बाद मां बाप ने बच्चों को त्याग दिया। तीसरे बार फिर यही तजुर्बा किया गया। एक सबल बच्चा तो उड़ गया पर दूसरा जो निर्बल था रह गया। उसको मां ने उसे चार दिन तक खिलाया और तब छोड़ कर चली गई। दो दिन बाद लेखक ने उसे चावल खिलाना प्रारम्भ किया। वह आठ रोज़ तक जीवित रहा और तब दुर्भाग्य वश तख्ती के नीचे दब कर मर गया।

कबूतर अधिकतर अनाज ही खाता है। जब काफ़ी चारा नहीं मिलता तो छोटे छोटे कंकड़ भी चुनकर खा जाता है। इसके पेट से प्रायः कंकड़ निकले हैं। साधारणतया कबूतर कीड़े नहीं खाता पर कभी कभी लोगों ने इन्हें कीड़े खाते देखा है। उपरोक्त जंगली कबूतरों से भिन्न एक और कबूतर कभी कभी दिखलाई पड़ता है। यह कुछ छोटा होता है और पेट सफ़ेदी लिये होता है। यह हिमालय के ऊंचे धरातल पर रहता है परन्तु जाड़ों में यहाँ आ जाता है। इसकी गर्दन और छाती में हरियाली चमक नहीं होती।

तीसरे प्रकार का कबूतर जो यहाँ कभी कभी दिखलाई पड़ता है वह यूरोपीय कबूतर है। इसका रंग तो देशी कबूतर सा होता है पर पीठ पर एक सफ़ेद लकीर इस ओर से उस ओर तक होती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चौथे प्रकार का कबूतर उत्तरीभारत में जाड़े के समय आता है। उसके पैर पीले होते हैं। कबूतर का मांस स्वादिष्ट और गरम माना जाता है। इसके मांस को आयुर्वेदकार भारी, स्निग्ध, ग्राही, शीतल, वीर्यवर्धक, और रक्त पित्त तथा वात नाशक मानते हैं। पक्षाघात की बीमारी में वैद्य और हकीम इसके मांस को रोगी को खिलाते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पचीसवाँ अध्याय

खरगोश

इसे देहात में खरहा या चौगड़ा और शहर में खरगोश कहते हैं। अँगरेज़ी में इसे हेयर (Hare) कहते हैं। इसका शिकार कम मनोरंजक नहीं होता। इसके शिकार में तीव्र दृष्टि और सधे हाथ की आवश्यकता रहती है। झाड़ी या दूसरे किसी प्रकार की आड़ में ज्योंही यह देख मिले त्योंही फ़ायर करना चाहिये क्योंकि यह भागने में विलम्ब नहीं करता। यह जन्तु तीर की भाँति भागता है, अतः यदि शीघ्रता नहीं की गई तो लक्ष्यवेध असम्भव सा हो जाता है क्योंकि विलम्ब होने से वह छर्रे की मार के बाहर हो जाता है। बैठे हुए चौगड़े (खरगोश) को तो सभी शिकारी मार सकते हैं पर भागते हुए को मारना चतुर निशानेबाज़ ही का काम है। यदि यह भाग खड़ा हुआ तो साधारण शिकारी हक्का बक्का सा खड़ा रह जाता है और तब तक यह छर्रे की मार से बाहर हो जाता है।

यदि यह शिकारी की ओर से आगे को भाग रहा हो तब इसे ३० गज़ या इससे भी कम दूरी से मारना चाहिये। इससे अधिक दूर निकल जाने पर यदि इसके पिछले भाग में एकाध

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छर्रे लग भी गये तब भी यह घायल होकर भाग निकलता है। यदि ४० गज़ से फ़ायर किया गया तो यह अवश्य ही घायल हो जायगा पर गिरेगा नहीं। यदि छर्रा किसी मर्म स्थान में न लगा और खर्गोश घायल होकर भाग गया, तो उसकी बड़ी शोचनीय मृत्यु होती है। हम पहले ही कह आये हैं कि शिकारी का यह कभी ध्येय नहीं होना चाहिये कि शिकार घायल होकर निकल भागे। यदि शिकारी दूर से फ़ायर करता है तो अच्छे शिकारी उसे लापरवाह और निर्दयी कहते हैं। क्योंकि प्रथमतः तो उसे शिकार हाथ नहीं लगेगा और दूसरे उसके फ़ायर से घायल होकर यह जन्तु तड़प तड़प कर प्राण देता है। अतः अच्छी मार के अन्दर ही खर्गोश का शिकार करना चाहिये। इस पर दूसरी फ़ायर बड़ी कठिनता से सफल होती है।

चौगड़ा एक प्रसिद्ध जन्तु है, इसे सभी शिकारी पहचानते हैं। इसके कान लम्बे होते हैं, पीठ के रोयें भूरे और पेट श्वेत रंग का होता है। इसके पिछले पैर इतने लम्बे होते हैं कि यह लम्बी छलांगे मार कर भागता है। इसकी खाल इतनी मुलायम होती है कि थोड़े ही धक्के से निकल आती है। यह जंगलों और झाड़ीदार बग़ीचों में रहता है। खेतों के निकट पलाश और करौंदा के जंगलों में यह अधिकता से पाया जाता है। यह दूब और ऊख के छोटे पौधों की सींक खा जाता है। सूर्यास्त के समय, जब यह ज्येष्ठ या बैसाख के महीने में, ऊख की नरम कोपलों को खाने आता है, तब आड़ में छिप कर आसानी से मारा जा सकता है। वर्षा के प्रारम्भ में, यदि प्रथम दिन, दिन में वृष्टि हुई, तो सायंकाल ये

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बहुतायत से देख पड़ते हैं, और आसानी से अधिक संख्या में मार मिलते हैं। ये वर्षा, तथा शिशिर काल में बच्चे देते हैं।

खर्गोश का मांस रूक्ष, पर शीघ्र ही पचने वाला तथा स्वादिष्ट होता है। आयुर्वेदकार ने इसका मांस शीतल, हल्का, ग्राही, रूक्ष, सुस्वादु हितकारी, अग्नि कारक, कफ पित्त नाशक साधारणतया वातकारी कहा है। इसे ज्वर, अतीसार शोष, रुधिर विकार और कासश्वास नाशक माना जाता है।

चौगड़ा के मांस के समान ही साही का मांस होता है पर वह चिकना होता है। साही का मांस श्वास, खांसी, रुधिर विकार, शोष तथा त्रिदोष नाशक है। साही के सारे शरीर पर कड़े और नुकीले कांटे होते हैं। अँगरेजी में इसे पारकुपाइन (Percupine) कहते हैं। यह रात्रि में बिल के बाहर निकलती है और उसी समय खेतों के किनारे आड़ में बैठकर इसका शिकार किया जा सकता है। यह आलू, घुइयां, शकरकन्द और गाजर आदि फ़सल की चीज़ें बहुत खाती है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छब्बीसवाँ अध्याय

मृग का शिकार

सांभर, बारह सिंगा, चीतल आदि मृग की अनेक उपजातियाँ हैं। इनमें चीतल, हिरण, ऐण, और कुरंग तो मैदानों और जंगलों में पाये जाते हैं, परन्तु अन्य उपजातियाँ अधिकतर पहाड़ी और तराई के घने जंगलों में ही देखी जाती हैं। मृग का शिकार एक प्राचीन प्रथा है। इसी शब्द से 'मृगया' निकली है। प्राचीन काल में क्षत्रिय राजे मृगया को एक मनोरंजन का विषय मानते थे। अँगरेजी में मृग के शिकार को डियर स्टाकिङ्ग (Deer Stacking = चुपके से छिपकर मृग को मारने के लिये निकट जाना) कहते हैं। गन से चीतल, हिरण, आदि का शिकार करने के लिये शिकारी को बहुत ही छिपकर, और कभी कभी भेष बदल कर गन की मार के अन्दर पहुँचना पड़ता है। उसे कहीं झुककर तो कहीं घुटनों के बल आगे बढ़ना पड़ता है। अक्सर उसे लेटकर आगे खिसकना पड़ता है और तब वह गन की अच्छी मार में मृग से प्रायः ८० गज़ की दूरी पर पहुँच पाता है। स्टाकिङ्ग याने छिपकर आगे खिसकने की कला, का अभ्यास पूर्ण रूप से या तो मैदानों में, या ढ़ाक तथा करौंदा आदि के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कम घने जंगलों में ही सम्भव है। सघन वनों में न स्टाकिङ्ग हो ही पाती है और न उसकी आवश्यकता ही है। मैदानों में भी राइफ़ल के शिकार में स्टाकिङ्ग की बहुत थोड़ी ही आवश्यकता होती है। राइफ़ल की लम्बी मार के कारण मृग दो ढ़ाई सौ गज़ से ही मार दिये जाते हैं। २०० गज़ की दूरी से शिकारी को देखकर वे बहुत कम भागते हैं। केवल वे ही मृग इतनी दूर से शिकारी को देखकर भाग खड़े होते हैं जिन पर या तो कभी फ़ायर हो चुकी हो या घायल हो चुके हों। किन्तु इतनी दूर से जब कोई ऐसा भुक्त भोगी पुराना मृग भाग खड़ा होता है, तो अन्य भी शीघ्र ही भाग खड़े होते हैं।

सन्ध्या को डियर स्टाकिङ्ग अच्छी होती है किन्तु प्रातःकाल स्टाकिङ्ग के लिये सबसे उत्तम समय है। उस समय की स्वच्छ जंगली वायु, वन की हरियाली छटा, और मृगया का परिश्रम शिकारी को स्वस्थ बनाता है और भूख बढ़ाता है। इस शिकार में शिकारी को बहुत छिपकर होशियारी तथा परिश्रम से मृग का पीछा करना होता है। यदि अच्छा सींगो वाला मृग हस्तगत हो गया तो उसका परिश्रम सार्थक हो जाता है और उसके आनन्द की सीमा नहीं रहती।

स्टाकिङ्ग करते समय मृग के झुंड में उनके बच्चे उछलते और कूदते देख मिलते हैं। वे अपनी माँ की देह से अपनी देह रगड़ते हैं, कभी दो चार तितर बितर होकर उछलते कूदते हैं। बड़ा ही सुहावना दृश्य देख पड़ता है। यदि फ़ायर करने को न मिले तब भी मैदानों और जंगलों में इन बच्चों की खेल और मृग के गोल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को शांति से घूमते देखकर शिकारी की आत्मा प्रसन्न हो जाती है और उसके चित्त की चिन्ता दूर हो जाती है।

शक्ति, गति, दृष्टि, तथा सूंघकर पता लगाने की क्रिया में मृग शिकारी से भी बढ़कर होता है। इनकी दृष्टि बड़ी तीव्र होती है, नासिका में दूर से गन्ध पाने की अपूर्व शक्ति होती है, तथा थोड़ा सा शब्द भी इन्हें बड़ी दूर से ही सुनाई पड़ जाता है। ये अपूर्व गुण सदैव इनकी रक्षा करते हैं और मृगया प्रेमी के प्रयास को विफल कर देते हैं। अतः प्रत्येक शिकारी को मृग की इन विशेषताओं का ध्यान रखते हुए तब मृगया में प्रवृत्त होना चाहिये। अपनी तीव्र दृष्टि के कारण शिकारी के हाथ की बन्दूक वह दूर ही से देख लेता है और शिकारी को पहचान लेता है और सशंक हो जाता है। इसके अतिरिक्त छिपे हुए शिकारी के गन्ध को दूर ही पाकर वह जान लेता है कि कोई मनुष्य निकट है। चूंकि वायु ही गन्ध को वहन करती है अतः शिकारी को यह जान लेना चाहिये कि वायु किधर से किधर को बह रही है। जिस ओर से वायु चल रही हो उस ओर से मृग पर यथा सम्भव कभी भी नहीं जाना चाहिये। इसी प्रकार इसके सुनने की अपूर्व शक्ति का भी प्रतिकार करना होगा। स्टाकिङ्ग के समय जरा भी शब्द न हो। सांभर के कानों में यह शक्ति अपूर्व रीति से कार्य करती है। वह बहुत धीमे शब्द को भी दूर से सुन लेता है। यह प्राणी अधिकतर घने जंगलों में रहता है अतः भगवान् ने उसे सुनने की अद्भुत शक्ति प्रदान की है। उसके कर्ण दूर से ही आते हुए बैरी की सूचना दे देते हैं। वह सशंक होकर अपनी रक्षा में प्रयत्न

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शील होता है। इस कारण से भी शिकारी को वायु को विपरीत करके तब मृग पर जाना चाहिये। मृग मधुर ध्वनि को बहुत पसन्द करता है। वीणा और बांसुरी की ध्वनि पर तो वह इतना मुग्ध हो जाता है कि कभी कभी अपने प्राणों को भी गँवा बैठता है।

बहेलिये प्रायः बांसुरी बजाकर उसके समीप पहुँचते हैं और वध कर डालते हैं। परन्तु इस प्रकार मृग की हत्या करना शिकारी के लिये अनुचित है। इसके यह माने कदापि नहीं हो सकते कि स्टाकिंग करके पुराने और बड़े सींग वाले मृगों का शिकार न किया जाय।

मृग इतना होशियार जीव होता है कि चरने या बैठने के पहले वह चारों ओर भली भाँति देख लेता है। तदुपरान्त यदि कोई जीव देख पड़े या छिप जाय तो मृग उसे अवश्य देख लेगा। पुराने मृग प्रायः बैठे हुए घण्टों सन्देह वाली वस्तु को देखते रहते हैं। यों तो ठीक ठीक पता नहीं चलता, पर यह निश्चय है कि वे छिपे हुए शिकारी को देखा करते हैं। जहाँ उसकी स्थिति में कुछ भी फ़रक पड़ा या सिर ऊँचे नीचे हुआ कि मृग भाग खड़े हुए। इसके बाद झुण्ड के सभी मृग भाग जाते हैं। यदि कोई बच्चा या नवयुवक मृग शिकारी को देख कर चौकन्ना हुआ तो सब नहीं भागेंगे, पर यदि कोई पुराना मृग या मृगी चौकन्ना होकर भगी तो झुंड के सभी उसका अनुसरण करके भाग खड़े होते हैं।

हम कह आये हैं कि मृग के शिकार का सबसे उत्तम समय प्रातः काल का है। उस समय नित्य क्रिया से छुट्टी पाकर, और कलेऊ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के लिये कुछ साथ लेकर स्टाकिङ्ग के लिये निकल जाना चाहिये। कलेऊ का प्रबन्ध इस लिये आवश्यक है कि कौन जाने शिकारी कब घर लौटे। गर्मियों में प्रायः शिकारी १० बजे तक मृगया समाप्त कर देने का विचार करते हैं, पर कभी कभी उन्हें १२ बज जाता है। शिकार पर जाने के पहले शिकारी को बन्दूक़ और कातूसों का भली भाँति निरीक्षण कर लेना चाहिये। नौकरों के भरोसे पर इस काम को नहीं छोड़ देना चाहिये। यह प्रायः देखा गया है कि नौकर कातूसों में गड़बड़ कर देते हैं। गोली और गराब की जगह छर्रे के कातूस रख देते हैं। इस शिकार में एक अच्छी खुखरी या चाकू भी सदा पास रखना चाहिये। इसके अतिरिक्त बन्दूक़ को किसी गिलाफ़ ही में ले चलना चाहिये। यदि नली खुली रहे तो धूप में दूर से ही चमकेगी। जब शिकारी निकट के जंगल या मैदान में पहुँच जाय जहाँ मृग पाये जाते हों, तो वहाँ की पृथ्वी को भली भाँति देख कर तब सावधानी से स्टाकिङ्ग प्रारम्भ करे। यदि शिकारी निपुण हुआ तो वह स्वयं इसका प्रबन्ध कर लेगा। नये शिकारी अनुभवी शिकारी के साथ यदि नहीं हुए तो वे होशियार और अनुभवी शिकार खिलाने वाले कुली की सलाह और मदद लेते हैं। नये शिकारी को चाहिये कि वह किसी अनुभवी शिकारी से स्टाकिङ्ग भली भाँति सीखे। पहले उसे किसी निपुण शिकारी की नकल करनी चाहिये, इसके बाद तो वह धीरे धीरे स्वयं कुशल हो जायगा। उसे प्रथमतः किसी नये पट्ठे मृग पर बन्दूक़ का अभ्यास करना चाहिये। ध्यान

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहे कि मादा पर फ़ायर न हो क्योंकि मादा का शिकार नहीं किया जाता।

पृथ्वी का यदि पूरा ज्ञान न हुआ तो स्टाकिङ्ग में पूर्ण सफलता नहीं मिलती। अतः स्टाकिङ्ग के प्रारम्भ ही में यह जान लेना परमावश्यक है कि कहाँ से और किन झुरमुटों से स्टाकिङ्ग प्रारम्भ की जा सकेगी और शिकारी किन साधनों से मार के अन्दर पहुँच सकता है। तथा यदि १०० गज़ के अन्दर कोई आड़ न हुई तो किस प्रकार मृग का शिकार किया जा सकता है। शिकारी को यह जानना भी आवश्यक है कि वायु किस ओर से चल रही है। उसे यह भी देख लेना चाहिये कि झुण्ड से दूर कोई मृग छिटक तो नहीं गया है जो सम्भवतः उसे देख ले और भागकर औरों को सचेत कर दे। जब शिकारी मृग के समीप पहुँचे तब न तो कोई शब्द हो, और न शिकारी हिले डुले। मृग साधारण आवाज़ और शिकारी की गति में तनिक भी परिवर्तन का अनुभव कर लेता है और सतर्क होकर इधर उधर देखने लगता है। जंगलों में जब ये शब्द या गन्ध से सतर्क होते है, तब चारों ओर को मुंह करके, अपने लम्बे लम्बे कानो को आगे झुकाये हुए, ध्यान पूर्वक आगे की ओर देखते और अनुभव करते हैं। यदि शिकारी मृगों को इस दशा में देखे तो उसे तुरन्त समझ लेना चाहिये कि वे शंकित हो गये है। उस समय उसे निश्चेष्ट रूप से आड़ में छिप जाना चाहिये और जब पुनः वे शान्ति से चरने लगे तब आगे बढ़ना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

सघन बनों में स्टाकिङ्ग की विशेष आवश्यकता नहीं पड़ती। आड़ के कारण शिकारी सरलता से मृगों के समीप पहुँच सकता है। यही दशा ऊँची फ़सल वाले खेतों की भी समझना चाहिये। जंगलों में शिकारी के लिये आवश्यक है कि वह सदैव ध्यान में रक्खे कि वह कहाँ है और शिकार कहाँ है। शिकार के समीप वाले यदि किसी ऊंचे पेड़ को ध्यान में रक्खा जाय तो स्थान नहीं भूलता। बन की सघन झाड़ियों में खड़े हुए हिरन कठिनता से देख मिलते हैं, और यदि वृक्षों और लता कुन्जों से होकर ये भाग निकले तो इन्हें मार लेना अत्यन्त कठिन हो जाता है। इस दशा में प्रायः निशाना चूक जाता है। परन्तु यदि भागते में ही फ़ायर करना आवश्यक हुआ तब किसी पेड़ के सामने मैदान की भाँति निशाना लेकर फ़ायर किया जा सकता है।

जंगल में यदि शिकारी एकाएक मृगों के झुण्ड को मार के बाहर देखे, और वे भी शिकारी को देख ले जाँय, तो शिकारी बिना मृगों की ओर देखे हुए सीधे आगे की ओर बढ़े। और आगे बढ़ कर सघन कुञ्जों की आड़ में छिपकर स्टाकिङ्ग करे। यदि मृग मार के अन्दर मिलें तो कुली को तो आगे बढ़ जाने दे और स्वयं वहीं रुक कर फ़ायर करे।

जंगल में यदि मार के अन्दर पहुँचना असम्भव हो तो शिकारी को ऐसी जगह पर बैठना चाहिये जहाँ से होकर मृग अक्सर निकलते हों।यदि सम्भव हो तो उसी ओर हँकवा करावे। होशियार हँकवा करने वाले शिकारी कुली इच्छानुसार जिधर चाहें उधर मृग को सरलता से ले जा सकते हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुछ तो इस काम में इतने प्रवीण होते हैं, कि मृग को धीरे से लाकर, मैदान में भी छिपे हुए शिकारी के समीप कर देते हैं। वे बार-बार झुककर कंकड़ या कण्डा इत्यादि बीनने के व्याज से धीरे-धीरे मृगों के समीप पहुँचते हैं, और मृग उन्हें साधारण कृषक समझ कर धीरे-धीरे हटा करते हैं किन्तु भागते नहीं। पर इस प्रकार मृग का शिकार करना स्टाकिङ्ग नहीं कहा जा सकता।

कभी-कभी, जंगल और फ़सल के खेतों में हिरण, ऐड़ तथा कुरङ्ग उन स्थानों पर नहीं दिखलाई पड़ते जहाँ वे अक्सर रहते रहे हों। जब इसका पता न चले कि वे किस ओर गये हैं तब शिकारी को चाहिये कि उनके खुरों के चिन्हों को पृथ्वी पर देख कर उनका अनुसरण करे और उन्हें ढूँढ़ निकाले। पर यह उन्हीं जंगलों में सम्भव है जहाँ घनी घास और पत्ते पृथ्वी पर न हों। फ़सल वाले खेतों में तो खुरों के चिन्ह ढूँढ़ लेना कुछ कठिन नहीं है। खुरों के चिन्हों को देख कर यह जाना जा सकता है कि वे ताजे हैं या देर के, बड़े के हैं या छोटे के, और हिरन किस ओर गये हैं। बड़े नर के खुर के निशान बड़े और कुछ गोले होते हैं। किन्तु जब पृथ्वी नरम होती है और हिरन मन्द गति से चलते हैं तभी बड़े निशान बनते हैं। यदि भूमि कड़ी हुई और हिरण तीव्र गति से गये हो तो बड़े निशान नहीं बनेंगे। कुछ शिकारी स्टाकिङ्ग में इतने दक्ष होते हैं कि मृगों के चरणचिन्ह देख कर, जङ्गलों और फ़सल के खेतों में उनके अत्यन्त समीप

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाकर उन पर फ़ायर करते हैं और सफल होते हैं। वे मैदान में भी हिरण को गन से मार लेते हैं।

स्टाकिङ्ग में शिकारी को झुके-झुके, घुटनों के बल और जब आड़ नीची हो तो पेट के बल लेटे-लेटे, आगे को बढ़ना पड़ता है। वह गर्द, और कीचड़ का कोई विचार नहीं करता। इस प्रकार महान् परिश्रम करता हुआ जब शिकारी मृग के समीप बन्दूक़ की मार के अन्दर पहुँचता है तब उसे बहुत ही होशियारी से आगे की ओर खिसकना पड़ता है। यदि फ़ायर के स्थान में उसे अच्छा सींगों वाला मृग देख मिला तो वह सब परिश्रम को भूल जाता है। पुराने सिंगाड़े को देखते ही नये शिकारी का दिल धड़कने लगता है और हाथ कांपने लगते हैं। ऐसी दशा में उसे कभी भी फ़ायर न करनी चाहिये। जब शिकारी के दिल की धड़कन और हाथों की कँप कँपी मिट जाय तब उसे लेटे ही लेटे या बैठकर और बन्दूक़ को लक्ष्य की सिधान में लाकर, फ़ायर करने के लिये सन्नद्ध होना चाहिये। यदि बैठकर फ़ायर करनी है तो बाँये हाथ की कोहनी को बाँये पैर के घुटने पर टेक कर, ठीक निशाना लेकर, और श्वांस रोक कर धीरे से लबलबी को दबाना चाहिये।

पहली फ़ायर करने में शिकारी का यह सदैव अभिप्राय रहता है कि उसकी गोली मृग के हृदय, कलेजे, या फेफड़े में, या किसी अन्य मर्म स्थान में लगे जिससे वह शीघ्र ही धराशायी होकर प्राण त्याग दे। फ़ायर करते समय यदि मृग शिकारी की ओर मुँह या दुम किये खड़ा हो तो थोड़ा रुक जाना चाहिये। जब वह

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

घूम कर तिरछा हो तब उस पर फ़ायर करनी चाहिये। तिरछा होने में यदि शिकारी के निकट उसकी दुम हो और सर दूरी पर हो तो अति उत्तम है। ऐसी दशा में उसके शरीर के बीचों बीच निशाना लेना चाहिये। यदि सर निकट हो और दुम दूर हो तो अगले पैरों से ६ इञ्च पीछे शरीर के बीच में निशाना लेना चाहिये। दोनों ही दशा में दिल, फेफड़ा, या कलेजे में गोली के लगने की सम्भावना रहती है। जब मृग शिकारी की ओर मुँह किये हो नये शिकारी को कभी भी फ़ायर न करनी चाहिये। ऐसी दशा में निशाना छोटा और कठिन होता है और चुकने की सम्भावना अधिक रहती है। भागते हुये मृग को मारना कठिन है, और उसमें पूर्ण अभ्यास की ज़रूरत है पर ये सब नियम नये शिकारियों के लिये ही लिखे जाते हैं। निपुण और अनुभवी शिकारी जैसी भी दशा में लक्ष्यवेध कर लेगा। उसे तिरछा होने या घूमने की प्रत्याशा में समय नष्ट करने की बिलकुल ज़रूरत नहीं होती। यदि निशाना ठीक लिया गया और फ़ायर ठीक हुई तब मृग पर गोली लगने के साथ ही साथ, एक पट्ट का शब्द होगा। शिकारी को चाहिये कि फ़ायर करने के बाद इस शब्द को ध्यान से सुने। यदि गोली सिर या रीढ़ में लगी और रीढ़ टूट गई तब वह गिर कर मर जाता है। यदि रीढ़ जख़्मी तो हुई पर टूटी नहीं तो वह गिर कर उठता है और संभल जाता है। पहले दो अगले पैरों पर खड़ा होता है और फिर सँभल कर भागता है। यदि शिकारी ने उसे भागने के पहले ही चाकू या दूसरे फ़ायर से मार नहीं डाला तो वह भाग निकलता है और फिर उस शिकारी के हाथ नहीं आता।

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

यदि गोली दिल, कलेजे या फेफड़े में लगी हो तब वह गिरकर, या खड़े ही, थोड़ी दूर दौड़ेगा और पुनः सिर के बल गिरकर वहीं ढेर हो जायगा और मर जायगा। यदि गोली पैर में लगी तो वह तीन पैरों से बड़ी तेज़ी से भाग जायगा। पेट में गोली लगने पर वह भाग जायगा पर २४ घंटे के अन्दर अवश्य मर जायगा।

यदि मृग के किसी मर्म स्थान पर गोली नहीं लगी तो वह मृत्यु को नहीं प्राप्त होता। प्रायः कुछ दिनों तक दुःख मय जीवन व्यतीत करके पुनः अच्छा हो जाता है। लेखक ने स्वयं ऐसी एक हरिणी देखी थी जो पहले गोलियों से घायल हो चुकी थी। एक पैर लङ्गड़ा हो गया था। वह तीन पैरों से चलती थी। लेखक के भाई "राय बहादुर," सूबेदार, महावीर सिंह, ओ० बी० ई०, ने इस हरिणी को, जब वे शिकार में गये थे, देखा और उन्होंने उसे मारकर उसके कष्टों का अन्त किया। उस दिन लेखक भी शिकार में उनके साथ था। यह हरिणी बड़ी कठिनता से मार मिली क्योंकि वह पहले ही से बहुत सतर्क हो चुकी थी। मारने के बाद लेखक ने देखा कि उसका पहले का घाव तो अच्छा हो गया था पर पैर टूटकर टेढ़ा हो गया था। खाल निकालते समय छाती के नीचे के भाग में दो गोली के घाव और देख मिले जो अच्छे हो चुके थे। इस दुखिया ने बहुत दिनों दुःख उठाया था और तब कहीं वे घाव अच्छे हुए थे।

जब शिकारी लेटकर या बैठकर फ़ायर करता है उस समय यदि कोई टेक नली रखने के लिये मिले तो उसे चाहिये कि उस टेक पर नली रखकर तब फ़ायर करे। परन्तु भागते हुए शिकार

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर नली टेक पर रखकर फ़ायर नहीं की जा सकती। ऐसी अवस्था में शिकारी को नली को इधर उधर हटाकर निशाने पर बैठाने की आवश्यकता सदैव बनी रहती है और टेक का उपयोग असम्भव सा हो जाता है। नली को किसी कुली की पीठ या कन्धे पर कभी नहीं रखना चाहिये। वह श्वास लेते समय अवश्य हिलेगा और नली के किंचिन्मात्र भी हिल जाने से वार खाली जायगा। किसी कड़ी वस्तु पर या नली रखकर फ़ायर करना भी उचित नहीं है। क्योंकि बारूद के दगते ही नली ऊपर को ओर उछलेगी, और गोली निशाने से अलग चली जायगी।

स्टाकिङ्ग करने में जिस महान् परिश्रम को शिकारी अपने सिर ओढ़ता है, वह यदि फ़ायर ठीक नहीं हुई तो सब विफल हो जाता है। ठीक फ़ायर करना कोई आसान काम नहीं है। अक्सर त्रुटियाँ हो जाती हैं, और सारा प्रयास विफल हो जाता है। सफल फ़ायर करने के लिये पहले तो इसकी आवश्यकता है कि लक्ष्य की दूरी का यथार्थ अन्दाज़ा लगा लिया जाय और तब मार के अन्दर फ़ायर की जाय। कुछ शिकारी बड़ी दूर ही से फ़ायर करते हैं, कुछ अत्यन्त निकट से फ़ायर करते हैं। दोनों ही आदतें बुरी हैं। फ़ायर न तो बड़ी दूर से ही करनी चाहिये और न अत्यन्त समीप ही से। फ़ायर रेन्ज के अन्दर आकर करनी चाहिये शिकारी को रेंज का पता लगाने के लिये सर्व प्रथम शिकारी की दूरी का सही अन्दाज़ा लगाने का अभ्यास करना चाहिये। शिकारी को चाहिये कि पहले वह २५, ४०, ६०, ८०, १०० गज़ का अन्दाजा लगाये और तब स्वयं उसे नाप डाले। जब इतनी दूरी का

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

अन्दाजा करना आ जाय तब १२५, १५०, २०० और ३०० गज़ के फ़ासलों को अन्दाजने का अभ्यास करे। इस अभ्यास में निम्नलिखित बातों की ओर हम शिकारी का ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट करते हैं। यदि पृथ्वी ऊँची नीची हुई, या शिकारी और शिकार के बीच की पृथ्वी का रङ्ग शिकार से मिलता जुलता हुआ, या शिकार साया में हो या कुहरा पड़ता हो, या गोधूली में रोशनी कम हो गई हो, या कड़ी दुपहरी चमकती हो, या बैठे या लेटे में दूरी अन्दाजी गई हो, तब दूरी ज्यादा अन्दाज उठती है। इसी प्रकार यदि पृथ्वी बराबर हो, या शिकारी और शिकार के बीच पानी हो, या प्रकाश ज्यादा हो, या सूर्य शिकारी के पीछे हो, या शिकार और पृथ्वी का रङ्ग एक सा न हो, या लक्ष्य बड़ा हो, तब दूरी कम अन्दाज उठती है। यदि शिकारी इन सब बातों की ओर दृष्टि रखते हुए दूरी अन्दाजता है तो उसे कभी धोका नहीं होगा।

आड़ से फ़ायर करने के बाद कभी भी कूदकर खड़ा न होना चाहिये और न किसी प्रकार का शब्द ही करना चाहिये। यदि शिकारी चुप छिपा रह जाता है तो उसे दूसरी फ़ायर करने का अवसर मिल जाता है। फ़ायर करने के बाद यदि मृग ने शिकारी को नहीं देखा तो प्रायः उछल कूद कर पुनः समीप ही खड़ा हो जाता है, और चारों ओर देखने लगता है कि कहाँ से और कैसे आवाज़ आई है इसके अलावा, यदि शिकारी नहीं देख मिला, तो घायल मृग भी बहुत दूर नहीं जाता। वह निकट में ही किसी आड़ में बैठ जाता है। पर यदि कहीं शिकारी को उसने देख

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लिया तो वह बड़ी दूर भाग जाता है। अतः फ़ायर करने के बाद, यदि कोई खास ज़रूरत नहीं हुई, तो छिपा रहना हमेशा अच्छा होता है। कुछ शिकारी, जो राइफल से शिकार करते हैं, अक्सर २००, या ३०० गज़ तक, जब तक मृग दिखलाई पड़ते हैं, उस पर अनवरत बन्दूक़ दाग़ते चले जाते हैं। यह अनुचित है क्योंकि ऐसा करने से जिन पर फ़ायर हो रहा है वे तो भाग ही निकलेंगे, किन्तु अन्य भी भय वश भाग खड़े होते हैं। अपरंच दूर से विद्ध हो कर, मृग या तो कहीं दूर जा कर कुछ समय बाद तड़प तड़प कर प्राण दे देगा, या कुछ दिनों तक पीड़ा युक्त जीवन व्यतीत करेगा।

जङ्गली जीव मर्मान्तिक चोट से भी वहीं नहीं गिरते जहाँ घायल हुए हों। कभी-कभी दक्ष शिकारी की चोट से घायल होकर भी हरिण भाग निकलता है। अतः प्रत्येक शिकारी के लिये यह आवश्यक है कि वह घायल मृग के अनुसरण करने की कला में निपुण हो, और भागे हुये मृग को शीघ्र ही ढूढ़ निकाले और उसे मार ले। घायल मृग अक्सर झुण्ड से अलग होकर कहीं आड़ में जा बैठता है। यदि घाव मामूली हुआ तो वह धीरे-धीरे झुण्ड के पीछे जाता है, पर ज्योंही उसे शिकारी या अन्य कोई शंका की वस्तु देख मिली कि वह तेज़ी से भाग खड़ा हुआ। यदि घाव गहरा हुआ, और शिकारी को घायल मृग ने नहीं देखा, तो वह थोड़ी ही दूर पर जाकर किसी आड़ में बैठ जायगा। शिकारी की अनुमान शक्ति से उसकी शक्ति कहीं अधिक रहती है। यदि बैठे हुए घायल मृग को पुनः भागना पड़ा तो वह मीलों निकल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

जाता है। अतः घायल मृग के पीछे सदा होशियारी से छिप कर हो जाना चाहिये।

घायल मृग को पैर और रक्त के निशान से ढूढ़ते हैं। फ़ायर के बाद यदि मृग घायल हुआ और भाग निकला तो उसे खून के चिन्ह से ढूँढ़ना चाहिये। कभी-कभी २० या २५ गज़ की दूरी तक रक्त का कोई चिन्ह नहीं देख मिलता। अक्सर राइफल के फ़ायर में यह बात देखी जाती है। पर यदि हिरन को गोली लग गई है तब उपरोक्त दूर के बाद रक्त का चिन्ह अवश्य देख मिलेगा। यदि खून हल्के रङ्ग का और फेन युक्त हो तो समझना चाहिये कि फेफड़े में गोली लगी है और घायल मृग १०० गज़ की दूरी तक जा कर अवश्य मर जायगा। जब खून में चर्बी या चारा भी देख पड़े, तब समझना चाहिये कि गोली पेट में लगी है और हिरन शीघ्र नहीं मरेगा। अन्य स्थानों की चोट का रक्त साधारण होता है। यह जन्तु भली भाँति जानता है कि रक्त चिह्न से शिकारी उसे ढूँढ निकालेगा अतः यदि मार्ग में उसे उथला जल मिला तो वह उसमें से होकर भागता है ताकि रक्त चिह्न से कहीं पता न चले कि वह किधर की ओर भागा है। कभी कभी जंगल में वह इधर उधर दौड़ता है और फिर तेजी से एक ओर को भागता है। कभी कभी पीछे की ओर लौटता है। अतः जब कभी रक्त तथा पैरों के निशान न देख मिले तब इधर उधर घूम कर भली भाँति दूर तक देख लेना चाहिये।

जब मृग धराशायी हो जाय और मरा सा जान पड़े, तब भी कभी कभी उसमें प्राण बाक़ी रह जाते हैं। ऐसी दशा में उसका

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शीघ्र ही अन्त कर देना चाहिये। या तो उसके गर्दन की घाँटी काट दी जाय या कलेजे में छुरी भोंक दी जाय। ये दोनों ही क्रिया अत्यन्त होशियारी से सम्पादित होनी चाहिये। हरिण के अगले पैर के खुर तेज़ चाकू का काम करते हैं और सींग भी खतरनाक होती है। शिकारी को इनसे उस समय अवश्य बचना चाहिये।

गाँव के निकट और फ़सल के खेतों में बहुत समझ बूझ कर होशियारी से फ़ायर करना चाहिये ताकि कोई खतरा न हो जाय। किसी मनुष्य की जान जोखिम में डालना नितान्त मूर्खता है। लापरवाही करने से ऐसा खतरा होने की पूर्ण सम्भावना रहती है। मादा और पट्ठे को कभी भी न मारना चाहिये।

साँभर

मृग की सब उप जातियों में साँभर सबसे बड़ा प्राणी है। यह हिमालय की तराई और मध्य भारतवर्ष के पहाड़ी जंगलों में पाया जाता है। रहता तो यह पहाड़ी जंगलों में ही है पर कभी कभी पहाड़ के इर्द गिर्द के घने जंगलों में भी आ जाता है। हम कह आये हैं कि साँभर की श्रवण शक्ति बड़ी अपूर्व होती है और वह धीमी आवाज़ को भी भली भाँति सुन लेता है। जब दोपहर को यह घने वृक्षों की साया में बैठता है उस समय स्टाकिङ्ग करके इसके समीप मार के अन्दर पहुँचना असम्भव होता है। किन्तु सुबह और शाम को जब यह चरने लगता है तब शिकारी इस पर मार के अन्दर पहुँच सकता है। इसके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्टाकिङ्ग का सबसे उत्तम समय प्रातः काल है, किन्तु सघन जंगलों में न तो स्टाकिङ्ग की आवश्यकता ही है और न वह होही सकती है।

साँभर तथा बारह आदि सिंगा हंकवाकर के शिकारी के समीप नहीं लाये जा सकते। ज्योंही हँकवा का शोर हुआ कि ये भाग निकले। घने जंगलों में रहने के कारण शिकारी इनके हिलते हुए कान और गर्दन ही देख पाता है। अतः विशेषकर इसकी गर्दन ही शिकारी का निशाना होती है।

नर के सींगें होती हैं और गर्दन पर अयाल होते हैं। मादा के सींग और अयाल नहीं होते। नर और मादा एक ही रंग के होते हैं। पर जोड़ा खाने के समय नर विशेष गहरे रंग का देख पड़ता है। ये जनवरी से मार्च तक जोड़ा खाते हैं। इस समय नर की प्रकृति युद्ध प्रिय हो जाती है। वह झुण्ड में अपना कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं सहन कर सकता। यदि कोई दूसरा नर आया तो खूब लड़ाई होती है और अक्सर हारने वाले को अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ता है। एक झुण्ड में एक ही नर रहता है और ६, ७ से लेके १२ तक मादा रहती है। इस समय जवान सांभर जो पुरानों की प्रतिद्वन्दिता नहीं कर सकते, अक्सर झुण्ड छोड़ कर अलग हो जाते हैं।

यह रात्रि के समय चारा और पानी के तलाश में मीलों चला जाता है। यह जंगलों से बाहर निकल कर फ़सल को नुकसान पहुँचाता है। इसकी आवाज़ बड़ी तेज़ होती है। प्रायः शिकारी इसकी बोली सुनकर जान जाते हैं कि सांभर निकट है। इसका

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मांस स्वादिष्ट नहीं होता पर जंगल के निकट रहने वाले मनुष्य इसके माँस को खाते हैं। अच्छे पुराने में चर्बी अधिक निकलती है। इसका मांस चिकना, भारी, शीतल, रस और पाक में मधुर कफकारक और रक्त पित्त नाशक होता है।

बारह सिंघा

इसको गोंद भी कहते हैं। अँगरेज़ी में इसे स्वाम्प डियर (Swamp Deer) कहते हैं। बारहसिंगे का नाम सार्थक है क्योंकि जब नर जवानी पर आता है तब उसके सींगमें बारह शाखें हो जाती हैं। किसी किसी के इसमें भी अधिक शाखें देखी गई हैं। मादा के सींग नहीं होते। नर और मादा दोनों गहरे बादामी रंग के होते हैं। नर का रंग विशेषतया गहरा होता है। इनके झुण्ड बड़े होते हैं। ये १० से लेकर ३० तथा ४० तक झुण्ड में रहते हैं। ये अधिकतर जाड़ों में जोड़ा खाते हैं। उस समय नर रात में बराबर बोला करता है। इनकी बोली गदहों के समान होती है। बारहसिंगा दिन में घने सायादार जंगलों में विश्राम करता है पर रात में और प्रातःकाल खुले मैदान में आ जाता है। इसका नर साँभर की भाँति लड़ाकू नहीं होता। यह जंगलों में ऐसी जगह पर रहता है जहाँ वर्षा में या तो पानी भरे या समीप में कोई नाला हो।

इसका शिकार प्रातः काल में अच्छा होता है। उस समय नर प्रायः बोलते हैं। इनकी बोली सुनकर और हवा को विपरीत करके शिकारी इनके समीप मार के अन्दर आसानी से पहुँच सकता है। परन्तु मादा को भलीभाँति देखे रहना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसका मांस खाने में स्वादिष्ट होता है। यह हल्का बलकारी और त्रिदोष नाशक होता है। इसकी सींग दवा के काम में आती है। वैद्य सींग का भस्म बनाते हैं।

चीतल

इसके बदन पर छोटे-छोटे श्वेत धब्बे होते हैं। इसी लिये इसे चीतल कहा जाता है। इसके नर को झाग कहते हैं। अंगरेज़ी में इसे स्पाटेड डियर (Spotted dear) कहते हैं। यह नदी ताल या नालों के किनारे के समतल घने जङ्गलों में अधिक पाया जाता है। बन के समीपवर्ती खेतों में आकर फ़सल चरता है। बड़े झुण्डों में रहता है। नर और मादा दोनों ही गहरे बादामी रङ्ग के होते हैं और शरीर पर उपरोक्त श्वेत धब्बे होते हैं। मादा से नर का रङ्ग गहरा होता है। मादा के सींग नहीं होते पर नर के साधारण रूप से सींग होते हैं। जनवरी से मार्च तक जोड़ा खाते हैं। उस समय नर बराबर बोला करता है। वह चार पांच बार आवाज देकर बोलता है। चीतल का नर सांभर की भांति लड़ाका नहीं होता। एक झुण्ड में कई नर बराबर देख पड़ते हैं।

चीतल के मारने का सबसे अच्छा समय प्रातः काल का है। उस समय यह बोलता है और शिकारी इसे सहज ही ढूढ़ सकते हैं। जब चीतल चरते रहते हैं उस समय इनके चलने और चरने से कुछ साधारण सी खड़ खड़ाहट होती है। अतः वे शिकारी के चलने की आवाज को नहीं सुन पाते। इसी वक्त शिकारी इन पर मार के अन्दर पहुँच सकता है किन्तु वायु के प्रतिकूल ही इनपर जाना चाहिये।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चीतल की खाल का सुन्दर मृग चर्म होता है। इसका मांस स्वादिष्ट, ग्राही, शीतल हल्का दीपन और रोचन होता है। यह श्वास ज्वर, त्रिदोष और रुधिर विकार को नष्ट करता है।

चौ सिंगा

यह छोटा जानवर है। इसे वेरकी भी कहते हैं। अँगरेज़ी में इसे फोर हार्नड एन्टीलोप (Fore horned antelope) कहते हैं। यह जोड़े में रहता है। इसके चार सींग होते हैं यह मैदान के जङ्गलों में पाया जाता है। इसका भी शिकार प्रातः काल में अच्छा होता है। इसका मांस गुणों में चीतल के समान होता है पर उतना स्वादिष्ट नहीं होता।

हरिण

इस जन्तु को मृग भी कहते हैं। इसके सींगों में बारहसिंगे की भाँति कावा नहीं होते। केवल दो ऐंठी हुई पतली, लम्बी, नुकीली सींगे होती हैं। पुराने नर की सींगे प्रायः डेढ़ फ़ीट लम्बी होती हैं। इनकी तीन उपजातियाँ हैं—ऐड़, हरिण, और कुरंग। हरिण का नर खैरे रंग का होता है। ऐड़ काले रंग का और कुछ छोटा होता है। और कुरंग ललाई लिये खैरे रंग का होता और तीनों में सबसे बड़ा होता है। इसकी मादा बादामी रंग की होती है। सींग नहीं होते। ये झुण्डों में रहते हैं। घने जंगलों में बहुत कम पाये जाते हैं। खुले मैदान या मैदान के पलाश और करौंदा के जंगलों में बहुत पाये जाते हैं। और खेती में फ़सल का बड़ा नुकसान करते हैं। ये बहुत तेज़ दौड़ते हैं। बड़े होशियार होते

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

हैं। इनके शिकार में शिकारी को पूर्णतया स्टाकिङ्ग का आनंद मिल सकता है। सांभर, बारहसिंगा और चीतल के शिकार में ऐसी स्टाकिंग नहीं हो पाती क्योंकि ये प्रायः जंगलों में रहते हैं। हम कह आये हैं कि ये बड़े होशियार होते हैं। ये शिकारी को समीप नहीं आने देते। यदि शिकारी बैल गाड़ी पर बैठकर जाय तो इनके बिलकुल समीप पहुँच जाता है पर इस प्रकार को मृगया शिकारी के स्वरूप के विरुद्ध है। अँगरेज़ी में इसे ब्लैक बक (Black Buck) कहते हैं।

इसकी खाल का मृगचर्म अच्छा होता है। मांस स्वादिष्ट होता है और गुणों में शीतल, हल्का, दीप, बलजारी, मल मूत्रावरोधक और पाक में मधुर होता है। नवयुवक हरिण का मांस शीतल और ज्वर, खाँसी, स्वांस, रुधिर विकार और क्षय को नष्ट करता है।

चिकारा

यह बहुत छोटा और सुन्दर मृग है। इसके नर तथा मादा दोनों ही के सींग छोटे होते हैं। मादा की सींगें पतली होती हैं और नर की सींगें नीचे की ओर मोटी और घुमावदार लम्बी होती हैं। ये छोटी झाड़ियों के जंगलों में जो नदी या नालों के किनारे हों, चार चार, या छः छः के झुंडों में पाये जाते हैं। यह बहुत तेज़ भागता है और विचित्र फुफकार देकर बोलता है। इसको अँगरेज़ी में रैविन डीयर (Ravine Deer) कहते हैं। ये सवेरे और शाम को फ़सल चरते हैं और तब इन पर फ़ायर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अच्छी होती है। इसके मांस का स्वाद और गुण हरिण के समान होता है।

नीलगाय

इसे रोज़ भी कहते हैं। इसके नर के छोटी छोटी पैनी सींगें होती हैं। मादा के सींग नहीं होते और न नर की भांति अयाल ही होते हैं। मादा का रंग हरिणी की भांति होता है। नर नीलापन लिये खैरा होता है। ये मैदान के जंगलों में और तराई आदि में बराबर पाये जाते हैं। इसकी बनावट बहुत कुछ गाय की भाँति होती है अतः हिन्दू इसका शिकार नहीं करते। मुसल्मान और अँगरेज़ शिकारी इसका शिकार मिलने पर कर लेते हैं। आयुर्वेद में इसका मांस मधुर, बलकारी, स्निग्ध, गरम और कफ पित्तकारी लिखा है। इसे अँगरेज़ी नीलगाय भी कहते हैं। कोई कोई अँगरेज़ इसे ब्लू बुल (Blue Bull) भी कहते हैं।

काकड़

इसको काकड़ा भी कहते हैं। यह छोटा चौपाया है यह खैरे रंग का होता है। जब पुराना होता है तो बाहर की ओर पैरों का रंग कुछ कुछ कालापन लिये होता है। इसके सींग छोटे होते हैं। यह पहाड़ी जंगलों में अधिक पाया जाता है। सवेरे और संध्या को जब यह नालों और घाटियों के किनारे चरने आता है तब मारने को मिलता है। इस पर शिकारी मार के भीतर सरलता से नहीं पहुँच पाता है। यह थोड़ा बहुत कुत्ते की भांति बोलता है इसी से इसको अँगरेज़ी में बार्किंग डियर (Barking Deer)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहते हैं। इसे अँगरेज़ी में इण्डियन माउन्टेन जैक (Indiain Mountain Jac) भी कहते हैं। यह थोड़ी थोड़ी देर में बोला करता है जिससे शिकारी को इसकी खोज में बड़ी सहायता मिलती है।

काकड़ का मांस बड़ा स्वादिष्ट होता है। इसमें चर्बी बहुत होती है। इसकी कलेजी बड़ी स्वादिष्ट बनती है। इसका मांस हल्का, रोचक, स्निग्ध, स्वादु बलकारक, और वीर्यवर्धक होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अच्छी होती है। इसके मांस का स्वाद और गुण हरिण के समान होता है।

नीलगाय

इसे रोज़ भी कहते हैं। इसके नर के छोटी छोटी पैनी सींगें होती हैं। मादा के सींग नहीं होते और न नर की भांति अयाल ही होते हैं। मादा का रंग हरिणी की भांति होता है। नर नीलापन लिये खैरा होता है। ये मैदान के जंगलों में और तराई आदि में बराबर पाये जाते हैं। इसकी बनावट बहुत कुछ गाय की भाँति होती है अतः हिन्दू इसका शिकार नहीं करते। मुसल्मान और अँगरेज़ शिकारी इसका शिकार मिलने पर कर लेते हैं। आयुर्वेद में इसका मांस मधुर, बलकारी, स्निग्ध, गरम और कफ पित्तकारी लिखा है। इसे अँगरेज़ी नीलगाय भी कहते हैं। कोई कोई अँगरेज़ इसे ब्लू बुल (Blue Bull) भी कहते हैं।

काकड़

इसको काकड़ा भी कहते हैं। यह छोटा चौपाया है यह खैरे रंग का होता है। जब पुराना होता है तो बाहर की ओर पैरों का रंग कुछ कुछ कालापन लिये होता है। इसके सींग छोटे होते हैं। यह पहाड़ी जंगलों में अधिक पाया जाता है। सवेरे और संध्या को जब यह नालों और घाटियों के किनारे चरने आता है तब मारने को मिलता है। इस पर शिकारी मार के भीतर सरलता से नहीं पहुँच पाता है। यह थोड़ा बहुत कुत्ते की भांति बोलता है इसी से इसको अँगरेज़ी में बार्किंग डियर (Barking Deer)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कहते हैं। इसे अँगरेज़ी में इण्डियन माउन्टेन जैक (Indiain Mountain Jac) भी कहते हैं। यह थोड़ी थोड़ी देर में बोला करता है जिससे शिकारी को इसकी खोज में बड़ी सहायता मिलती है।

काकड़ का मांस बड़ा स्वादिष्ट होता है। इसमें चर्बी बहुत होती है। इसकी कलेजी बड़ी स्वादिष्ट बनती है। इसका मांस हल्का, रोचक, स्निग्ध, स्वादु बलकारक, और वीर्यवर्धक होता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जोट

देशी नाम	अँगरेज़ी नाम	
ईंत	बरमीज़ फेज़ेंट	Burmese Pheasant
ऐंड़	ब्लैक बक	Black Buck
उखार	पिन्टेला	Pintail
ककेर	स्वाम्प पार्ट्रिज़	Swamp Partridge
कबूतर	पिजन	Pigeon
कर्चिया	ह्वाइट आइड डक	White Eyed Duck
करवानक	स्टोन कल्यू	Stone Curlue
कल्छुलिहा	स्पून बिल	Spoon Bill
काकड या काकड़ा	बार्किं डियर	Burking Deer
काला तीतर	ब्लैक पार्टिज	Black Partridge
काला तीतर (दखिनी)	,, ,,	,, ,,
कालिज	कालिज फेजेन्ट	Kalij Pheasant
कियाह	स्वाम्प पार्टिज	Swamp Partridge
कुरंग	ब्लैक वक	Black Buck
केर्रा	कामन टील	Common Teal

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देशी नाम	अँगरेज़ी नाम	
कैड़	रेड क्रेस्टेड पोचर्ड	Red Crested Pochard
कोकला	कोकला फ़ेज़ेंट	Kokla Pheasant
खरगोश या खरहा	हेयर	Hare
गरमपाई	स्पाटेड बिल्ड डक	Spotted Billed duck
गिर्री या गिरिया	काटन टील	Cotton Teal
गोंद	स्वाम्प डियर	Swamp Deer
चकवा या चकहा	ब्रह्मनी डक	Brahmani Duck
चकोर	चकोर	Chukor
चरज	बंगाल फ्लारिकन	Bengal florican
चाहा	स्नाइप	Snipe
चिकारा	रैभिन् डियर	Ravine Deer
चित्तल या चीतल	स्पाटेड डियर	Spotted Deer
चीना	स्पाटेड डभ	Spotted Dove
चीर	चीर फेजेन्ट	Chir Pheasant
चुरवा	ह्वाइट आइड पोचर्ड	White Eyed Pochard
चैती या चैतवा	गार्गैनी टील	Gargany Teal

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देशी नाम		अँगरेज़ी नाम
चौसिंगा	फोर हार्न्ड एन्टीलप	Four Horned Antelop
छपका	स्टोन कर्ल्यू	Stone Curlue
छोटा चरज	लेसर फ्लारिकन	Lessor Florican
छोटा चाहा	जैक स्नाइप	Jack Snipe
छोटा फ़ाख्ता	लिटिल ब्राउन डभ	Little Brown Dove
छोटा लालसर	विजन	Widgeon
छोटी जंगली मुर्गी	स्पर फ़ाउल	Spur Fowl
जंगली मुर्गा	जंगल फ़ाउल	Jungle Fowl
तमगदार	ग्रेट इण्डियन बस्टर्ड	Great Indian Bustard
तिदारी	शाभलर	Shoveller
तिलूर	हौब्रा	Haubra
तीतर	ग्रे प्रार्टिज	Grey Partridge
तुन मोर	लेसर फ्लारिकन	Lessor Florican
थोथरा	शाभलर	Shoveller
डुबारू	टफटेड डक	Tufted Duck
धवल या धंवर	रिंग डभ	Ring Dove
नकटा या नकला	काम्ब डक	Comb Duck

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देशी नाम		अँगरेज़ी नाम
नील गाय	ब्लू बुल	Blue Bull
नीलसर	मलार्ड	Mallard
पतारी	कामन टील	Common Teal
परैली	रेड शैंक	Red Shank
पलाश	कोकला फेजेन्ट	Kokla Pheasant
पहाड़ी भट तीतर	लार्ज सैंड ग्रूज	Large Sand Grouse
पिंडुकिया या पेंडुकी	लिटिल ब्राउन डभ	Little Brown Dove
पेंड़ुका	रिंग डभ	Ring Dove
पिडरा	हिल पार्टिज	Hill Partridge
पुछ्रागा	पिनटेल	Pintail
बटैर	क्वेल	Quail
वन मुर्गी	जंगल फ़ाउल	Jungle Fowl
बारासिंगा	स्वाम्प डियर	Swamp Deer
बुडार	पोचर्ड	Pochard
भटतीतर	सैन्ड ग्रूज	Sand Grouse
मिला	गेडवाल	Gadwall
मोनाल	मोनाल फेजेन्ट	Monal Pheasant
मोर	पी फ़ाउल	Pea Fowl
राजहंस	स्वान	Swan

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देशी नाम		अँगरेज़ी नाम
रोज	ब्लू बुल	Blue Bull
लीख	लेसर फ्लारिकन	Lesson Florican
लेदी, लेदुका	गार्गैनीं टील	Gargany Teal (या कोई छोटी बतख़)
सवन या सवना	गूज़	Goose
साभर	सांभर	Sambhar
सरौती पेडुकी, ,, फ़ाख़्ता	रेड टर्टेल्ड डभ	Red Turtled Dove
सिफुरी	टफटेड पोचर्ड	Tufted Pochard
सिल्ली, सिलही, सेल्हरी	ह्विसलिंग टील	Whisling Teal
सिम तीतर	उड काक	Wood Cock
सींक पर	पिन्टेल	Pintail
सुरख़ाब	ब्रेहमनी	Brahmani Duck
सेह	पर्कू पाइन	Percupine
सोनरा	स्पाटेड बिल्ड डक	Spotted Billed Duck
हंस	गूज़	Goose
हरियल	ग्रीन पीजन	Green Pigeon
हिरन	ब्लैक बक	Black Buck
होबार	हौबरा	Haubra

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नं० पृष्ठ	नं० पंक्ति	अशुद्ध है	शुद्ध है
२	१४	रखत	रखते
३	१६	स	से
१५	३	नहीं	नली
२१	१५	दूसरी	दूसरे
३३	१४	खाता	खाती
३६	१८	शब्द स्थान से पहिले 'प्रत्येक' छूट गया है	
३८	१६	शिकारी	शिकार
४०	६	जतना	जितना
४२	२०	परेड़	पर्दे
४४	३	है	हो
५०	१०	और	ऐंड
५४	१	बन्दूक के पहले 'बोर' शब्द छूट गया है	
६५	२०	लगता	लगा
६७	२३	पड़ती	पड़ता
६६	५	अँगरेजों	अँगरेजों
७१	१४	सम्मानता	सम्भावना
७६	६	मोटा	मोटी
,,	,,	चौड़ा	चौड़ी
७७	६	प्रान्तों	प्रान्त
७६	३	गुज	गूज़
८५	२२	एक	दो
८६	५	गुलाब	गुलाबी
८७	८	चुगते के बाद 'है' छूट गया है	

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नं० पृष्ठ	नं० पंक्ति	अशुद्ध है	शुद्ध है
८८	६	पन्डुबो के बाद 'को' छूट गया है	
९७	१	पुछारायां	पुछारा या
,,	७	हल्का	हलक
१०२	३	उस	उन
,,	१४	करीं	करें
१०३	१०	टीला	टील
१०७	११	सेल्हेर	सेल्हर
१०७	१६	नारंगी के बाद 'रंग' शब्द छूट गया है	
१११	३	Wadrs	Waders
११३	१४	सहित	रहित
११४	१	चाहे	चाहा
११६	८	घातक परिधि के	मार के
१२०	३	निशाना के बाद 'न' छूट गया है	
१२४	१८	खाने के पहले 'मांस' शब्द छूट गया है	
,,	,,	कल्धुलिहा	कल्छुलिहा
,,	२२	कल्धुल	कल्छुल
,,	,,	बना	बनी
१२५	१	रहता	रहती
,,	,,	कल्धुलिहा	कल्छुलिहा
,,	१२	समय के बाद	'भी' छूट गया है
१२६	१३	पोटो	पोटों
,,	१३	छपका के पहले 'विराम' छूट गया है	
१२८	१३	यहीं	वहीं
१३१	१४	वेस्टर्ड	वंस्टर्ड
१३८	३	नाली	काली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नं० पृष्ठ	नं० पंक्ति	अशुद्ध है	शुद्ध है
१३८	६	वे	ये
१४०	१६	लम्बा होता	लम्बी होती
१४२	७	मनोरंजन	मनोरंजक
१४७	६	विशद	विशेष
१४८	१	धरातल, पर	धरातल पर
,,	२०	मलया	मलाया
१४६	३	गुणों के पहले	'वह' छूट गया है
१५०	११	हलक़ा	हलक़
१५२	५	में	को
१५६	१६	सिर की	सिर के
१५७	७	कल्हक	काल्हक
१५८	१८	तवे	तंवेरे
१६१	५	और बैठे	तो बैठे
,,	२२	मिल सके के बाद	विराम है
१६२	१०	चूनते	चुनते
१६३	१४	लाथक	लायक
१७१	६	तब	इस
,,	१०	का	की
,,	१३	ही के बाद	'से' छूट गया है
१७८	१६	पट्ट	'पट्ट'
१८०	७	या गलत छपा है	
,,	२०	शिकारी	शिकार
१८३	८	दूर	दूरी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh